卐 ॐ गं गणपतये नमः 卐

!! श्रीराम !!

श्रीराम जय राम जय जय राम

जोग लगन ग्रह बार तिथि सकल भए अनुकूल।
चर अरु अचर हर्षजुत राम जनम सुख मूल॥

सम्पादक मण्डल

पं० दिनेश चन्द्र शर्मा

डॉ० भगवान दास पटैरया

श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'

स्मारिका

विक्रमी संवत् 2078 सन् 2021-2022

वार्षिक अंक - 28

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

पंजीकृत कार्यालय : 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली - 110061

स्थानीय कार्यालय : ए-447, सैक्टर - 47, नोएडा - 201 303

वेबसाइट - www.shriramcharit.com ई-मेल - contactus@shriramcharit.com

दूरभाष - 0120-4305457

चल - 9811056467

मुद्रक : एक्सेलप्रिंट

सी-36, फ्लैटेड फैक्ट्री कॉम्प्लेक्स, झण्डेवालान, नई दिल्ली-110055

फोन: 9810063199, 9958272020

ईमेल: excelprinters@gmail.com

पाठकों से निवेदन

स्मारिका का यह वार्षिक अंक–28 आपके हाथ में है। हमारा प्रयास रहा है कि इसमें भगवान श्रीरामजी के आदर्शों को प्रतिपादित करते हुए ऐसे लेख प्रकाशित किए जाएँ, जिनसे समाज में नैतिक मूल्यों का उत्थान हो। इस दिशा में हम कहाँ तक सफल हुए, यह आप ही बता सकते हैं। आशा करते हैं कि आप पत्रिका पढ़कर हमें अपना लेख / अपनी प्रतिक्रिया अवश्य भेजेंगे, ताकि हम अगले अंक में उसे समाहित कर सकें। लेख के संदर्भ में निम्नांकित बिन्दु उल्लेखनीय हैं –

1. **लेख श्रीरामचरितमानस में वर्णित प्रसंगों पर तथा उसका शीर्षक यथासंभव चौपाई, दोहा आदि पर आधारित हो।**
2. लेख में उद्धरित दोहा–चौपाई आदि गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'श्रीरामचरितमानस' के अनुसार हों। कृपया संदर्भ निम्नांकित प्रकार से अंकित करें।
   जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।। (5/1/1)
   5/1/1 का आशय है, पाँचवें काण्ड (सुंदरकाण्ड) के पहले दोहे की पहली चौपाई। सातों काण्डों को क्रमशः इस प्रकार से इंगित करें :– 1. बालकाण्ड, 2. अयोध्याकाण्ड, 3. अरण्यकाण्ड, 4. किष्किंधाकाण्ड, 5. सुंदरकाण्ड, 6. लंकाकाण्ड एवं 7. उत्तरकाण्ड।
3. लेख bpateria@gmail.com पर अथवा 9899004263 पर whatsapp या A 447 सैक्टर–47, नोएडा–201303 पर डाक से भी भेज सकते हैं।

स्मारिका के प्रकाशन में विज्ञापन से प्राप्त धन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। अनुरोध है कि आप भी अपने संस्थान का विज्ञापन भेजकर पुण्य लाभ प्राप्त करें।

विज्ञापन दरें इस प्रकार से हैं –

क्रमांक	विवरण	राशि (रुपयों में)
1.	प्रथम पृष्ठ के पीछे (दूसरा कवर पेज)	35,000
2.	अंतिम पृष्ठ (चौथा कवर पेज)	30,000
3.	अंतिम पृष्ठ के पीछे (तीसरा कवर पेज)	25,000
4.	पत्रिका के अन्दर पूर्ण पृष्ठ	15,000
5.	पत्रिका के अन्दर आधा पृष्ठ	10,000

पाठकों से प्राप्त सहयोग राशि का योगदान भी इसके प्रकाशन में सराहनीय है। इसे भेजने हेतु विवरण निम्नांकित है। ''श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति'' के नाम 'भारतीय स्टेट बैंक, सैक्टर 31, नोएडा की शाखा में चालू खाता सं0 35299035590, ब्रांच कोड : 15971, IFS Code : SBIN0015971 विज्ञापन–प्रकाशन राशि भी इसी खाते में जमा करा सकते हैं।

कृपया सहयोग राशि अथवा विज्ञापन-प्रकाशन राशि भेज कर हमें उपर्युक्त ई मेल या 09899004263 पर फोन या Whatsapp करके सूचित करने का अनुग्रह करें, ताकि तदनुसार प्राप्ति रसीद जारी की जा सके।

अध्यक्ष की ओर से

प्रिय श्रीरामचरितमानस प्रेमियो!

आजकल हमारे देश में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। समाज में पाश्चात्य संस्कृति का तेजी से प्रभाव बढ़ रहा है। हम अपनी शिक्षा, व्यवहार, समाज के प्रति कर्तव्य, धर्म तथा सेवा भावना से विमुख होकर मानव–जाति का अहित कर रहे हैं। आज प्रेम और भाईचारे का स्थान हिंसा एवं वैमनस्य ने ले लिया है, जिसका प्रमुख कारण यह है कि अत्यधिक सांसारिक वैभवों को प्राप्त करने की होड़ लगी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में भी आपसी सद्भाव बढ़े, जन–जन में ईश्वरीय आस्था तथा भावी पीढ़ी में सुसंस्कार जाग्रत हों, इसी उद्देश्य से 'श्रीरामचरितमानस सत्संग समिति, नोएडा' की सन् 1990 में स्थापना हुई, जिसका अगस्त 2015 को श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति में विलय हो गया है।

हमारा उद्देश्य श्रीरामचरितमानस पाठ एवं प्रवचनों के माध्यम से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीरामचन्द्रजी के पावन चरित्रों का प्रचार–प्रसार कर समाज एवं धर्म की सेवा करना है। इसके द्वारा हम सभी का कल्याण होगा। यह समिति अपने स्थापना काल से मार्च 2021 तक 501 मानस पाठ एवं प्रवचनों के कार्यक्रम आयोजित करा चुकी है। इसी कड़ी में अब तक अनेक विख्यात कथाकारों जैसे– संत प्रवर श्री विजय कौशलजी महाराज, रामभक्त पं0 मधुकरजी, श्री लक्ष्मीनारायण शर्माजी, डॉ0 पं0 रामगोपाल तिवारी, पं0 बलराम मिश्रजी, आचार्य पं0 बैजनाथ शुक्ला, श्री श्री 1008 श्री प्रेमाचार्यजी, श्री बैजूनाथजी महाराज, आचार्य श्यामसुंदर शरणजी, गोस्वामी रमाकांत चतुर्वेदीजी, मानस माधुरी श्रीमती अखिलेश्वरी देवी, आचार्य अखिलेश्वरानन्द (अंगदजी) महाराज, स्वामी श्री राजेश्वरानन्द सरस्वतीजी, पं0 सुरेन्द्र शास्त्री 'मानस कुसुम' आदि के प्रवचनों का आयोजन किया जा चुका है। ऐसे ही कार्यक्रम भविष्य में भी होते रहें, ऐसी परम पिता परमात्मा से प्रार्थना है।

विगत 29 वर्षों की भाँति गुरुवार दिनाँक 2 अप्रैल 2020 को श्रीराम जन्ममहोत्सव का आयोजन महाराजा अग्रसेन भवन, सैक्टर–33, नोएडा में किया जाना प्रस्तावित था, किंतु वैश्विक महामारी कोरोना के चलते लॉक डाउन के कारण यह संभव नहीं हो सका। यह स्मारिका भी समय पर प्रकाशित नहीं हो सकी; तथापि लॉक डाउन समाप्त होते ही स्मारिका प्रकाशित करके सभी पाठकों को प्रेषित कर दी गई थी, जिनकी प्रतिक्रियाएँ पृष्ठ 9 से 11 तक मुद्रित हैं। कोरोना महामारी से सम्पूर्ण विश्व में जो लोग चिर निद्रा में लीन हो गए उनकी आत्मा की शान्ति के लिए हम परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं। हम इस समिति की ओर से ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि जिन्होंने इस महामारी में अपनों को खोया है उन्हें धैर्य प्रदान करने की कृपा करें। प्रभु कृपा से अब सामाजिक–धार्मिक कार्यक्रमों के आयोजनों को सरकार द्वारा सशर्त छूट दे दी गई है, अतः 30वाँ श्रीराम जन्म महोत्सव चैत्र शुक्ल नवमी संवत् 2078 तदनुसार बुधवार 21 अप्रैल 2021 को प्रातः 10 बजे से महाराजा अग्रसेन भवन सैक्टर 33, नोएडा में आयोजित किया जाना प्रस्तावित है। इस पावन वेला में कथा व्यास पं. देवेन्द्र दुबे, 'मानस कोविद' श्रीराम कथा श्रवण कराएँगे। श्रद्धालुओं से निवेदन है कि कोरोना से बचाव हेतु सरकार द्वारा निर्धारित नियमों का पालन करते हुए समारोह में सहभागिता से धर्म–लाभ प्राप्त करें।

इस स्मारिका के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग के लिए हम विज्ञापन दाताओं M/S Sushma Enterprises, M/S AVG Logistics Ltd. तथा M/S Max Maintenance का आभार व्यक्त करते हैं।

समिति द्वारा आयोजित मानस पाठ एवं प्रवचन

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत) द्वारा समय–समय पर श्रीरामचरितमानस अखण्ड पाठ/सुन्दरकाण्ड पाठ एवं प्रवचन (सत्संग) का आयोजन किया जाता रहा है। इस क्रम में मार्च 2021 तक 501 मानस पाठ एवं प्रवचन आयोजित किये गये। इसका विवरण समिति की विगत वर्षों की स्मारिका में प्रकाशित किया गया है। पिछले एक वर्ष में 22 पाठ आयोजित हुए, जिनका विवरण निम्नांकित है –

Ø-l-	frfFk	uke o irk ftuds fuokl ij dk;Øe vk;kftr g,
1.	30.09.2020	पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा, ए–447, सै0–47, नोएडा–201303
2.	01.10.2020	श्री राजेन्द्र प्रसाद शर्मा, भंगेल, नोएडा
3.	05.10.2020	डॉ0 भगवान दास पटैरया, डी–11, सै0–36, नोएडा
4.	06.10.2020	श्री सुभाषचन्द्र मित्तल, 865, जोशी रोड, करोल बाग, दिल्ली
5.	20.10.2020	श्रीमती नीलम श्रीवास्तव एम–126, सै0–25, नोएडा
6.	22.10.2020	श्री हुकमचन्द्र शर्मा, ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा
7.	18.01.2021	श्री जे0के0 गुप्ता, ए–87, सै0–49, नोएडा
8.	26.01.2021	श्री कृष्ण कुमार मिश्रा, 12/250, कोटेश्वर नगर, रायपुर (छत्तीसगढ़)
9.	02.02.2021	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी, एच 129, सै0–41, नोएडा
10.	02.02.2021	श्रीमती भारती चतुर्वेदी बी–2/721, कैलाश धाम, सै0–50, नोएडा
11.	06.02.2021	डॉ0 रविन्द्र कुमार शर्मा, 593, ग्राम बिजवासन, नई दिल्ली–110061
12.	09.02.2021	श्री सूरजभान शर्मा, ए–141, सै0–20, नोएडा
13.	11.02.2021	श्री प्रदीप कुमार शर्मा ए–447, सैक्टर–47, नोएडा
14.	13.02.2021	श्री मांगेराम भारद्वाज, ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा
15.	17.02.2021	श्री सतीश चन्द्र शर्मा बी 170 ठ सै0–26,नोएडा
16.	19.02.2021	श्री मामचंद, ए–406, सै0–47, नोएडा
17.	20.02.2021	श्री लीलूराम वर्मा, सी–49, सै0–23, नोएडा
18.	22.02.2021	डॉ0 अंकित अवाना, ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा
19.	23.02.2021	श्री ए.के सक्सेना, एच–329, बीटाIIख ग्रेटर नोएडा
20.	16.03.2021	श्री राधेश्याम शर्मा, ए–55, सैक्टर – 27, नोएडा
21.	20.03.2021	डॉ. लक्ष्मी नारायण, 60, वार्ड नं.11 नौगाँव (मध्य प्रदेश)
22.	23.03.2021	श्री भिक्की लाल शर्मा, ए–105, सै0–20, नोएडा

इस अंक में

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
01.	अध्यक्ष की ओर से		003
02.	समिति के सदस्यों की सूची		007
03.	पाठकों के विचार		009
04.	रामकथा कलि पंनग भरनी	आचार्य डॉ0 रामेश्वर प्रसाद गुप्त	013
05.	स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा	डॉ. शंकर शरण तिवारी	019
06.	जनक सुता जग जननि जानकी	श्री राम जन्म सिंह	027
07.	भक्ति बिना रे! ज्ञान न शोभा	श्री जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल'	031
08.	युद्ध या शान्तिः श्रीरामचरितमानस एवं गीता के संदेश	डॉ0 सहृदय नारायण उपाध्याय	039
09.	सीता – निर्वासन	पं0 दिनेश चन्द्र शर्मा	047
10.	अवगुन आठ सदा उर रहहीं	डॉ0 भगवान दास पटैरया	055
11.	नवधा भक्ति में नवम् भक्ति	पं0 श्री कैलाश त्रिपाठी	060
12.	राम और काम	डॉ0 पं0 राम गोपाल तिवारी	063
13.	जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना	श्री योगेश कुमार श्रीवास्तव	070
14.	बसें हृदय–मंदिर श्रीराम	सरल शास्त्री	075
15.	फिरहिं राम सीता मैं हारी	श्री अवध किशोर दूबे	077
16.	मानस में धर्माचरण	श्री सचिन शर्मा	081
17.	सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना	पं0 राम नरेश तिवारी 'पिण्डीवासा'	089
18.	श्रीरामचरितमानसः भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार	श्री देवेन्द्र शर्मा	093
19.	श्रीरामकथा में वन्य प्राणियों की भूमिका	पं0 राधाकृष्ण पाठक 'अतीत'	103

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ
20.	दीनबन्धु दीनानाथ भगवान श्रीराम	श्री गोपाल कृष्ण फरलिया एवं श्रीमती दुर्गेश नन्दिनी फरलिया	107
21.	जगत प्रकास्य प्रकासक रामू	पं0 राजेश तिवारी 'मक्खन'	113
22.	श्रीराम के पावन चरण कमलों की महिमा	गौ सेवक श्री गोपाल कृष्ण पण्ड्या	117
23.	अवध में मंदिर बने विशाल	पं. राजेश तिवारी 'मक्खन'	121
24.	परमात्मा की प्राप्ति (अनुभूति) से ही सर्व शोक शमन संभव	डॉ0 रविन्द्र कुमार शर्मा	123
25.	श्रीरामचरितमानस में श्रीमद्भगवद्गीता की झलकियाँ	डॉ0 बी0एस0 बंसल एवं श्री सुभाष मित्तल	126
26.	रामचरित चिंतामनि चारू	श्रीमती रीता कश्यप	134
27.	कहि बल बिरहु बेगि तुम्ह आएहु	श्रीमती कुसुम पटैरया	138
28.	श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति का वर्ष 2019–20 का आय–व्यय विवरण		144
29.	श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र		145
30.	श्रीरामशलाका प्रश्नावली		151
31.	विक्रमी संवत् 2078 के व्रत, पर्व, त्योहारों की सूची		155
32.	आरती एवं वन्दना		169
33.	श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री		176

काम करो ऐसा कि पहचान बन जाए,
हर कदम चलो ऐसा कि निशान बन जाए।
जिंदगी तो हर कोई काट लेता है भाई,
जिंदगी ऐसी जिओ कि मिशाल बन जाए।

विशेष : स्मारिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं।

सदस्यों की सूची

क्र.सं.	नाम सदस्य	पता	दूरभाष	पद
1-	i0 fnu'k pUn 'kek	,&447] l0&47] uk,Mk&201303	9811056467	v/;{k
2-	Jh txnh'k i lkn 'kek ^lljy*	216] th0 th0 gkLVy okyh xyh gkf'k;kjiqj] l0&51] uk,Mk	9311384212	mik/;{k
3-	i0 Mk0 y{eh ukjk;.k	60] ekr'ojh okM u0 11] ukxkSo] ¼Nrjiqj½ e0i0	9893772149	mik/;{k
4-	Mk0 Hkxoku nkl iVj;k	Mh&11] l0&36] uk,Mk	9899004263	egklfpo
5-	Mk0 jfoUn dqekj 'kek	593] xke fctokIu] ubZ fnYyh&110061	9911307799	lfpo
6-	Jh yhyjke oek	lh&49] l0&23] uk,Mk	9312280743	l;Dr lfpo
7-	Jh t0d0 xlrk	,&87] l0&49] uk,Mk	9810997834	dk"kè;{k
8-	Jh fHkDdh yky 'kek	,&105] l0&20] uk,Mk	9810836348	dk;dkjh lnL;
9-	Jh gdepUn 'kek	xyh u0&3c@7] cM pkd] xke fuBkjh] l0&31] uk,Mk	9213999744	ß
10-	Jh lHkk"kpUn feÙky	865] tk'kh jkM] djky ckx] fnYyh	9210364442	^^
11-	Jherh uhye JhokLro	,e&126] l0&25] uk,Mk	8800439949	ß
12-	Jh lh0,l0 Hkkxy	lh&2@103] l0&36] uk,Mk	9811026745	ß
13-	Jh d".k dqekj feJk	12@250] dkV'oj uxj] ik0 jfo'kdj ;fuofIVh] (R.S.U.) ftyk&jk;iqj&492010	9406379229	ß
14-	Jh ekxjke Hkkj}kt	xke fuBkjh] l0&31] uk,Mk	9999232019	ß
15-	Jh egkohj i lkn R;kxh	Mh&61] l0&49] uk,Mk	9810403264	ß
16-	Mk0 vfdr vokuk	xke fuBkjh] l0&31] uk,Mk	9871775563	ß
17-	Jh vt; dqekj 'kek	,&447] l0&47] uk,Mk	9911220088	ß
18.	डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद चतुर्वेदी	1इ, लक्ष्मी रोड, डालनवाला, देहरादून	09411714660	आजीवन सदस्य
19.	श्री देवेन्द्र सिंह अवाना	B 5/6, सामने C-4/106, सै0–31, नोएडा	9811602397	″
20.	श्री सूरजभान शर्मा	ए–141, सै0–20, नोएडा	8527132634	″
21.	श्री विनोद शर्मा	ए–19, सै0–22, नोएडा	9891117721	″
22.	श्री अश्विनी कुमार भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	″
23.	डॉ0 मनोज कुमार पटैरया	25/3, सै0–1, पुष्प विहार, नई दिल्ली	9868114548	″
24.	श्री देवेन्द्र कुमार रावत,	266, वार्ड नं0 7, स्नेहल नगर, वर्धा (महाराष्ट्र)	9423645351	″
25.	श्री भगवानदास पाठक	मकान नं॰–87, कालीदास नगर, हनुमान रोड़, सूरत – 395006	6352673969	″
26.	श्री रविशंकर चतुर्वेदी	904, D-13, AWHO Sandeep Vihar, Seegehalli Kadugodi, बंगलौर–560067	9945169080	″

27.	श्री राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता	सी–154, सै0–100, नोएडा	9810464009	आजीवन सदस्य
28.	श्री राधेश्याम शर्मा	ए–55, सै0–27, नोएडा	9999930102	"
29.	श्री रामेश्वर दत्त शर्मा	ग्राम निठारी, सै0–31, नोएडा	9953508132	"
30.	श्री रणजीत सिंह विष्ट	एफ–110, सै–20, नोएडा	9650324529	"
31.	श्री भीम सिंह	मोती मैमोरियल, दुर्गा पार्क, पो0–वसुन्धरा ग्राम–दल्लूपुरा, दिल्ली–110096	9810181724	"
32.	श्रीमती कुसुम पटैरया	डी–11, सै0–36, नोएडा	9811201847	"
33.	श्री ए.के. सक्सेना	एच–329, बीटा– I, ग्रेटर नोएडा	9540274589	"
34.	श्री देवीचरन शर्मा	बी–109, सै0–22, नोएडा	9350859122	"
35.	वैद्य अच्युत कुमार त्रिपाठी	एच 129, सै0–41, नोएडा	9868943638	"
36.	श्री वेद प्रकाश बंसल	ए 33, सै0–19, नोएडा	9350732724	"
37.	श्री रघुनाथ प्रसाद शर्मा	जी–63, सै0–27, नोएडा	9899797090	"
38.	श्री सतीश चन्द्र शर्मा	बी 170 ठ सै0–26,नोएडा	8800969798	
39.	श्री सुरेन्द्र कुमार ठक्कर	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891445905	"
40.	श्री लाल मोहन चौधरी	ए–390, सै0–47, नोएडा	9868851639	"
41.	श्री अमर सिंह सेंगर	ए–162, सै0–20, नोएडा	9971885030	"
42.	श्री भूनिधि शर्मा	डी–185, सै0–49, नोएडा	9871199809	"
43.	श्री श्रीपाल अवाना	ए–286, सै0–47, नोएडा	9210638386	"
44.	श्री यशपाल सिंह	बी–19, सै0–49, नोएडा	9810339398	"
45.	श्रीमती मधुमालती	बी–69, सै0–52, नोएडा	9891707373	"
46.	श्री विद्याराम अवाना	एच–7, सै0–27, नोएडा	9891960087	"
47.	श्रीमती भारती चतुर्वेदी	बी–2 / 721, कैलाश धाम, ब्लाक नं0–14, सै0–50, नोएडा	9650990257	"
48.	श्री शिवकुमार शर्मा	ए–100, सै0–33, नोएडा	9871636341	"
49.	आचार्य योगेन्द्र पाण्डे	श्रीराम मन्दिर, सै0–36, नोएडा	9810479542	"
50.	श्रीमती अर्चना शर्मा	M-1806, PAN Oasis, Sector-70 नोएडा	9968422229	"
51.	श्री परमात्मा शरण बंसल	ए–83, सै0–49, नोएडा	9810169329	"
52.	श्रीमती सीमा चौबे	एफ–13, सै0–20, नोएडा	9811323076	"
53.	श्री विपन कुमार	सी–3 / 149, सै0–36, नोएडा	9868139393	"
54.	श्री नरेश चौहान	एफ–18, सै0–39, नोएडा	9555955599	"
55.	श्री वी0जे0 चौधरी	बाली भगत रोड, बक्सी बाजार, कटक (उड़ीसा) 753001	9090438678	"
56.	श्री नरेन्द्र कुमार चाचान	65–ए, लखीमी पाथ, गुवाहाटी–781028	9435553023	"
57.	श्री मामचंद	ए–406, सै0–47, नोएडा	8368890732	"
58.	श्री जगदीश प्रसाद गुप्ता	बी–16, सै0–49, नोएडा	9911609460	"
59.	श्री प्रेम सिंह नागर	बी–0002, अजनारा (ग्रैंड हैरीटेज) सै0–74, नोएडा	9266666052	"
60.	श्रीमती बबीता भरद्वाज	बी–365, सै0–92, नोएडा–201305	9999533891	"
61.	श्री वेदप्रकाश शर्मा	ए–36, सै0–47, नोएडा	9821213055	"
62.	श्री देवेन्द्र सिंह तोमर	ए–67, सै0–48, नोएडा	9891944556	"
63.	श्री रणवीर सिंह	ग्राम–हजरतपुर वाजिदपुर, सै0–63, नोएडा	9810634772	"

पाठकों के विचार

स्मारिका हिन्दू संस्कृति की वाहक

स्मारिका प्राप्त करके मैं श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति को हृदय से आभार एवं बहुत–बहुत धन्यवाद ज्ञापित करना चाहता हूँ। स्मारिका मुझे बहुत पसंद आई। बेहद सच्चाई, मौलिक चिंतन, विचारशील व नवाचार की दृष्टि से स्मारिका को संगृहीत किया गया। स्मारिका में जीवन की उन तमाम चीजों का संकलन है जिनसे हम हिन्दू संस्कृति में जीते हैं। पुनश्च आपके द्वारा भेजी गई स्मारिका के लिए बहुत–बहुत साधुवाद, धन्यवाद।

रविदास मानिकपुरी, कांकेर (छत्तीसगढ़) फोनः 6264035190

गतिशील एवं अति महत्त्वपूर्ण स्मारिका

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति द्वारा प्रकाशित स्मारिका के भक्ति–ज्ञान–वैराग्य से परिपूर्ण लेख सूर्य के समान हैं, जिनकी लालिमा हमें सुनहरे युग की ओर गतिशील करती है। वर्ष–प्रतिवर्ष इसके अध्ययन से विश्वास, एकाग्रता एवं दृढ़ता से मन में विकार उत्पन्न नहीं हो पाते; अपितु मर्यादा, त्याग, सम्मान, धैर्य व सात्विक प्रेम की भावना उजागर होती है। स्मारिका के प्रकाशन से संबद्ध सभी महानुभाव सम्माननीय हैं।

हम उनके दीर्घायु के लिए श्रीरामजी से प्रार्थना करते हैं।

श्रीमती चन्द्रमुखी एवं श्री राजेन्द्र पाल, चण्डीगढ़–160030 फोनः 9876143712

त्रुटिशून्य स्मारिका

मैं विगत कई वर्षों से श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका पढ़ता आ रहा हूँ। वार्षिक अंक 27 भी पढ़ा। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि इसमें ढूँढ़ने पर भी कोई त्रुटि नहीं मिल सकी। उद्धृत दोहा–चौपाइयाँ तो पूर्णतया शुद्ध हैं। भक्ति–ज्ञान से ओत–प्रोत इसमें प्रकाशित लेख जीवन में सदाचरण अपनाने की प्रेरणा प्रदान करते हैं।

मैं सम्पादक मंडल को साधुवाद ज्ञापित करते हुए आशान्वित हूँ कि यह पुनीत कार्य की सरिता निरंतर प्रवाहित होती रहेगी।

आचार्य डॉ. रामेश्वर प्रसाद गुप्त, दतिया (म.प्र.) फोनः 9826249448

परम्पराओं का निर्वहन सराहनीय

इस वर्ष मुझे श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की वार्षिक स्मारिका का अंक 27 काफी विलम्ब से प्राप्त हुआ। मैं सोच रहा था कि शायद इस वैश्विक महामारी के कारण इस वर्ष का अंक नहीं छप सका होगा, पर जब मुझे अगस्त 2020 में यह अंक प्राप्त हुआ तो मुझे बहुत प्रसन्नता हुई, विशेषकर यह जानकर कि इस कोरोना काल में भी, पिछली परम्पराओं का निर्वहन करते हुए स्मारिका प्रकाशित हुई।

मैं सम्पादक मंडल को साधुवाद देते हुए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि आपको ऐसी ऊर्जा प्रदान करें कि यह पुनीत कार्य का क्रम निर्बाध चलता रहे।

पं. राम नरेश तिवारी 'पिण्डीवासा', प्रयागराज (उ.प्र.) फोनः 9415443173

भक्ति भाव भरने वाली स्मारिका

आपके द्वारा प्रेषित श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका का 27 वाँ अंक प्राप्त हुआ। पढ़कर प्रसन्नता हुई। यह बहुत ही पुनीत कार्य परमात्मा आप लोगों से करवा रहा है। प्रशंसनीय पुनीत कार्य के लिए प्रणाम। इच्छा है अभी तक प्रकाशित सम्पूर्ण अंक पढ़ने की। मैं अपने को धन्य मानता हूँ कि आपकी संस्था में मेरा आत्मिक सम्बंध है। भक्त जनों के उर में भक्ति भाव भरने वाली यह स्मारिका अनवरत प्रेमी भक्तों को आह्लादित करती रहे, यही कामना है।

पं. राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी फोनः 9451131195

स्मारिका प्रकाशन समय की माँग

विगत वर्षों की भाँति मुझे इस वर्ष भी स्मारिका का 27 वाँ अंक प्राप्त हुआ, इसके लिए समिति को साधुवाद। मर्यादा पुरुषोत्तम की उपाधि से विभूषित राम, केवल राम नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति का अधिष्ठान तत्त्व हैं, भारतीय संस्कार परम्परा की रीढ़ हैं, सनातन संस्कृति एवं धर्म का प्राणतंत्र हैं। यह शब्द राष्ट्रमंडल का जयघोष है। राम आदर्श के चरम बिन्दु हैं। धीरता के सागर तथा विनम्रता के शिखर हैं। राम हर जन के रोम–रोम में बसे हुए हैं। अयोध्या में जन्मभूमि पर भव्य राम मंदिर निर्माण का कार्य चल रहा है। देश राम राज्य की ओर अग्रसर हो, ऐसी दशा में स्मारिका में निर्मित मंदिर का चित्र एवं मंदिर से सम्बंधित लेख का प्रकाशन समय की माँग है। इसमें प्रकाशित लेख मानव जीवन के परम लक्ष्य परम प्रभु की प्राप्ति हेतु प्रेरणा प्रदान करते हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि इसका प्रकाशन इसी प्रकार अनवरत चलता रहे।

श्री राम सिंह, ग्राम+पोस्ट–दामा, आजमगढ़ (उ.प्र.) फोनः 9839453851

स्मारिका आकर्षक

विगत कई वर्षों से मैं श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति की स्मारिका पढ़ रहा हूँ। मुझे इसका 27 वाँ वार्षिक अंक प्राप्त हुआ। कोरोना काल में भी इसका प्रकाशन जारी रहा, यह अत्यन्त सराहनीय है। मुझे इस अंक का कलेवर बहुत आकर्षक लगा। इसमें प्रकाशित लेख तो हर अंक में एक से एक बढ़िया होते हैं, जो श्रीराम जी के आदर्शों पर चलने की प्रेरणा प्रदान करते हैं। इतनी अच्छी आकर्षक स्मारिका के प्रकाशन हेतु इसके सम्पादक मंडल को मैं साधुवाद ज्ञापित करते हुए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह भक्ति–ज्ञान गंगा इसी तरह अनवरत प्रवाहित होती रहे।

शिव कुमार शर्मा, मुरैना (म.प्र.) फोनः 9711003051

सराहनीय स्मारिका

विगत कई वर्षों से मैं श्रीरामचरितमानस द्वारा प्रकाशित स्मारिका का अध्ययन करता आ रहा हूँ। वार्षिक अंक 27 (संवत् 2077, सन् 2020–21) का अंक प्राप्त कर मुझे प्रसन्नता हुई। श्रीराम नवमी के पश्चात् मैं इसके प्राप्त होने की प्रतीक्षा करता हूँ, क्योंकि इसमें ज्ञान–भक्ति से ओत–प्रोत लेख पढ़ने को मिलते हैं, जिनसे जीवन में सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्राप्त होती है। इस वर्ष का अंक कुछ विलम्ब से प्राप्त हुआ, पर कोरोना काल में भी स्मारिका प्रकाशन जारी रहा, यह अत्यन्त सराहनीय है। वर्ष प्रतिवर्ष स्मारिका में प्रकाशित लेखों का स्तर बढ़ रहा है, इस हेतु मैं स्मारिका के सम्पादक मंडल को साधुवाद ज्ञापित करता हूँ।

श्री राम बाबू शर्मा, दिल्ली फोनः 8800544501

आकर्षक आवरण एवं प्रेरणाप्रद फिलर्स

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति का वार्षिक अंक 27 प्राप्त कर, इसके आवरण चित्र को देखकर मन प्रसन्न हो गया। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के चित्र के चारों तरफ लिखा विजय मंत्र ''श्रीराम जय राम जय जय राम'' इसके आवरण को अत्यंत आकर्षक बना रहा है। इसमें प्रकाशित लेख तो भक्ति–ज्ञान से ओत–प्रोत हैं ही, इसमें बीच–बीच में लेखों के नीचे बचे स्थानों पर बॉक्स के अन्तर्गत जो फिलर्स दिए गए हैं, वे बहुत ही प्रेरणाप्रद हैं। श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र जीवन में आने वाली सभी कठिनाइयों के निवारण में समर्थ हैं, ऐसा मेरा विश्वास है, जो इस स्मारिका की सार्थकता में चार चाँद लगा रहे हैं। मेरा मानना है कि यह स्मारिका जन–जन में श्रीराम जी के आदर्शों को प्रसारित करने में सफल होगी। मैं इसके सम्पादक मंडल को साधुवाद ज्ञापित करते हुए भगवान श्रीराम से प्रार्थना करता हूँ कि इसका सम्पादन इसी तरह चलता रहे और मार्गदर्शन होता रहे।

श्री देवकी नंदन गौतम, पटना (बिहार) फोनः 9973000111

विचित्र दंड

अमेरिका में एक पंद्रह साल का लड़का स्टोर में चोरी करते हुए पकड़ा गया। पकड़े जाने पर गार्ड की गिरफ्त से भागने की कोशिश में स्टोर का एक शेल्फ भी टूट गया। जज ने जुर्म सुना और लड़के से पूछा, ''तुमने क्या सचमुच चुराया था ब्रेड और पनीर का पैकेट''। लड़के ने नीचे नजरें करके जवाब दिया। जी हाँ। जज-क्यों? 'लड़का-मुझे जरूरत थी।' जज-खरीद लेते। 'लड़का-पैसे नहीं थे।' जज-घरवालों से लेते। लड़का-घर में सिर्फ माँ है, बीमार और बेरोजगार है। ब्रेड और पनीर भी उसी के लिए चुराई थी। जज-तुम कुछ काम नहीं करते? 'लड़का-करता था एक कारवॉश में। माँ की देखभाल के लिए एक दिन की छुट्टी की थी तो मुझे निकाल दिया गया। जज-'तुम किसी से मदद माँग लेते'? लड़का 'सुबह से घर से निकला था, तकरीबन 50 लोगों के पास गया, बिल्कुल आखिर में यह कदम उठाया।' जिरह खत्म हुई और जज ने फैसला सुनाना शुरू किया। लड़के की परिस्थिति के अनुसार ब्रेड की चोरी बहुत शर्मनाक जुर्म है, पर इस जुर्म के हम सब जिम्मेदार हैं। अदालत में मौजूद हर शख्स, मुझ सहित सब मुजरिम हैं, इसलिए यहाँ मौजूद हर शख्स पर दस-दस डॉलर का जुर्माना लगाया जाता है। दस डॉलर दिए बगैर कोई भी यहाँ से बाहर नहीं निकल सकेगा।

यह कहकर जज ने दस डॉलर अपनी जेब से बाहर निकाल कर रख दिए और फिर पेन उठाकर लिखना शुरू किया-'इसके अलावा मैं स्टोर पर एक हजार डॉलर का जुर्माना करता हूँ कि उसने एक भूखे बच्चे से गैर इंसानी सुलूक करते हुए पुलिस के हवाले किया। अगर चौबीस घंटे में जुर्माना जमा नहीं किया तो कोर्ट स्टोर सील करने का हुक्म दे देगी।' जुर्माने की पूर्ण राशि इस लड़के को देकर कोर्ट उस लड़के से माफी तलब करती है। फैसला सुनने के बाद कोर्ट में मौजूद लोगों के आँसू तो बरस ही रहे थे, उस लड़के की भी हिचकियाँ बँध गईं। वह लड़का बार-बार जज को देख रहा था जो अपने आँसू छिपाते हुए बाहर निकल गये।

क्या हमारा समाज, सिस्टम और अदालत इस तरह के निर्णय के लिए तैयार है? चाणक्य ने कहा था कि यदि कोई भूखा व्यक्ति रोटी चोरी करता पकड़ा जाए तो उस देश के राजा के हाथ काट देने चाहिए।

सहयोग राशि भेजने वालों को साधुवाद

स्मारिका प्रकाशनार्थ हमें विज्ञापन दाताओं एवं इस समिति के सदस्यों के अतिरिक्त श्री के. पी. गुप्ता (बिलासपुर, छत्तीसगढ़), डॉ. प्रमोद पालीवाल (रोहतक-हरियाणा), श्रीमती पालीवाल (पत्नी स्व. श्री जगत प्रकाश पालीवाल) दिल्ली, श्रीमती माया उपाध्याय (झाँसी-उ.प्र.), श्री अरविन्द नायक एवं श्री राम बाबू शर्मा (दिल्ली), श्री अवध किशोर दूबे (झारखण्ड), श्री नरेन्द्र कुमार चाचान, गुवाहाटी (आसाम), श्री राम जन्म सिंह, दामा (आजमगढ़, उ.प्र.), श्री हर प्रसाद चतुर्वेदी (कानपुर), M/S J.M. Construaction (झाँसी), श्री राम दत्त गुप्ता (आगरा) से सहयोग राशि प्राप्त हुई है। हम विज्ञापन दाताओं एवं सहयोग राशि भेजने वाले पाठकों को साधुवाद ज्ञापित करते हैं तथा आशान्वित हैं कि भविष्य में भी सहयोग प्रदान करते रहेंगे।

रामकथा कलि पंनग भरनी

आचार्य डॉ० रामेश्वर प्रसाद गुप्त, सेवा निवृत्त प्राध्यापक (संस्कृत), दतिया (म0प्र0),
फोनः 9826249448

संसार के समस्त मानवों के कल्याण हेतु एक ही श्रेष्ठ गुण है, वह है सदाचरण। श्री वेदव्यास जी ने **'सत्यं परं धीमहि'** (भागवत 1-1-1) अर्थात् 'सत्य का ही अनुसरण करना चाहिये', यह कहकर सत्य की श्रेष्ठता प्रतिपादित की है। मनुस्मृति में मनुजी ने **'आचारः परमो धर्मः'**-(मनुस्मृति 1-108) अर्थात् 'सदाचार ही श्रेष्ठ धर्म है', यह उल्लेख कर सत्य गुण को श्रेष्ठ मान्य किया है तथा गोस्वामी तुलसीदास ने **'धरमु न दूसर सत्य समाना'** (मानस 2/95/5) अर्थात् सत्य के समान कोई अन्य गुण धर्म बड़ा नहीं है, इस निदर्शन से सत्य को महनीयता प्रदान की है। पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम इसी सत्यस्वरूप श्रेष्ठ गुण से ही परम आदृत बने। गोस्वामीजी ने श्रीरामचरितमानस में सत्यान्वित चिदानन्दघन श्रीराम को परम उदार कहा है, यथा-

'सोइ सच्चिदानंद घन कर नर चरित उदार'।
एवं 'सोइ सच्चिदानंद घन रामा'।। (7/25 तथा 7/72/3)

देवों के देव महादेव ने मानव रूपधारी भगवान श्रीराम की उनके सत्य गुण के कारण ही इस प्रकार से विनम्र वन्दना की है, यथा-

''जय सच्चिदानंद जग पावन।'' (मानस 1/50/3)

अस्तु, सत्यगुणान्वित भगवान श्रीराम का नाम और उनकी कथा किस प्रकार से पापतापहारिणी एवं भवसागर से तारिणी है, इस विषयक संक्षिप्त चिन्तन यहाँ दृष्टव्य है।

राम–कथा सत्य पर आदृत निष्काम कथा है, वहीं यह रावण की कथा काम अर्थात् कामनाओं की कथा है। सत्य पर आदृत राम कथा कल्याणकारी है। 'रामकथा' एक श्रेष्ठ सत्संग है। सत्संग की बड़ी महिमा है। गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं कि जितना भी जड़ चेतन जीव जगत है, इसके जितने भी प्राणियों ने जहाँ कहीं भी जिस प्रकार से बुद्धि, कीर्ति, सद्गति, विभूति और भलाई प्राप्त की है, वह सब सत्संग का ही प्रभाव है,

श्रीरामचरितमानस के अनुसार :–

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।। (1/3/5–6)

गोस्वामी जी ने यह भी कहा है कि बिना सत्संग के विवेक नहीं होता और श्रीरामजी की कृपा के बिना सत्संग भी प्राप्त नहीं होता। उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि रामकथा रूपी सत्संग आनन्द और कल्याण का मूल है। यथोल्लेख है कि–

बिनु सतसंग बिबेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।
सतसंगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला।। (1/3/7–8)

गोस्वामीजी ने 'राम' नाम या राम–चरित्र कथन या श्रवण को अभीष्ट या कल्याणकारी तो कहा ही है, साथ ही कल्पवृक्ष के समान सुफलदायी, कलि के जंजाल का निवारक तथा लोक और परलोक को सुधारने का आधार भी निरूपित किया है, यथा–

नाम कामतरु काल कराला। सुमिरत समन सकल जग जाला।।
राम नाम कलि अभिमत दाता। हित परलोक लोक पितु माता।। (1/27/5–6)

गोस्वामी तुलसीदासजी ने रामकथा को भवसागर–तारिणी कथा निरूपित करते हुए शान्ति और सकल आनन्द का स्रोत कहा है तथा कलिकाल के कलुष को भंजन करने वाली, विषैली, कलियुगी–दुष्प्रवृत्तियों रूपी सर्पावलियों के भक्षण हेतु मोरनी, विवेक को जाग्रत करने वाली, कलिकाल में सब मनोरथों को पूर्ण करने वाली कामधेनु, सज्जनों के लिए सुन्दर संजीवनी बूटी, धरती तल पर अमृत की सरिता, जन्ममरण रूपी भय का नाश करने वाली एवं भ्रमरूपी मेंढक के भक्षण के लिए सर्पिणी कहा है। 'रामकथा' को सकल सिद्धि, सुख सम्पत्ति की राशि भी कहा गया है।' गोस्वामी जी ने रामकथा को परमपावनी मन्दाकिनी कहा है। इस कथा में श्रीसीताराम जी का मनोरम विहरण होता है, यथोल्लेख है–

निज संदेह मोह भ्रम हरनी । करउँ कथा भव सरिता तरनी।।
बुध बिश्राम सकल जन रंजनि । रामकथा कलि कलुष बिभंजनि।।
रामकथा कलि पंनग भरनी। पुनि बिबेक पावक कहुँ अरनी।।
रामकथा कलि कामद गाई। सुजन सजीवनि मूरि सुहाई।।
सोइ बसुधातल सुधा तरंगिनि । भय भंजनि भ्रम भेक भुअंगिनि।।
सिवप्रिय मेकल सैल सुता सी। सकल सिद्धि सुख संपति रासी।।

(1/31/4–8 तथा 13)

श्रीरामचरितमानस में श्रीराम कथा का महत्व दर्शाते हुए और भी उल्लेख है, यथा–

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारु।।
रामचरित चिंतामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू।।

(1/31 तथा 1/32/1)

'रामकथा' पुरुषोत्तम श्रीराम का सुभग चरित्र ही है। इस कथा–चरित्र के श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन या आचरण से मानव–मात्र अपने कल्याण को सँजोने में सक्षम होता है। इस कथा के श्रवण से विशेष हित और विशेष लाभ होता है, यथा उल्लेख है कि –

रामचरित राकेस कर सरिस सुखद सब काहु।
सज्जन कुमुद चकोर चित हित बिसेषि बड़ लाहु।। (1/32 ख)

'रामकथा' अनन्त और अमित है, यथा –

राम अनंत अनंत गुन अमित कथा बिस्तार।
सुनि आचरजु न मानिहहिं जिन्ह कें बिमल बिचार।। (1/33)

श्रीरामचरितमानस में वर्णित 'रामकथा' वैशिष्ट्य के विषय में गोस्वामी तुलसीदासजी ने लिखा है कि 'सुन्दर सात्त्विकी बुद्धि, इसकी आधार भूमि है, हृदय ही उसमें अगाध स्थान है। वेद–पुराण समुद्र है। साधुसंत मेघ हैं, वे श्रीराम के सुकृत या सुयश रूपी सुन्दर, मधुर, मनोहर और मंगलकारी जल की वर्षा करते हैं, यथा वर्णन है कि –

सुमति भूमि थल हृदय अगाधू। बेद पुरान उदधि घन साधू।।
बरसहिं राम सुजस बर बारी । मधुर मनोहर मंगलकारी।। (1/36/3–4)

श्रीरामकथा मंगलकारी है, इसीलिये लोकहितकारी है। इसमें श्रीराम का समग्र सुकृतिपूर्ण जीवन वर्णित है। ऐसे सुकृत ही तो अनुकरणीय होते हैं, जो सभी के लिए हितकारी होते हैं। श्रीराम के सुकृतों के वर्णन से ही यह रामकथा सकल लोक हितकारी बनी है, यथा–

कथा जो सकल लोक हितकारी। सोइ पूछन चह सैलकुमारी।। (1/107/6)

रामकथा रूपी सलिल परम गुणकारी कहा गया है। यह आशारूपी प्यास और मन के मैल को दूर करने वाला है। यह कथामृत काम, क्रोध, मद, मोह का नाशक तथा विमल विवेक का सम्वर्धक कहा गया है। इसके पान करने से हृदय के ताप और पाप नष्ट होते हैं, यथा –

अदभुत सलिल सुनत गुनकारी। आस पिआस मनोमल हारी।।
राम सुप्रेमहि पोषत पानी। हरत सकल कलि कलुष गलानी।।
भव श्रम सोषक तोषक तोषा। समन दुरित दुख दारिद दोषा।।
काम कोह मद मोह नसावन। बिमल बिबेक बिराग बढ़ावन।।
सादर मज्जन पान किए तें । मिटहिं पाप परिताप हिए तें।। (1/43/2–6)

रामकथा का यह वैशिष्ट्य है कि इसमें मज्जन करने से विकारों का विनाश होता है और विमल विवेक–वर्धन होता है। मानवजीवन का लक्ष्य भी यही है कि मनुष्य को विकारों से मुक्ति मिले तथा सच्चिदानन्द रूप परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त हो जाये। इस लक्ष्य की आपूर्ति करने

में 'रामकथा' पूर्णतया सक्षम है।

श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने अनेक सिद्ध सन्तों, देवों और भक्तजनों के माध्यम से इस पवित्र रामकथा का श्रवण कराया है। ऋषि कुंभज (अगस्त्य) और शिवजी का सत्संग, शिवजी द्वारा पार्वतीजी को रामकथा सुनाने का प्रसंग, शिवजी द्वारा काकभुशुण्डि को रामकथा श्रवण कराने का उपक्रम, काकभुशुण्डि से याज्ञवल्क्य और फिर याज्ञवल्क्य से भरद्वाज को रामकथा सुनाये जाने का प्रसंग एवं पुनश्च काकभुशुण्डि द्वारा गरुड़ को रामकथा सुनाने का प्रसंग आदि श्रीरामचरितमानस में वर्णित हैं। श्रीरामचरितमानस में वर्णित रामकथा के 'सात काण्ड' इस सरोवर की सुन्दर सात सीढ़ियाँ हैं, जिनको ज्ञानरूपी नेत्रों से देखते ही मन प्रसन्न हो जाता है। इस तथ्य का सार (प्राण) श्रीराम की महिमा का गुणगान है, जो मानव को परम पावन बनाता है, यथा –

सप्त प्रबंध सुभग सोपाना। ग्यान नयन निरखत मन माना।।
रघुपति महिमा अगुन अबाधा। बरनब सोइ बर बारि अगाधा।। (1/37/1–2)

श्री शिवजी ने परम पवित्रा पार्वतीजी को लोककल्याणकारिणी परमपावनी 'रामकथा' क्रमानुसार सुरुचिपूर्ण ढंग से श्रवण कराई। गोस्वामीजी की कविता यहाँ सुभग सरिता सी अविरल रूप से प्रवाहित है, जिसमें श्रीराम के विमलयश रूपी जल का संभरण है, यथा–

चली सुभग कबिता सरिता सो। राम बिमल जस जल भरिता सो।। (1/39/11)

श्रीरामचरितमानस के सातों काण्डों में कलि–कलुष, पाप–ताप हारिणी 'राम की कथा' अर्थात् श्रीराम का सत् चरित्र प्रत्यक्षतः प्रेरणादायी है। प्रथम सोपान बालकाण्ड हमें बालक श्रीराम जैसा विनम्र, शालीन, शीलवान् एवं निरभिमानी बनने की प्रेरणा प्रदान करता है, यथा–

बिद्या बिनय निपुन गुन सीला। खेलहिं खेल सकल नृप लीला।। (1/204/6)

श्रीराम का सरल स्वभाव भी यहाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जो परम प्रेरक, अनुकरणीय एवं आचरणीय है, यथा–

राम कहा सबु कौसिक पाहीं। सरल सुभाउ छुअत छल नाहीं।। (1/237/2)

श्रीराम के निःस्पृह एवं आध्यात्मिक रूप को प्रत्यक्ष कराने वाली रामकथा (श्रीरामचरितमानस) का अयोध्याकाण्ड मानव जीवन–मूल्यों का पवित्र कोष है। यह वैर और युद्ध रहित जीवन बनाने का संदेश देता है। यहाँ प्रेम है, दर्शन है और श्रेय है। श्रीराम के मनोहारी चरित्र से मानव–समाज को यहाँ बहुत सीखने को मिलता है।

मानस का तृतीय सोपान अरण्यकाण्ड के रूप में प्रस्तुत है। यहाँ श्रीराम का अनासक्ति योग एवं वासना रहित जीवन तथा भक्ति का प्राधान्य मानव समुदाय को परम सुरम्य बनाने हेतु महत्त्वपूर्ण उत्प्रेरक है।

रामकथा का चतुर्थ सोपान 'किष्किंधाकाण्ड आत्मदर्शन कराने का सुभग सोपान है, जहाँ

कामना से बहुत ऊपर साधना का स्थान है। यहाँ स्पष्ट निरूपण है कि रामकथा या रघुनायक की सुकृतिकीर्ति को श्रवण करने वाले सकल मनोरथों की सिद्धि को प्राप्त होते हैं, यथा–

भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि॥ (4/30क)

श्रीरामकथा के पंचम सोपान सुन्दरकाण्ड में श्रीराम के गुणों का वर्णन सुनते ही सीताजी के दुःख के निराकरण का उल्लेख श्रीरामकथा के महत्त्व को सहज ही उजागर करता है। हनुमानजी माँ सीता को रामकथा सुनाते हैं, तो उनका दुःख तुरन्त ही दूर हो जाता है, यथा–

सीता मन बिचार कर नाना। मधुर बचन बोलेउ हनुमाना॥
रामचंद्र गुन बरनैं लागा। सुनतहिं सीता कर दुःख भागा॥
लागीं सुनैं श्रवन मन लाई। आदिहु तें सब कथा सुनाई॥ (5/13/4–6)

प्रस्तुत सुन्दरकाण्ड में श्रीरामकथा के श्रवण से सुमंगलकारी मनोहारी निष्कर्ष बड़े ही सारगर्भित रूप में निरूपित है, यथा–

सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान।
सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान॥ (5/60)

श्रीरामचरितमानस का लंकाकाण्ड एक उत्तम एवं सारपूर्ण संदेश देता है कि सुन्दर जीवन बनाने पर सभी आसुरीभाव नष्ट हो जाते हैं अर्थात् सद्वृत्तियों को आत्मसात करने से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि राक्षस विनष्ट हो जाते हैं, अतएव सुन्दरकाण्ड की सुन्दर सीख से आसुरी वृत्तियों के संहार और सच्चिदानन्द के सुफल की प्राप्ति का उपक्रम ही श्रेयस्कर है। अस्तु काम रूपी राक्षस को अपने सुन्दर सद्गुणों से पराजित कर जीवन सुन्दर बनाने का संदेश इस सोपान का सार है।

श्रीरामकथा (श्रीरामचरितमानस) का सप्तम सोपान अनासक्ति या मुक्ति प्राप्ति का मार्ग बतलाता है। इसमें जीवनमुक्त तथा निर्विकार होने की कामना श्रेयप्रद कही गई है, यथा–

मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥ (7/13/छंद)

इस सोपान में सत्संग और भक्ति तथा समरसता और सौहार्द की उत्कृष्ट शिक्षा है, यथा–

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी । बिनु सतसंग न पावहिं प्रानी॥ (7/45/5)
सरल सुभाव न मन कुटिलाई । जथा लाभ संतोष सदाई॥ (7/46/2)
बैर न बिग्रह आस न त्रासा । सुखमय ताहि सदा सब आसा॥ (7/46/5)

रामकथा के सान्निध्य से व्यक्ति जीवनमुक्त और ब्रह्मपरायण तो होता ही है, साथ ही वह ब्रह्मरूपता का सुबोध भी प्राप्त कर लेता है, यथा–

धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी।
ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।।

(7 / 54 / 6 तथा 7 / 117 / 2)

निष्कर्ष यह है कि 'रामकथा' राम के सत्य या सदाचार पूर्ण चरित्र के गायन की कथा है। इसे श्रवण एवं तद्वत आचरण से मनुष्य सही अर्थ में मानव बनकर सहज ही पुरुषार्थ चतुष्ट्य की प्राप्ति में सफल हो जाता है। रामकथा से भवबंधन से मुक्त हुआ व्यक्ति समस्त पापों से रहित होकर परम शान्ति को प्राप्त कर पाता है, यथा—

कहेउँ परम पुनीत इतिहासा। सुनत श्रवन छूटहिं भव पासा।।
मन क्रम बचन जनित अघ जाई। सुनहिं जे कथा श्रवन मन लाई।।

(7 / 126 / 1 एवं 3)

अस्तु, मंगलमूल रामकथा तन, मन और जीवन को पावन करती हुई परमपवित्र श्रीराम के पावन चरित्र के अनुसरण की प्रेरणा प्रदान कर मानव—जीवन को धन्य बनाने की एक शोभन सुकृति है। यथार्थ में यह कलिकाल के विषैले विकारों को पूर्णतः विनष्ट करने का सुमन्त्र है। श्रीरामकथा के श्रवण से सभी को अपना जीवन निर्विकार, धन्य एवं कृतार्थ बनाना चाहिए।

संस्कारों का प्रभाव

श्री टी.एन. शेषन जब मुक्त चुनाव आयुक्त थे तब परिवार के साथ छुट्टियाँ बिताने के लिए मसूरी जा रहे थे। परिवार के साथ उत्तर प्रदेश से निकलते हुए रास्ते में उन्होंने देखा कि पेड़ों पर गौरैया के कई सुन्दर घोंसले बने हुए हैं। यह देखते ही उनकी पत्नी ने अपनी घर की दीवारों को सजाने के लिए गौरैया के दो घोंसले लेने की इच्छा व्यक्त की तो उनके साथ चल रहे पुलिसकर्मियों ने तुरंत एक छोटे से लड़के को बुलाया, जो वहाँ मवेशियों को चरा रहा था। उसे पेड़ों से तोड़ कर गौरैया के दो घोंसले लाने के लिए कहा। लड़के ने अस्वीकृति में सिर हिला दिया। टी. शेषन ने इसके लिए लड़के को 10 रुपये देने की पेशकश की, फिर लड़के के मना करने पर टी. शेषन ने इस कार्य का मूल्य बढ़ाकर रु. 50/- देने की पेशकश की, फिर भी लड़के ने हामी नहीं भरी तब पुलिस ने लड़के को धमकी दी और उसे बताया कि साहब जज हैं और तुझे जेल में भी डलवा सकते हैं। गंभीर परिणाम भुगतने होंगे। लड़का तब श्रीमती व श्री शेषन के पास गया और कहा,-"साहब में ऐसा नहीं कर सकता। न घोंसलों में गौरैया के छोटे बच्चे हैं अगर मैं आपको दो घोंसले तोड़कर दूँ, तो जो गौरैया अपन बच्चों के लिए भोजन की तलाश में बाहर गई हुई है, जब वह वापस आएगी और बच्चों को नहीं देखेगी तो बहुत दुखी होगी, जिसका पाप में नहीं ले सकता।

शेष पृष्ठ 26 पर.....

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा

डॉ. शंकर शरण तिवारी, झाँसी, फोन–9795127788

इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति सुख की आकांक्षा करता है। प्रायः यह सुख उसे बाह्य–पदार्थों में ही दिखाई पड़ता है। सुत, वित, लोक – ये तीन एषणाएँ उसे आन्दोलित करती रहती हैं। मैं पुत्रवान् हो जाऊँ, अपेक्षित धन–संपत्ति का स्वामी बन जाऊँ, लोगों में मेरा यश व्याप्त हो जाये – ये लौकिकता में आबद्ध मनुष्य की कामनाएँ हैं। तुलसी भी अपने जीवन में सुख की कामना करते रहे होंगे, पर उन्हें बाल्यावस्था में अपरिमित दुःख प्राप्त हुआ। मातृ–वियोग, पितृ–वियोग के पश्चात् वांछित सुख की कल्पना उनके लिए अशक्य थी। भाग्य उनके अनुकूल नहीं था। घोर दरिद्रता से उनका सामना हुआ, उदर पूर्ति के लिए दर–दर भटकना पड़ा। भगवान् श्रीराम की भक्ति का वरदान प्राप्त कर इस अलौकिक बालक को गुरु प्राप्ति हुई, गुरु ने अत्यन्त आग्रह से पुनः–पुनः राम–कथा का श्रवण कराया, उनकी रुचि रघुपति गुणगान की दिशा में अग्रगामी हुई और उन्हें लगा कि यही प्रयोजन उन्हें 'स्वान्तः सुख' की अनुभूति कराएगा – इसीलिए उन्होंने मानस के प्रारंभ में ही लिखा–

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथगाथा भाषानिबंधमतिमंजुलमातनोति।

(1 / मंगलाचरण–7)

अर्थात् तुलसीदास अपने अन्तःकरण के सुख के लिए सुन्दर रघुनाथ–गाथा, अत्यन्त मनोहर भाषा में बाँधकर विस्तृत कहता है। यहाँ तुलसी के 'स्वान्तः सुख' के स्वरूप को समझना आवश्यक है, क्योंकि यह सामान्य मनुष्य के 'सुख' से नितान्त भिन्न है। तुलसी काव्य–रचना के माध्यम से 'स्वान्तः सुख' प्राप्त करना चाहते थे। उनका यह सुख' भी 'मन का सुख' न होकर अन्तःकरण या आत्मा का सुख है। अमरकोश के अनुसार– 'अन्तं' तथा 'अन्तः' में यह अन्तर है– प्रथम का अर्थ है– मन जबकि द्वितीय का अर्थ है– आत्म विशिष्ट अन्तःकरण। भगवान श्रीकृष्ण गीता में अर्जुन को समझाते हुए कहते हैं कि शरीर की अपेक्षा इन्द्रियाँ बलवती या श्रेष्ठ हैं, इन्द्रियों की अपेक्षा मन शक्तिशाली है, मन की अपेक्षा बुद्धि परे है और बुद्धि से भी परे आत्मा है–

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः।। (3 / 42)

'सः' आत्मा का बोधक है, जो चेतन, अमल और सहज ही सुख की राशि है। यही सिद्धांत श्रीरामचरितमानस में वर्णित है यथा–

बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।
ईस्वर अंस जीव अबिनासी । चेतन अमल सहज सुखरासी।।
(1 / 117 / 5–6 तथा 7 / 117 / 2)

तुलसीदासजी मानस रचना या सामान्य रूप से अन्य द्वादश ग्रन्थों की रचना द्वारा इसी प्रकार के लोकेतर सुख को प्राप्त करना चाहते थे। उनके ध्यान में बृहदारण्यक उपनिषद् के ये निर्देश अवश्य स्फुरित हुए होंगे–

आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति। (2 / 4 / 5)

अर्थात् अपने ही प्रयोजन के लिए सब प्रिय होते हैं। इसी मंत्र को आधार बनाकर तुलसी ने जिस भक्ति विशिष्ट काव्य श्रीरामचरितमानस की रचना की, वह मात्र 'स्व' के लिए न होकर 'सबके लिए' था–

कीरति भनिति भूति भलि सोई। सुरसरि सम सब कहँ हित होई।। (1 / 14क / 9)

इससे स्पष्ट है उनका 'स्वान्तः सुख' परान्तः सुख का पर्याय है। उनके सुख में 'सर्वजन का सुख' अन्तर्भूत हो गया था। इसी प्रयोजन के अनुरूप उन्हें एक तरफ अपने स्वयं के लिए 'स्वान्तस्तमः शान्तये' का वरदान प्राप्त हुआ तो दूसरी ओर मानव मात्र को भी उन्होंने आश्वस्त किया–

मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमः शान्तये।
भाषाबद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसम्।।
श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्त्यावगाहन्ति ये।
ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति नो मानवाः। (7 / अन्तिम श्लोक)

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि तुलसी यह चाहते थे कि रामचरितमानस में वर्णित भक्तिपद्धति को मानव मात्र अपने जीवन में अपना कर संसार रूपी शत्रु के दाहक ताप से तप्त न हो अर्थात् उनका तीनों प्रकार के दैहिक, दैविक तथा भौतिक ताप शान्त हो जाएँ जैसा कि श्रीरामराज्य में था, यथा–

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7 / 21 / 1)

'संसार का अर्थ है'–मैं', मेरा' का भाव– जगत् इससे भिन्न है। संसार के अन्तर्गत आने वाले जिन तत्त्वों के प्रति मनुष्यों की ममता होती है, वे इस प्रकार से हैं–

जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा।। (5 / 48 / 4)

इन्हें ही 'भव–ताप' की संज्ञा दी गयी है, यथा–

भवताप भयाकुल पाहि जनं। (7/14 छंद 1)

इस प्रकार भव–ताप–शमन के विभिन्न उपाय या साधन यद्यपि मानस में यत्र–तत्र देखे जा सकते हैं, फिर भी गोस्वामीजी ने विनय–पत्रिका के पद सं0 203 में प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक तिथियों के माध्यम से मानव मात्र के लिए 'स्वान्तः सुख' प्राप्त करने के विभिन्न साधनों की चर्चा की है। यहाँ इन्हीं का क्रमशः विवेचन किया जाता है–

1. जिस प्रकार प्रतिपदा, पक्ष में सबसे पहला दिन है, उसी प्रकार 'सहज सुख' या 'परम विश्राम' प्राप्त करने के लिए प्रथम साधन प्रेम है। **'रामहि केवल प्रेमु पिआरा**-(2/137/1) यह भक्ति का अनिवार्य नियम है। तुलसी विनय–पत्रिका में लिखते हैं–

परिवार प्रथम प्रेम बिनु राम-मिलन अति दूरि।
जद्यपि निकट हृदय निज रहे सकल भरिपूरि॥ (पद 203/2)

2. द्वितीया का संकेत यह है कि साधक को जीव तथा ईश्वर में भेद न मानकर भक्ति पथ का अवलंब ग्रहण करना चाहिए। सर्वत्र मनुष्य–मात्र में अभेद–दर्शन पूर्वक ईश्वर या भगवान् श्रीराम की अनुभूति वांछनीय है। यही निर्देश गीता का भी है–

वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः। (7/19)

उपनिषद का भी सूत्र इसी प्रकार का संदेश देता है–

तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः (उपनिषद (कल्याण)–अंक, पृष्ठ 17)

इस प्रकार के मोह का आलंबन राग है। जहाँ राग है वहाँ उससे उपलक्षित द्वेष, भय आदि का भी ग्रहण होता है। मोह, शोक का उद्भव इसीलिए होता है कि व्यक्ति से भिन्न आलंबन या तो प्रेय है या उत्प्रेय अथवा उदासीन। अप्रेय या अग्राह्य व्यक्ति के लिए भयकारक है ही। गीता में दैवी संपदा का प्रथम गुण 'अभय' है। भगवान वासुदेव का कथन है–

अभयं सत्त्वसंशुद्धिः (16/1)

विचारणीय है –विश्वामित्र जैसे राजर्षि भी निशाचरों से भयभीत हैं। भगवान् राम उन्हें आश्वस्त करते हैं –

निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई। (1/210/1)

इन्हीं सबके अनुसरण में तुलसीदास जी ने विनय–पत्रिका में लिखा है–

दुइज द्वैत-मति छाड़ि चरहिं महि-मंडल धीर।

बिगत मोह-माया-मद हृदय बसत रघुबीर।। (पद 203/3)

3. 'तीज' प्रतीक हैं– त्रिगुणातीत परमपुरुष श्री रघुवीर की। तुलसी लिखते हैं–

तीज त्रिगुन-पर परमपुरुष श्रीरमन मुकुंद।
गुनसुभाव त्यागे बिनु दुरलभ परमानंद।। (पद 203/4)

सत्व गुण का स्वभाव है–सुख, रजोगुण दुःख और तमोगुण मोहमूलक है। प्रकृति या माया के इन तीनों गुणों से मुक्त होने पर ही साधक 'परमानंद' की प्राप्ति कर सकता है। मानस के 'ज्ञान दीपक' प्रसंग में यही बात कही गयी है–

तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास तें काढ़ि। (7/117 ग)

गीता में स्पष्ट निर्देश है कि जो पुरुष भगवान् को अपना स्वामी मानता हुआ, स्वार्थ तथा अहं भाव को त्यागकर श्रद्धा सहित और तीनों गुणों से परे होकर निरन्तर भजन में संलग्न रहता है, वह उन्हें प्राप्त करता है–

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते।। (14/26)

4. चतुर्थी के समान भगवान की प्राप्ति का चौथा उपाय यह है कि अन्तःकरण चतुष्ट्य (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) का त्याग कर देना चाहिए। वेदान्त में स्पष्ट विधान है कि प्रभु के प्रकाश से प्रकाशित आत्मा के प्रकाश के समक्ष चित्त में व्याप्त जड़ प्रकाश या आभास हतप्रभ हो जाता है, यथा–

चौथि चारि परिहरहु बुद्धि-मन-चित्त-अहँकार। (पद 203/5)

(भागवतः) स्वयं प्रकाशमानत्वाद् आभासः न उपयुज्यते। (वेदान्तसार–59)

5. पंचमी का तात्पर्य यह है कि साधक इन्द्रियों के पाँच विषयों – स्पर्श, रस, शब्द, गंध और रूप–से परिचायित न होकर उन्हें प्रभु की ओर मोड़ दे, यथा–

पाँचइ पाँच परस, रस, शब्द, गंध अरु रूप। (पद 203/6)

श्रीरामचरितमानस में भी इन विकारों का उदान्तीकरण देखा जा सकता है–

1½ **स्पर्श- कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ। दीनदयाल सकल दुख हरेऊ।।** (7/83/4)

2½ रस- श्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरि दास। (7/69)

3½ शब्द- मृतक जिआवनि गिरा सुहाई। श्रवन रंध्र होइ उर जब आई।। (1/145/7)

4½ गंध- त्रिबिध समीर सुसीतलि छाया। सिव बिश्राम बिटप श्रुति गाया।। (1/106/3)

5½ रूप- निज प्रभु बदन निहारि निहारी। लोचन सुफल करउँ उरगारी।। (7/75क/6)

6. सुख प्राप्ति का छठा साधन है – कामादि षड् विकारों पर विजय। ये प्रभु के सहचर या अनुचर न होकर माया रूपी सेना के महारथी हैं, यथा–

छठ षटबरग करिय जय जनकसुता-पित लागि। (पद 203/7)

ये सभी अजेय हैं, पर इन्हें साधक रूपी वीर परास्त कर सकता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर। (6/80क)

7 सप्तमी का भाव यह है कि शरीर सात धातुओं (रस, रक्त, माँस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र) से बना होने के कारण अधम और अपवित्र है, पर इसका एक ही सदुपयोग परोपकार है–

सातैं सप्तधातु - निरमित तनु करिय बिचार।
तेहि तनु केर एक फल, कीजै पर-उपकार।। (पद 203/8)

श्रीरामचरितमानस में भी यही संदेश है, यथा–

पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया।। (7/121/14)

गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण यही कहते हैं–

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्।। (3/25)

'लोक संग्रह कर्म' का अर्थ है– परहित संपादनार्थ किया जाने वाला कर्म।

8. आठवें सुख का साधन अष्टधा प्रकृति प्रतीत होती है, जो वास्तव में केवल 'आभास' मात्र ही है, अतः इसके एक उपादान 'मन' का सबल अवलंब लेकर साधक को प्रभु का साक्षात्कार या उनकी भक्ति की अनुभूति करनी चाहिए–

आठइँ आठ प्रकृति-पर निरबिकार श्रीराम।
केहि प्रकार पाइय हरि, हृदय बसहिं बहु काम।। (पद 203/9)

वेदान्त का भी यही संदेश सूत्र है–

मनसैवानुद्रष्टव्यम् (वेदान्तसार 59)

9. नवमी का तात्पर्य यह है कि यह मानव शरीर नौ छिद्रों वाला है, अतः हेय है, पर इसी के द्वारा तो 'अन्तःसुख' की प्राप्ति होनी है। आत्मा में छिद्र कहाँ, वह तो प्रभु के परम प्रकाश का प्रतिबिम्ब है, अतः इसकी अनुभूति करना ही साधक का परम पुरुषार्थ है और यदि यह न कर

सके तो अनेक योनियों में भ्रमण करते हुए दुख ही मिलेंगे—

नवमी नवद्वार-पुर बसि जेहि न आपु भल कीन्ह।
ते नर जोनि अनेक भ्रमत दारुन दुख लीन्ह।। (पद 203/10)

श्रीरामचरितमानस में भी यही सिद्धांत वर्णित है, यथा—

नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही।
नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी।। (7/121/9—10)

10. 'दशमी' में यह ध्वनि है कि साधक का दसों इन्द्रियों पर संयम आवश्यक है।

दसइँ दसहु कर संजम जो न करिय जिय जानि।
साधन बृथा होइ सब मिलहिं न सारंगपानि।। (पद 203/11)

'मोह' रूपी रावण के दस सिर हैं, जिनका छेदन केवल ज्ञान या 'भक्ति' द्वारा ही संभव होता है और यह सत्संग से संभव है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार सत्संग से 'मोह—नाश' होकर 'स्वान्तः सुख' की प्राप्ति होती है, यथा—

मोह जलधि बोहित तुम्ह भए। मो कहँ नाथ बिबिध सुख दए।। (7/125क/3)

11. 'एकादशी' शब्द में 'एक' का भाव यह है कि साधक को मात्रैक भगवान के प्रति भक्ति होनी चाहिए। भूत—प्रेत, यक्ष, गंधर्व, वैताल, पिशाच आदि की साधना से अपेक्षित सिद्धि तो प्राप्त हो जाती है, पर यह बंधनकारी होने के साथ—साथ अधोपतन का भी कारण होती है—

एकादसी एक मन बस कै सेबहु जाइ।
सेइ ब्रतकर फल पावै आवागमन नसाइ।। (पद 203/12)

गीता में भी भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि भूतप्रेतों की उपासना तो तामसी लोग करते हैं और इस प्रवृत्ति के कारण वे जन्म—जन्मान्तर मुझ परमेश्वर को प्राप्त न होकर आसुरी योनि (अधोगति) को प्राप्त होते हैं।

प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः। (17/4)

आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्।। (16/20)

12. द्वादशी के दिन दान करने का विधान है, जो शास्त्र विहित धर्म है। यहाँ भी निष्कामिता का भाव वांछनीय है।

द्वादसि दान देहु अस, अभय होइ त्रैलोक।
परहित-निरत सो पारन बहुरि न ब्यापत सोक।। (पद 203/13)

रामराज्य में नागरिकों की ऐसी उदात्त क्रिया का वर्णन गोस्वामी जी के शब्दों में मनन करने योग्य है।

सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी।। (7/22/7)

दान का महत्त्व चारों युगों में है, पर कलियुग में विशेष महत्त्व है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार—

प्रगट चारि पद धर्म के कलि महुँ एक प्रधान।
जेन केन बिधि दीन्हें दान करइ कल्यान।। (7/103ख)

13. त्रयोदशी में 'तीन' शब्द तीन अवस्थाओं—जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति का संकेत है—

तेरसि तीन अवस्था तजहु, भजहु भगवंत।
मन-क्रम-बचन-अगोचर, ब्यापक, ब्याप्य अनंत।। (पद 203/14)

श्रीरामचरितमानस में वाल्मीकि मुनि ऐसे भक्त का संकेत इस प्रकार करते हैं—

कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी। जागत सोवत सरन तुम्हारी।।
तुम्हहिं छाड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।। (2/130/4—5)

14. चतुर्दशी का संकेत यह है कि चौदह भुवनों में प्रभु ही जड़—चेतन रूप में व्याप्त हैं, इसलिए सर्वत्र इस जगत में प्रभु का ही दर्शन करना सुखदायक होगा—

चौदसि चौदह भुवन अचर-चर-रूप गोपाल।
भेद गए बिनु रघुपति अति न हरहिं जग-जाल।। (पद 203/15)

वाल्मीकिजी भी श्रीरामचरितमानस में भक्त की ऐसी ही व्याख्या करते हैं—

सरगु नरकु अपबरगु समाना। जहँ तहँ देख धरें धनु बाना।।
करम बचन मन राउर चेरा। राम करहु तेहि कें उर डेरा।। (2/131/7—8)

15. पूर्णिमा से प्रेमाभक्ति की चरम स्थिति की ओर संकेत है—

पूनो प्रेम-भगति-रस हरि-रस जानहिं दास।
सम, सीतल, गत-मान, ग्यानरत, विषय-उदास।। (203/16)

इस अवस्था में जो अनुभूति होती है, उसका वर्णन श्रीरामचरितमानस में भक्त सुतीक्ष्ण के संदर्भ में इस प्रकार से है:—

कबहुँक फिरि पाछें पुनि जाई। कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई।।
अबिरल प्रेम भगति मुनि पाई। प्रभु देखैं तरु ओट लुकाई।। (3/10/11—12)

'स्वान्तः सुख' की यह चरम अवस्था है कि वृक्ष की ओट में छिपे हुए प्रभु श्रीराम सुतीक्ष्णजी

के नयनों के विषय नहीं बन पाते, क्योंकि वे अपने अंदर उनका दर्शन कर रहे थे। कारण स्पष्ट है–प्रेमाभगति की स्थिति ऐसी ही होती है।

इस समग्र विवेचन से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि यदि भक्ति के साथ श्रीरामचरितमानस का अवगाहन किया जाये तो उपर्युक्त सभी सोपान दृष्टि के विषय बन जाते हैं और इन्हीं पर चलकर साधक 'अन्तःसुख' (स्वान्तः सुख) की अनुभूति कर सकता है, जो परमानन्द से भिन्न नहीं हो सकती।

प्रेरणाप्रद दृष्टान्त

1. एक बार गाँव ने यह निर्णय लिया कि बारिश के लिए ईश्वर से प्रार्थना करेंगे, प्रार्थना के दिन सभी गाँव वाले एक जगह एकत्रित हुए, परन्तु एक बालक अपने साथ छाता भी लेकर आया।
   'इसे कहते हैं आस्था'।
2. जब आप एक बच्चे को हवा में उछालते हैं तो वह हँसता है, क्योंकि वह जानता है कि आप उसे पकड़ लेंगे।
   'इसे कहते हैं विश्वास'।
3. प्रत्येक रात्रि को जब हम सोने के लिए जाते हैं, तब इस बात की कोई गारण्टी नहीं होती कि सुबह तक हम जीवित रहेंगे भी या नहीं, फिर भी हम घड़ी में अलार्म लगाकर सोते हैं।
   'इसे कहते हैं आशा'।
4. हमें भविष्य के बारे में कोई जानकारी नहीं है फिर भी हम आने वाले कल के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाते हैं।
   'इसे कहते हैं आत्मविश्वास'।
5. एक 60 साल की उम्र वाले व्यक्ति की शर्ट पर एक शानदार वाक्य लिखा था ''मेरी उम्र 60 साल नहीं है, मैं तो केवल 16 का हूँ, 44 साल के अनुभव के साथ।
   'इसे कहते हैं नज़रिया'।

....पृष्ठ 18 का शेष

यह सुन टी.एन. शेषन दंग रह गए। श्री शेषन ने अपनी आत्मकथा में लिखा है-''मेरी स्थिति, शक्ति और आईएएस की डिग्री सिर्फ उस छोटे, अनपढ़, मवेशी चराने वाले लड़के द्वारा बोले गए शब्दों के सामने पिघल गई। ''पत्नी द्वारा घोंसले की इच्छा करने और घर लौटने के बाद, मुझे उस घटना के कारण अपराध बोध की गहरी भावना का सामना करना पड़ा''। जरुरी नहीं शिक्षा और महंगे कपड़े मानवता की शिक्षा दे ही दें। यह आवश्यक नहीं, यह तो भीतर के संस्कारों से पनपती है। दया, करुणा, दूसरों की भलाई का भाव, छल-कपट न करने का भाव मनुष्य को परिवार के बुजुर्गों द्वारा दिये संस्कारों से तथा अच्छी संगत से आते है अगर संगत बुरी हो तो अच्छे गुण आने का प्रश्न ही नही है।

जनकसुता जग जननि जानकी

श्री राम जन्म सिंह, दामा, आजमगढ़ (उत्तर प्रदेश) फोन–9839453851

मिथिला के राजा जनक के राज्य में अकाल पड़ा। ऋषियों की सलाह से जल वृष्टि के लिए एक यज्ञ का अनुष्ठान किया गया। राजर्षि सीरध्वज जनक जब खेत में हल चला रहे थे, उसी समय उनको एक कन्या प्राप्त हुई। उस समय तक राजा को कोई सन्तान नहीं थी। राजा ने उस कन्या का नाम सीता (जो हल के फाल द्वारा हराई से निकली हो) रखा। इस कन्या के माता–पिता की जानकारी नहीं हो सकी। राजा सीरध्वज (जिसके ध्वज का चिह्न हल हो) की स्त्री ही उसकी माता बन गई।

सीताजी की जन्म कथा

वाल्मीकि रामायण में सीता द्वारा स्वयं अपनी आत्मकथा का विवरण प्रस्तुत कराया है। वन में अनुसूया से अपना जीवन वृत्तांत कहते हुए सीता ने कहा था कि एक समय राजा जनक खेत में औषधि बो रहे थे। उसी समय उन्होंने सीता को मिट्टी में पाया था (वाल्मीकि रामायण 1/66/13)। सीता किसी स्त्री की परित्यक्ता पुत्री थी। अनेक ग्रन्थों में सीता के असली माता–पिता की खोज की चेष्टा की गई है। एक कथा में सीता लंकाधिपति रावण की स्त्री मंदोदरी के गर्भ से उत्पन्न बताई गई। मंदोदरी मय दानव की पुत्री तथा उनकी माता का नाम हेमा (अप्सरा) था, जो अति रूपवती व कुशल नर्तकी थी। धर्मपरायण, पतिव्रता, सच्चरित्र आदि गुणों के कारण मंदोदरी का नाम पंच कन्याओं (अहिल्या, द्रौपदी, कुन्ती, तारा, मंदोदरी) में आता है। वाल्मीकि ने ऋषि वेदवती की कथा में बतलाया कि वेदवती ही किसी कमल सरोवर में कमलिनी के रूप में परिणत हो गयी। उसे लेकर रावण ने अपनी स्त्री मंदोदरी को भेंट किया और वह पुनः कन्या के रूप में प्रकट हुई। ज्योतिषियों ने इस कन्या को रावण–वंश विनाशक बतलाया। उसे रावण के दूतों ने ले जाकर जनक की राज सीमा के अन्दर फेंक दिया। उसी कन्या को जनक ने खेत में पाया।

दूसरी कथा अद्‌भुत रामायण में कही है। इसके अनुसार रावण ने वैज्ञानिक ऋषि गृत्समद् से एक घड़ा लिया था, उस घड़े में कर के रूप में रुधिर इकट्‌ठा कर भर दिया, वह आज का ब्लड बैंक जैसा था, उस रुधिर भरे कुम्भ को रावण ने मंदोदरी से छिपाकर रख दिया तथा उसको यह बताया कि घड़े में विष भरा हुआ है। इसके पश्चात् रावण दूर चला गया, महीनों लंका नहीं आया। लम्बे वियोग की विरहाग्नि के कारण, मंदोदरी ने उस घड़े के विष को पीकर आत्महत्या करना

उचित समझा, किन्तु उस विषपान का परिणाम विपरीत ही हुआ। मंदोदरी मरने के बजाय गर्भवती हो गयी। रावण की अनुपस्थिति में गर्भधारण करने से मंदोदरी चिंतित हुई। उसने अपनी लज्जा छिपाने के लिए वायुयान द्वारा जनकराज के राज्य में जाकर बंजर भूमि में प्रसव किया। प्रसव पुत्री को एक पात्र में रखकर चली गई। इसी कन्या को जनक ने पाया। इस कथा का विस्तृत वर्णन नगीना सिंह ने अपनी पुस्तक ''अयोध्या का राजवंश'' में किया है।

ऐसी ही एक कथा आनंद रामायण तथा स्कन्द पुराण में है, जिसके अनुसार रावण ने कहीं एक रत्न पाया और रत्न को मंदोदरी को दिया। यही रत्न कन्या के रूप में परिवर्तित हो गया। उस कन्या के द्वारा राक्षस वंश के नाश की सम्भावना व्यक्त की गई। इससे भयभीत हो रावण ने उसे अन्य राज्य में फेंकवा दिया। इसे राजा सीरध्वज जनक ने पाया। विविध ग्रन्थों में सीता की जन्म कथा विविध प्रकार से लिखी गई है, पर सीता जी की वास्तविक माता मंदोदरी होने की सम्भावना बताई जाती है। सीताजी की खोज के समय श्रीराम ने सीता जी का रूप वर्णन सुनाया था। लंका जाकर हनुमान जी रावण के अन्तःपुर में सोई हुई मंदोदरी को सीता समझ कर भ्रमित हो गए थे। देखिए, वाल्मीकि रामायण (5/10/53)। माता (मंदोदरी) एवं पुत्री (सीता) के रूप में काफी समानता थी। सीता नाम हल के फाल द्वारा खेत में प्राप्त होने से पड़ा। जनक ने सीता को पुत्री रूप में स्वीकारा, इसलिए वह जनकनंदिनी के रूप में विख्यात हुई। राजा जनक मिथिला वासी थे, इसलिए उन्हें मिथिलेश कुमारी भी कहा जाता है। राजा जनक की उपाधि विदेह की थी, इससे वैदेही भी कहलाईं। सीता की प्राप्ति प्रत्यक्षतः पृथ्वी से हुई थी न तो मंदोदरी द्वारा सीता को किसी ने प्रसवित होते देखा, न गाड़ते समय ही किसी ने देखा, इसलिए सीता को अयोनिजा भी कहा जाता है। उनका नाम पृथ्वी–पुत्री भी उचित ही है। कहा जाता है–

खास कंचन घड़ा से चमकती हुई, जबकि पैदा जनकनन्दिनी हो गई।

सीताजी का सौन्दर्य

साहित्यकारों ने सीताजी का सौन्दर्य वर्णन अनेक प्रकार से किया है। गोस्वामी तुलसीदास को तो सीता सौन्दर्य की तुलना के लिए कोई उपमा ही नहीं मिली, इसलिए उन्होंने लिखा–

सब उपमा कबि रहे जुठारी। केहिं पटतरौं बिदेहकुमारी।। (1/230/8)

साहित्य में 'कामदेव' की स्त्री रति को आदर्श सुन्दरी माना गया है। सीता के दैवीय सौन्दर्य की उपमा सांसारिक नारियों से नहीं दी जा सकती है। श्रीरामचरितमानस में धनुष यज्ञ के समय सीताजी के आगमन पर उनकी सुंदरता का वर्णन करते हुए गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं–

सिय सोभा नहिं जाइ बखानी । जगदंबिका रूप गुन खानी।।
उपमा सकल मोहि लघु लागीं । प्राकृत नारि अंग अनुरागीं।।
सिय बरनिअ तेइ उपमा देई । कुकबि कहाइ अजसु को लेई।।

जौं पटतरिअ तीय सम सीया। जग असि जुबति कहाँ कमनीया।। (1/247/1–4)

सीताजी का स्वभाव

सीता सरल स्वभाव वाली सहिष्णु तथा मधुर भाषिणी थीं। सीता निर्भीक स्वभाव की थीं, रावण के प्रति सीता का व्यवहार घृणा, उपेक्षा एवं तिरस्कार का था। मंदोदरी भी रावण के आचरण से दुखी थी। मंदोदरी की अभिलाषा थी कि रावण सीता को पुत्री समझे। पतिव्रता नारी सीता हरण कर वह क्षुब्ध थी 'विनाश काले विपरीत बुद्धि' इसका परिणाम रावण वंश के नाश के रूप में आया। सीता जी रावण को कटुवाणी तथा व्यंग्य युक्त मार्मिक बातें कहने से नहीं चूकीं। वन गमन के समय सीता का श्रीराम के साथ जाना उनका दृढ़ निश्चय था। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि यदि श्रीराम जी उन्हें साथ नहीं ले जाएँगे तो फिर उनके प्राण ही उनके साथ चल देंगे। उस समय वे इस प्रकार सोच रही थीं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

चलन चहत बन जीवन नाथू। केहि सुकृती सन होइहि साथू।।
की तनु प्रान कि केवल प्राना। बिधि करतबु कछु जाइ न जाना।। (2/58/3–4)

श्रीराम जी उनके इस निश्चय को समझ गए और उन्होंने सीता जी को साथ चलने की अनुमति दे दी। लक्ष्मण को भी एक बार सीता जी की कटुवाणी सुननी पड़ी, क्योंकि वे मोहवश श्रीराम जी को विपत्ति में समझ रही थीं और लक्ष्मण जी उन्हें ईश्वर का अवतार बताकर जाने से मना कर रहे थे।

मरम बचन जब सीता बोला। हरि प्रेरित लछिमन मन डोला। (3/28/5)

उदार चरिता सीता

रावण की मृत्यु के बाद हनुमानजी ने सीताजी के पास जाकर जानना चाहा कि वे दासियाँ कहाँ हैं, जो आपको कष्ट देती थीं? हनुमान की इच्छा उन्हें दण्ड देने की थी। सीताजी ने उनको समझाया कि दोषी तो आदेश देना वाला होता है, जो मारा जा चुका है। सीताजी त्रिजटा को माता के समान मानती थीं, हनुमानजी से पुत्रवत व्यवहार करती थीं। कैकेयी के प्रति भी उनका व्यवहार कटु नहीं था।

बहिष्कृता सीता

सीता को जन्मते ही माँ द्वारा त्याग दिया गया, राम से विवाह के बाद राम के साथ वन जाना पड़ा। जंगल में वह रावण द्वारा अपहृत हुईं। श्रीराम के विछोह का कष्ट सहना पड़ा। अशोक वाटिका में अपार कष्ट झेलना पड़ा। अग्नि परीक्षा भी देनी पड़ी फिर भी अयोध्या आगमन के बाद सीता के चरित्र की शुद्धता के विषय में जन समुदाय को शंका उत्पन्न हुई। परिणामस्वरूप श्रीराम ने सीता जी को जंगल में छोड़ने के लिए लक्ष्मण को आदेश दिया। सीताजी उस समय गर्भवती

थीं। ऐसी असहाय अवस्था में सीता का निर्वासन, उनका परित्याग बड़ा कारुणिक था। महर्षि वाल्मीकि ने सीता जी की सहायता की और अपने आश्रम में आश्रय दिया। आश्रम में सीताजी ने दो जुड़वा पुत्रों को जन्म दिया, जो दोनों लव–कुश के नाम से विख्यात हुए।

सीता का भूमि प्रवेश

अश्वमेध यज्ञ के समय श्रीराम ने सीता की स्वर्ण प्रतिमा बनवाई। सीता निर्वासन के पश्चात् उनके विषय में कुछ पता नहीं था। शास्त्रानुसार जीवित व्यक्ति की प्रतिमा नहीं बनवायी जाती। श्रीराम ने स्वयंवर में अपने बाहुबल की परीक्षा देकर सीताजी को प्राप्त किया था। श्रीराम को पता नहीं था कि सीता जनक की वास्तविक नहीं पोष्य पुत्री है। सीताजी के कुल का भी पता नहीं था। स्वर्ण प्रतिमा निर्मित कराकर वैदिक विधि को पूर्ण कराना उचित समझा।

जब लवकुश ने भरी सभा में श्रीराम के चरित्र का गान किया तो श्रीराम के नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने लगे। वहीं सीताजी भी वाल्मीकि के साथ आयी थीं। उन्हें देखकर राम के धैर्य का बाँध टूट गया और श्रीराम ने सीताजी को वहीं गले लगाना चाहा, किन्तु सीता के दुःखों का आवेश इतना तीक्ष्ण था कि वह उनके लिए असह्य हो उठा और वे वहीं बेसुध हो पछाड़ खाकर गिर पड़ीं। महर्षि वाल्मीकि ने सीता के निष्पाप होने की बात कहते हुए यहाँ तक कह डाला कि–

बहुवर्षसहस्राणि तपश्चर्या मया कृता। नोपाश्नीयां फलं तस्या दुष्टेयं यदि मैथिली।।
इयं शुद्धसमाचारा अपापा पतिदेवता। लोकापवादभीतस्य प्रत्ययं तव दास्यति।।

(वाल्मीकीय रामायण–7 / 96 / 20 एवं 23)

अर्थात् मैंने हजारों वर्षों तक तप किया है, उसकी शपथ करके कहता हूँ कि यदि सीता दुष्ट आचरण वाली हो, तो उन सब तपों का फल मुझे न मिले। यह सीता पति को ही देवता मानने वाली निष्पाप तथा पवित्र और सुन्दर आचरण से युक्त है। तुम लोकापवाद से डरते हो, अतः यह तुम्हें विश्वास दिलाएगी। उसी समय सीताजी ने पृथ्वी माता का स्मरण किया और भयंकर ध्वनि के साथ पृथ्वी फटी जिसमें सीता जी समा गईं।

भारतीय नारी के आदर्शों की प्रतिमूर्ति, अनन्य सुन्दरी, पतिव्रता, कर्तव्यपरायणा, सुशीला, सौम्या, धैर्यवान, साहसी, मिथिला की राजदुलारी, श्रीराम की अर्धांगिनी अनेक अलौकिक गुणों से युक्त सीता जी देवी के रूप में घर–घर में पूजी जाती हैं। श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में गोस्वामी तुलसीदास ने उनकी वंदना इस प्रकार से की–

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।
ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।। (1 / 18 / 7–8)

इन्द्रियों के संयम से सूक्ष्म शक्तियाँ विकसित होती हैं।

भक्ति बिना रे! ज्ञान न शोभा

जगदीश प्रसाद शर्मा 'सरल', (साहित्याचार्य) फोन–9311384212

सानुज सीय समेत प्रभु राजत परन कुटीर।
भगति ग्यानु बैराग्य जनु सोहत धरें सरीर।। (2/321)

(चित्रकूट पर पर्णकुटी में अपने छोटे भाई लक्ष्मण और जनकनन्दिनी सीता के सहित भगवान श्रीराम ऐसे सुशोभित हो रहे हैं; मानो भक्ति, ज्ञान और वैराग्य शरीर धारण कर सुशोभित हो रहे हैं।)

इस दोहे ने अचानक मेरे मन को अपने भाव की ओर खींचा और इस पर विचार करने के लिए प्रेरित किया। मेरे शान्त मन में ऐसी हलचल हुयी, जैसे शान्त झील को किसी मदमस्त हाथी ने झकझोर दिया हो। परिणामस्वरूप मेरी मन–झील में जो उत्ताल तरंगें उठीं, उन्हीं को कलमबद्ध कर मैं आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ–

उक्त दोहे की प्रथम पंक्ति में 'सीय' शब्द 'सानुज' (लक्ष्मण) और 'प्रभु' (श्रीराम) शब्दों के बीच में है, किन्तु दूसरी पंक्ति में शब्द परिवर्तन किया है यानी दूसरी पंक्ति में 'भगति' (सीता) शब्द को 'ग्यानु' (श्रीराम) और 'बैराग्य' (लक्ष्मण) शब्दों से पहले स्थान देकर सीताजी की प्रमुखता दर्शायी है। इससे पूर्व भी तुलसीदासजी सीताजी की प्रमुखता दर्शा चुके हैं–जब चित्रकूट पर्वत पर पहुँचने से पूर्व राम, सीता, लक्ष्मण तीनों वन–पथ पर चल रहे थे, तब उस झाँकी का शब्द–चित्र खींचते हुए तुलसीदास ने लिखा है–

उभय बीच सिय सोहति कैसें। ब्रह्म जीव बिच माया जैसें।। (2/123/2)

(श्रीराम और लक्ष्मण के बीच में सीताजी कैसे शोभित हो रही हैं, जैसे ब्रह्म और जीव के बीच में माया सुशोभित हो।)

इस चौपाई में भी तुलसीदासजी ने स्पष्ट रूप से माया रूपा सीताजी की ही प्रमुखता दिखलायी है, क्योंकि वेदान्त के अनुसार माया के बिना निर्गुण निराकार ब्रह्म कुछ भी नहीं कर सकता, क्योंकि वह तो निष्क्रिय मुर्दे की भाँति पड़ा रहता है। उसकी प्रेरणा से सृष्टि, पालन, संहार का कार्य तो माया ही करती है। दूसरे जीव को ब्रह्म से पृथक करने वाली माया ही है और वही करुणा कर जीव को ब्रह्म से मिलाती है।

अध्यात्म रामायण में भगवान श्रीराम के कहने पर सीताजी हनुमान को तत्व का उपदेश करती हुयी कहती हैं, ''वत्स हनुमान! राम को तो सर्वथा निर्गुण, निर्मल, निर्विकार, निरंजन, कूटस्थ और

साक्षात् अद्वितीय सच्चिदानंदघन परब्रह्म समझो और मुझे संसार की उत्पत्ति, पालन और संहार करने वाली मूल प्रकृति जानो। श्रीराम की सन्निधि में जगत की रचना, पालन, संहार और रावण जैसे असुरों का संहारादि कार्य मैं ही करती हूँ, तो भी मेरे द्वारा किये कार्यों को बुद्धिहीन लोग श्रीराम में आरोपित कर लेते हैं अर्थात् मेरे द्वारा किये कार्यों को उनके द्वारा किये कार्य मान लेते हैं।''

श्रीरामचरितमानस का मुख्य आधार तो भगवान शिव द्वारा रचित अध्यात्म रामायण ही है, तभी तो सीता माता के इस कथन के अनुसार संत शिरोमणि तुलसीदासजी ने अपने महाकाव्य श्रीरामचरितमानस के बालकांड के मंगलाचरण में भगवती सीता को संसार की उत्पत्ति, पालन, संहार करने वाली और जीवों का कल्याण करने वाली बतलाया है–

उद्भवस्थितिसंहारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम्।। (1/मंगलाचरण/5)

(सृष्टि, पालन और संहार करने वाली; क्लेशों (दुःखों) को हरने वाली तथा सम्पूर्ण कल्याणों को करने वाली अर्थात् जीवों को मोक्ष दिलाने वाली भगवान राम की प्राणप्रिया सीता को मैं नमस्कार करता हूँ।)

मानसकार ने प्रथम कांड के मंगलाचरण में श्रीराम की स्तुति करने से पूर्व सीताजी की स्तुति कर भगवती सीता की प्रमुखता को ही दर्शाया है।

अद्भुत रामायण में तो सीताजी की महिमा का जैसा वर्णन किया गया है, वैसा अन्य किसी रामायण में नहीं मिलता। इसमें जनकनन्दिनी जानकी सीता को सृष्टि की आदि शक्ति, सर्वोपरि शक्ति बतलाते हुये ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि को सीताजी से ही उत्पन्न बताया गया है। श्रीराम को परब्रह्म और सीताजी को आदिमाया, आदिशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। स्वयं भगवान राम ने सीताजी की सर्वोच्चता स्वीकार कर उनकी भक्ति का मार्ग प्रशस्त किया है। इसकी संक्षिप्त कथा इस प्रकार है–

जब युद्ध में सहस्रबाहु रावण द्वारा श्रीराम अचेत हो जाते हैं, तब उन्हें अचेत देखकर क्रोध में सीताजी की भृकुटियाँ तन जाती हैं। वे महाकाली का रूप धारणकर सेना सहित सहस्रबाहु रावण का वध कर देती हैं। उस अवसर पर सचेत होने पर राम स्वयं भगवती सीता की स्तुति करते हैं, वह स्तुति 'सीता सहस्रनाम' से प्रसिद्ध है।

इसी कथा की ओर संकेत करते हुये तुलसीदासजी सीताजी की महत्ता दर्शाते हुए मानस में लिखते हैं–

बाम भाग सोभति अनुकूला । आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला।।
जासु अंस उपजहिं गुनखानी । अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी।

भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई।। (1/148/2–4)

(सीताजी शोभा की राशि, जगत की मूलकारण रूपा आदिशक्ति हैं। जिनके अंश से गुणों की खान अगणित लक्ष्मी, पार्वती और ब्रह्माणी (त्रिदेवों की शक्तियाँ) उत्पन्न होती हैं तथा जिनकी भौंह के इशारे से ही जगत की रचना हो जाती है, वही भगवान राम की स्वरूपा शक्ति सीताजी भगवान राम के वाम भाग में सुशोभित हैं।)

अब मैं पुनः उसी दोहे की द्वितीय पंक्ति पर लौट कर आता हूँ कि मानसकार ने ज्ञान, वैराग्य से पूर्व 'भगति' शब्द लिखकर सीता के महत्त्व को ही दर्शाया है। इसी भाव की और पुष्टि करते हुए आगे बढ़ते हैं।

सीताजी भक्ति की सजीव मूर्ति हैं। भक्ति का सौंदर्य ही सच्चा सौंदर्य है। भक्ति से बढ़कर और किसी का सौंदर्य हो ही नहीं सकता, तभी तो सीताजी को सौंदर्य–सार सर्वस्व कहा है। भक्ति के अद्‌भुत सौंदर्य के चुम्बकीय आकर्षण से ज्ञान भी आकर्षित हुए बिना नहीं रह सका यानी ज्ञान भी आकर्षित हो गया। उदाहरण के लिए पाठकों को जनकपुर की राजवाटिका में सीता–राम के प्रथम मिलन के दृश्य की ओर लिये चलता हूँ–

विवाह से पूर्व जब लक्ष्मण के साथ ज्ञान स्वरूप श्रीराम जनकपुर की राजवाटिका में गुरु विश्वामित्र की आज्ञा से पुष्प–चयन करने गये, तभी वहाँ गौरी–पूजन के लिये सखियों सहित भक्तिस्वरूपा जनकनन्दिनी सीता आयीं। अभी राम ने सुन्दरी सीता को देखा नहीं था कि सीता के कंगन, करधनी और नूपुरों की मधुर ध्वनि सुनकर ही संयमी राम के संयम के तार झंकार उठे और जब त्रिलोक सुन्दरी सीता को देखा, तब तो राम उन्हें अपलक देखते ही रह गये–

भए बिलोचन चारु अचंचल। (1/230/4)

यदि देहाती भाषा में कहूँ तो सीता के अलौकिक सौंदर्य को देखकर राम की आँखें फटी की फटी ही रह गयीं। जबकि सीताजी ने राम के रूप को कुछ देर देखकर ही अपनी आँखें बंद कर लीं। एक सखी ने हाथ पकड़कर सीता से कहा भी कि तू राजकुमार को देख क्यों नहीं लेती तो सीता ने मन ही मन उत्तर दिया–क्या देखूँ, मुझसे ज्यादा सुन्दर थोड़े ही हैं। सीता के अलौकिक सौंदर्य का लोहा राम को मानना ही पड़ा। सीता की मनमोहक छवि राम के हृदय में समा गयी। वे इतने प्रभावित हुए कि एक कवि की भाँति कविता करने के लिए सीता के सौंदर्य की उपमा देने हेतु उपमा तलाशने लगे। मन ने विचार के समुद्र में गोता लगाया, लेकिन उन्हें सीता के अलौकिक सौंदर्य के सामने समस्त लौकिक उपमान फीके लगे। जब उन्हें सीता के सौंदर्य की टक्कर का कोई उपमान न मिला तो सहसा ही कह उठे–

सुंदरता कहुँ सुंदर करई। (1/230/7)

संसार के चराचरों में जो सौंदर्य है, वह उन्हें सीताजी ने ही तो प्रदान किया है, फिर कोई

लौकिक पदार्थ सीता का उपमान कैसे बन सकता है, अतः सीताजी अनुपमेय हैं, सौंदर्य–सार–सर्वस्व हैं। आखिरकार श्रीराम ने महाराजा जनक का प्रण पूर्ण कर यानी शिव–धनुष तोड़कर सीता का पाणिग्रहण कर ही लिया। कहने का तात्पर्य यह है कि ज्ञान भक्ति के सौंदर्य–पाश में बँध गया। विवाहोपरान्त बारह वर्ष तक अयोध्या के राजमहल में भगवान श्रीराम भगवती सीता के साथ सानन्द रहे।

संसार समरस नहीं है, षडरसमय है, इसलिये सांसारिक जीवों का जीवन भी समरस नहीं है, द्वन्दमय है। दिन–रात की भाँति मानव–जीवन में सुख–दुख का आना स्वाभाविक है। प्रकृति के इसी नियम के अनुसार श्रीराम को अयोध्या का विशाल साम्राज्य त्यागकर वन जाना पड़ा। अचानक वनवास मिलने पर राजभवन के सुख–वैभव से दूर कंटकाकीर्ण दुखद वन में छोटी सी पर्णकुटी में रहना पड़ा। वन में सुखों का अभाव होने पर भी भक्तिमयी सीताजी के साथ रहने से ज्ञानमय राम और वैराग्यमय लक्ष्मण सानन्द रह रहे थे, क्योंकि भक्ति आनंददायिनी है। यह बात स्वयं श्रीराम ने अनुज लक्ष्मण से कही–

सो मम भगति भगत सुखदाई। (3/16/2)

भक्ति भक्तों को सुख देने वाली ही नहीं, अपितु अनुपम तथा सुख की जड़ है–

भगति तात अनुपम सुखमूला। (3/16/4)

भगवान वेदव्यास द्वारा रचित श्रीमद्भागवत पुराण में तो ज्ञान–वैराग्य को भक्ति के पुत्र बतलाया है–

अहं भक्तिरिति ख्याता इमौ मे तनयौ मतौ।
ज्ञानवैराग्यनामानौ कालयोगेन जर्जरौ।। (श्रीमद्भागवत माहात्म्य–45)

(मेरा नाम भक्ति है, ये ज्ञान और वैराग्य मेरे पुत्र हैं। समय के फेर से (कलियुग के प्रभाव से) ये ऐसे जर्जर हो गये हैं।)

निगमागम–पुराणों के कट्टर समर्थक संत तुलसीदास भी यही बात कहते हैं–भक्ति स्वतंत्र है, उसे दूसरे साधनों के सहारे की आवश्यकता नहीं है। ज्ञान–वैराग्य आदि तो भक्ति के अधीन हैं, क्योंकि ज्ञान–वैराग्य भक्ति के बालक हैं–

सो सुतंत्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्याना।। (3/16/3)

माता की छत्र–छाया में पुत्रों का सुखी रहना स्वाभाविक है, किन्तु मातृविहीन बच्चे की कैसी दुर्दशा होती है, यह तो वही जानता है, जिस पर बीतती है। भुक्तभोगी तुलसीदासजी ने अपनी दयनीय बाल्यावस्था का बड़ा ही कारुणिक वर्णन अपने ग्रंथों (विनयपत्रिका, कवितावली आदि) में जगह–जगह किया है। उसी की एक झलक अपने शब्दों में प्रस्तुत है–

जन्म लेते ही न जिसकी माँ रही बन गया मधुमास पतझर की कथा।
अंक ममता की न जिसको पल मिली आँक पाया कौन रे उसकी व्यथा।।
झेलता थप्पड़ समय के हा! विवश गरल-घुट्टी घूँट जो भरता रहा।
मृत्यु की काँटों भरी उस अंक में झेलता पल-पल चुभन पलता रहा।

—सरल

अब पुनः उसी विषय पर पाठकों का ध्यान आकृष्ट कराता हूँ। सुखदायिनी भक्ति से केवल ज्ञान, वैराग्य और भक्त ही सुखी हों, यही नहीं। भक्ति के रहने पर तो मनुष्य मात्र ही क्या, जड़—चेतन तक सुखी रहते हैं। उदाहरण स्वरूप जब चित्रकूट से जाने के बाद श्रीराम दंडक वन में गोदावरी नदी के किनारे पंचवटी पर पर्णकुटी बनाकर लक्ष्मण—सीता सहित रहने लगे, तब वहाँ के मुनि, पशु, पक्षी भी सानंद रहने लगे और वन, पहाड़, नदी, सरोवर तक प्रफुल्ल हो उठे।

यहाँ कुछ तार्किक व्यक्ति निम्नलिखित चौपाई के आधार पर यह तर्क दे सकते हैं कि दंडकवन के वन्य जीव और वन—पहाड़ आदि तो श्रीराम के रहने से प्रफुल्ल हुये थे—

खग मृग बृंद अनंदित रहहीं । मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं।।
सो बन बरनि न सक अहिराजा। जहाँ प्रगट रघुबीर बिराजा।। (3 / 14 / 3—4)

यहाँ उन तार्किकों को यह ध्यान दिलाना आवश्यक है कि ज्ञान की शोभा भक्ति से ही होती है। बिना भक्ति के ज्ञान की शोभा नहीं होती—

न शोभते ज्ञानमलं निरंजनम्।

यही बात संत शिरोमणि तुलसीदासजी भी कहते हें—

सोह न राम पेम बिनु ग्यानू। (2 / 277 / 5)

ज्ञानस्वरूप भगवान राम की शोभा भक्तिस्वरूपा भगवती सीता के साथ रहने से ही थी, क्योंकि भक्तिमयी सीताजी का अपहरण होने पर ज्ञानमय राम साधारण मनुष्य की भाँति व्याकुल और दुखी हो गये थे—

आश्रम देखि जानकी हीना। भए बिकल जस प्राकृत दीना।। (3 / 30 / 6)

मंगलमयी और सुखदायिनी भक्ति की खोज में ज्ञान—वैराग्य कितने व्याकुल होकर वन—वन भटकते फिरे थे। उनकी यह व्यथा—कथा किसी से छुपी नहीं है। इतना ही नहीं भक्ति के विरह में तो ज्ञान स्वरूप राम पागल ही हो गए थे। फूट—फूट कर रोने लगे थे और विरहाकुल पागल मनुष्य की भाँति पशु—पक्षियों तक से पूछते फिरे—क्या तुमने मेरी मृगलोचनी सीता को देखा है?

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी।। (3 / 30 / 9)

उन तार्किकों को इस प्रसंग से भली भाँति समझ में आ गया होगा कि भक्ति के बिना ज्ञान

की अशोभा ही नहीं, कैसी दुर्दशा होती है।

भक्ति के विरह में ज्ञान की व्याकुलता का आलम अभी थमा नहीं था, अपितु उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। वर्षा काल में प्रवर्षण पर्वत पर निवास के दिनों विरही ज्ञान की भयाकुलता की एक झलक देखिये–

आकाश में छाये घनघोर बादलों की घोर गर्जना सुनकर भक्ति के पास न होने से विरही ज्ञान भयभीत होकर थर–थर काँपता है–

घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया हीन डरपत मन मोरा॥ (4/14/1)

इतना ही नहीं, आकाश में काले–काले घने बादलों के छा जाने से दिन में ही अँधेरी रात का भान होने से प्रकाशमय ज्ञान (राम) की शोभा तिरोहित हो गयी।

भगवान शिव तो इससे भी दो कदम आगे बढ़कर कहते हैं–बिना भक्ति के जीवित मनुष्य शव (मुर्दा) के समान है–

जिन्ह हरिभगति हृदयँ नहिं आनी। जीवत सव समान तेइ प्रानी॥ (1/113/5)

भक्ति स्वरूपा सीता का अन्वेषण करने गये भगवान शिव के अवतार भक्तप्रवर हनुमानजी ने सीता माता की खोज करते समय अनुपम स्वर्णमयी लंका में भक्तिमयी सीता के दिखायी न देने पर लंका को प्राणहीन (मृत देह यानी शव) समझ कर ही लंका–दहन किया था, क्योंकि प्राणहीन देह का अग्नि–संस्कार करना आवश्यक है। जिस अशोक वाटिका में भक्तिस्वरूप सीता थीं, वह वाटिका प्राणवान थी, इसलिए अशोक वाटिका को भस्म नहीं किया। भक्त विभीषण के हृदय में भी भक्ति विराजमान थी, अतः विभीषण का घर भी भस्म नहीं किया था।

भगवान श्रीकृष्ण के अंतरंग सखा उद्धवजी परम ज्ञानी थे, परन्तु वे ज्ञान के सामने प्रेम (भक्ति) को तुच्छ समझते थे, इसलिये उनमें भक्ति का अभाव था। बिना भक्ति के ज्ञान की शोभा नहीं होती, अतः भक्ति के अभाव की पूर्ति हेतु ही भगवान श्रीकृष्ण ने अपने अंतरंग सखा ज्ञानी उद्धव को भक्ति की महिमा का बोध कराने के लिये कृष्ण–वियोग में दुखी गोपियों को समझाने के बहाने वृन्दावन भेजा। उद्धव ने ज्ञानोपदेश से गोपियों को समझाने का भरसक प्रयास किया, किन्तु प्रेममयी गोपियों की अकाट्य तर्कों के आगे उद्धव के ज्ञान की एक न चली। ज्ञानी उद्धव को प्रेम (भक्ति) की महिमा का भान हो गया। वे भक्ति भाव से कृष्ण–प्रेम में रँगी प्रेममयी गोपियों के चरणों में नतमस्तक हो गये। उनके हृदय में भक्ति की कल्लोलिनी कल–कल करने लगी।

अब मैं पुनः मुख्य विषय पर आता हूँ। भगवान श्रीराम ने किष्किंधा नगरी के निकट प्रवर्षण पर्वत पर रह कर जैसे–तैसे वर्षा काल बिताया। शरद ऋतु का आगमन होते ही भक्तिमयी सीता के बिना संतप्त, परम व्याकुल और अशांत ज्ञानमय राम ने सुखदायिनी, शान्तिस्वरूपा भक्ति को

पाने के लिए अपने मित्र वानरराज सुग्रीव के सहयोग से वन में वनचर वानर–भालुओं को एकत्र कर उन्हें भक्ति की खोज में चारों दिशाओं में भेजा। भक्ति की खोज तो कोई भक्त ही कर सकता है सो भक्तप्रवर हनुमान भक्ति का पता लगाकर लाये। फिर क्या, राम विशाल वानर सेना को लेकर, अपार दुस्तर सागर पर पुल बनवा कर, दुर्भेद्य लंका पर चढ़ाई कर त्रिलोकविजयी रावण का सकुल संहार कर भक्तिमयी सीता को प्राप्त करते हैं। पैदल वन–वन भटकने वाले राम सुखदायिनी भक्ति का साथ पाकर तो वायुयान में बैठकर सानंद अयोध्या लौटे और अयोध्या के राजसिंहासन पर विराजमान हुए।

अयोध्या के सिंहासन पर बैठे राजा राम को कुछ ही समय हुआ था कि अपनी प्राणप्रिया निष्कलंक सीता के पावन चरित्र पर एक व्यक्ति के द्वारा कलंक लगाये जाने पर समाज के भय से भयभीत होकर राजधर्म की बेड़ियों से जकड़े धर्मधुरंधर, प्रजावत्सल, प्रजामनोरंजन न्यायी राजा राम को राजा का कर्तव्य निभाने के लिए न चाहते हुए भी निष्पाप, निष्कलंक, गंगाजल सी पावन भक्तिमयी सीता का परित्याग करना पड़ा।

भक्तिमयी सीता के दूर चले जाने पर तो ज्ञानमय राजा राम का राजसी सुख–चैन भक्ति के साथ ही चला गया। परिणामस्वरूप बिना भक्ति के ज्ञान को पुनः आजीवन विरह–विष पीना पड़ा अर्थात् बिना भक्ति के ज्ञान पुनः दुखी हो गया और सभी राजसी सुख–सुविधायें होते हुए भी अपने नृप–जीवन के 11000 वर्ष विरह–विष पीते हुए दुख में ही बिताये।

इस लेख का सार यही है कि बिना भक्ति के ज्ञान की शोभा नहीं होती और न ज्ञान सुखी ही रह पाता है। फिर हम जैसे पापात्मा अज्ञानी किस खेत की मूली हैं। यदि हम जीवन में सुख चाहते हैं तो हमें भक्ति के चरणों में नतमस्तक होना ही पड़ेगा। भगवान की भक्ति किये बिना हमारे सुख का और कोई सरल साधन भी नहीं है। सुखदायिनी भक्तिस्वरूपा सीता माता के चरण–कमलों में इस अकिंचन सरल का कोटिशः नमन।

यह धरती है यहाँ राम भी रोये वन-वन भटके।
जीवन में लगते रहते हैं हर प्राणी को झटके।।
और सहा है यह भी सह लो सहने में ही सुख है।
अपना सुख देकर भी ले लो पर का जितना दुख है।।
–सरल

अभिमान किसी को ऊपर नहीं उठने देता।
स्वाभिमान किसी को नीचे नहीं झुकने देता।।

भगवद्-विश्वास

साभार: कल्याण-अप्रैल 2020

विरक्त सन्त, परम पूज्य पं. श्रीशिवरामकिंकर योगत्रयानन्दजी महाराज शास्त्रों के उद्भट विद्वान थे। उनका पाण्डित्य अप्रतिम था। वे आत्मप्रकाशन से सर्वथा दूर रहते थे। एक समय की बात है, अर्थाभाव के कारण पं. श्रीशिवरामकिंकरजी के घर तीन दिनों तक चूल्हा नहीं जला। सारा परिवार भूख से व्याकुल हो रहा था। इस पर भी अध्यापन कार्य बन्द नहीं हुआ और विद्यार्थी अध्ययन के लिए आते रहे। पं. श्रीशिवरामकिंकरजी भी आनन्द और उत्साह के साथ विद्यार्थियों को पढ़ाते, शास्त्रों की विस्तृत व्याख्या करते और ज्ञान-चर्चा में मस्त रहते। किसी को जरा भी भान न हुआ कि पण्डितजी परिवार सहित तीन दिन से निराहार हैं, क्योंकि उनके चेहरे पर विषाद और उदासीनता की छाया तक न थी। आज तीसरा दिन था। सदा की भाँति आज भी पण्डित जी विद्यार्थियों को पढ़ाने में मस्त हो गये। उन्हीं छात्रों में नरेन्द्र दत्त भी थे। इसी समय डाकिया एक तार लेकर आया, जो पण्डित जी के नाम से था। पण्डित जी ने तार को खोला और उसे पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते उनकी आँखों से अश्रुधारा बह चली। वे बड़ी देर तक उस तार को मस्तक से लगाये रहे। यह अनोखा दृश्य देखकर नरेन्द्र दत्त ने कौतूहलपूर्वक पूछा-'बाबा! सामान्य कारणों से हिमालय नहीं हिला करता। आज मैं आपकी विचित्र दशा देख रहा हूँ, जो आपकी आँखों से अश्रुधारा बह रही है और आप नित्य प्रफुल्लित रहने वाले धीर पुरुष होते हुए भी शोकाकुल दिखायी दे रहे हैं, मुझे आश्चर्य है। आपको इसका रहस्य समझाना ही होगा'।

पण्डितजी ने तार नरेन्द्र दत्त के हाथ में दे दिया। वह काशी से आया था। किसी अपरिचित शिवभक्त जमींदार ने दस रुपये तार से भेजे थे और लिखा कि 'हमारे घर में शिवमूर्ति स्थापित है। रात्रि में शिवजी ने मुझसे कहा कि मैं तीन दिन से भूखा हूँ। मैंने तुम्हारी पूजा ग्रहण नहीं की है, क्योंकि मेरा परम भक्त पं. श्रीशिवरामकिंकर बराहनगर में रहता है, वह तीन दिन से उपवास कर रहा है। उसके पास अन्नादि खरीदने के लिये रुपये नहीं हैं। तुम उसको तार से शीघ्र कुछ रुपये भेज दो। उसके भोजन करने के बाद ही मैं भोजन करूँगा, अतः मैं भगवान शिवजी की आज्ञा से रुपये भेज रहा हूँ।' इस अद्भुत घटना को पढ़कर नरेन्द्र दत्त को महान आश्चर्य हुआ। शिवजी की कृपा का अद्भुत चमत्कार देखकर उनकी आँखों से भी प्रेम-नीर प्रवाहित होने लगा। वे रुँधे हुए गले से बोले-'बाबा! मैं भी तो आपका ही शिष्य हूँ। आपने जब तीन दिन से कुछ भी भोजन नहीं किया तो मुझे क्यों नहीं बतलाया। मैं आपका सब प्रबन्ध कर देता। आप भूखे पेट पढ़ाते रहे और मैं पढ़ता रहा, यह तो महान अपराध हो गया। इस अपराध का तो मुझे बड़ा भारी दण्ड मिलना चाहिये। मैं आपका दास हूँ, आपकी सन्तान हूँ एवं मुझ पर आपका अहैतुक स्नेह है, फिर आपने मुझसे यह बात गुप्त क्यों रखी'? ऐसा कहते हुए वे गुरुजी के चरणों पर गिर पड़े और फूट-फूटकर रोने लगे। नरेन्द्र दत्त के प्रेम को देखकर पं. श्रीशिवरामकिंकरजी गद्गद हो गये। उन्होंने नरेन्द्र दत्त को गले लगाकर कहा-'नरेन्द्र! घबराओ मत। जब हमारे पिता विद्यमान हैं, तब हम अपने पुत्रों से क्यों याचना करें? हमारे परम पिता, परम सुहृद्, सर्वज्ञ, भगवान शंकर को हमारी सबसे अधिक चिन्ता है। हम लोगों को भोले बालक की तरह सदैव उनके आश्रित होकर निर्भय एवं निश्चिन्त रहना चाहिये। **जब वे सर्वज्ञ सदैव सर्वत्र विद्यमान हैं, तब फिर हम अपने अभाव की बात और किससे कहें? उनके रहते हुए किसी दूसरे से याचना करना उनका अपमान करना है।'।**

युद्ध या शान्ति : श्रीरामचरितमानस एवं गीता का संदेश

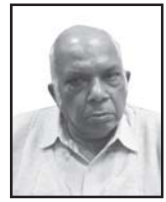

डॉ. हृदय नारायण उपाध्याय, झाँसी, फोन–7860039496

गीता एवं श्रीरामचरितमानस उच्चकोटि के ग्रन्थ हैं। गीता भगवान की वाणी है तथा मानस श्री भगवान शंकर द्वारा कही गयी है, पर तुलसीदासजी ने लिखी है। बहुत अल्पज्ञ कहते हैं कि गीता तो ऐसा लगता है कि युद्ध कराने या किसी काम को कराने के लिए कही गयी है, पर वास्तव में गीता मानव कल्याण के लिए ही है। अर्जुन जब भगवान श्रीकृष्ण से युद्ध के लिए मना करता है, तब उसे गीता का उपदेश किया गया। भगवान ने अर्जुन के साथ ही गीता के उपदेश से समस्त मानव जाति के कल्याण का मार्ग–प्रशस्त किया है। वास्तव में गीता न किसी सम्प्रदाय, न किसी धर्म विशेष, न किसी जाति और न किसी देश की पुस्तक है, अपितु यह तो मानव–कल्याण के लिए है जिससे कोई भी लाभ प्राप्त कर सकता है। गीता कहती है कि प्रकृति या प्रकृतिजन्य पदार्थों में परिवर्तनशीलता है। पर उस परम परमार्थ तत्व में, जो सत्य है, कोई परिवर्तनशीलता नहीं है। मनुष्य के अंतःकरण में या जीव मात्र के अन्दर वही विराजता है जो परम सत्य है। मनुष्य सदैव परिवर्तनशील प्रकृति या उसके पदार्थों में ही अटक जाता है तथा उस अपरिवर्तनशील से (सत्य) मिल ही नहीं पाता है, अतएव उसकी जीवन–यात्रा अधूरी रह जाती है, क्योंकि जीवन का लक्ष्य तो सत्य को पाना है। सत्य के साक्षात्कार के कई साधन पुराणों–शास्त्रों में बताये हैं और वही गीता में भी वर्णित हैं, जिन्हें ज्ञान, भक्ति एवं कर्म योग के नाम से हम लोग जानते हैं। ये साधन हैं, मार्ग हैं उस परम तत्व के पास पहुँचने के। परमात्मा को प्राप्त करना ही योग है यही गीता में कहा गया है।

परमात्मा से, सत्य से या उस अपरिवर्तनशील तत्व से मिलने के लिए कही गई गीता के अनुसार व्यावहारिकता में थोड़ा परिवर्तन लाने से सत्य का दिग्दर्शन हो सकता है। बाधा कहाँ है? वास्तव में यह राग–द्वेष ही एक सबसे बड़ा अवरोध है जो सत्य से मिलन नहीं होने देता तथा परिवर्तनशील से चट मिला देता है। इसमें यात्रा अधूरी रह जाती है। श्रीरामचरितमानस में भी गीता के संदेश का अवलोकन कीजिए कि किस तरह बड़े–बड़े लोग सत्य के साक्षात्कार से भटक जाते हैं और फिर रास्ते पर भी आ जाते हैं।

महाभारत में अर्जुन जिस मानसिक उलझन से व्याकुल हो जाता है, उससे मुक्त करने के लिए भले ही श्रीकृष्ण जी **''क्लैव्यं मा स्म गमः पार्थ''** (गीता 2/3) कहते हों, पर इसके लिए

भी अर्जुन के प्रति भगवान की सहृदयता कार्य कर रही थी। अर्जुन के प्रश्नों के गीता में जो उत्तर दिए गए क्या उसमें अर्जुन की आशंकाओं का कोई वास्तविक समाधान है? इस प्रकार के प्रश्न महाभारत एवं गीता के प्रबुद्ध अध्येताओं के मन में उठते हैं जिस पर श्रीरामचरितमानस के सन्दर्भ में भी अनेक रूपों से विचार किया गया है।

मानस में भी ऐसा ही प्रसंग आया है, जिसमें भगवान राम के द्वारा एक ऐसे व्यक्ति को युद्ध के लिए प्रेरित किया जाता है जो युद्ध की कोई इच्छा नहीं रखता है। वह सुग्रीव है तथा राम का सखा है। अर्जुन को भी ऐसे समय में ही युद्ध के प्रति वैराग्य जाग्रत होता है, जहाँ दोनों ओर की सेनाएँ आमने–सामने हैं। सुग्रीव के वैराग्य का भी बहुत कुछ वैसा ही समय है। सुग्रीव की दुख भरी गाथा सुनकर भगवान राम ने बालि–वध की प्रतिज्ञा कर ली। उस समय तक सुग्रीव बालि–वध के लिए बहुत उत्सुक थे, यहाँ तक कि भगवान राम की परीक्षा भी ले ली कि ये अतुलित बलशाली हैं बालि का वध अवश्य करेंगे। इसके तत्काल बाद उनकी वाणी से ज्ञान, वैराग्य और भक्ति के उच्च कोटि के सिद्धान्त फूट पड़ते हैं। यहाँ तो लगता है कि वे अर्जुन से भी एक कदम आगे हैं। अर्जुन धर्म की दुहाई देकर, कुल नाश की आशंका से युद्ध से विरत होना चाहते हैं, पर सुग्रीव तो पूर्ण निष्कामता का प्रतीक हो गया है यथा–

उपजा ग्यान बचन तब बोला । नाथ कृपाँ मन भयउ अलोला।।
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिन राती।।

(4/7/15 तथा 21)

भगवान के दोनों अवतारों पर उपर्युक्त वार्ता का समान प्रभाव पड़ा। अर्जुन की बात पर श्रीकृष्णजी को हँसी आ गयी... ''तमुवाच हृषीकेशः प्रहसीन्निव भारत'' ठीक वैसे ही भगवान राम सुग्रीव की बात पर हँस पड़े यथा–

सुनि बिराग संजुत कपि बानी। बोले बिहँसि रामु धनुपानी।। (4/7/22)

कृष्णजी धर्म रक्षा के लिए अवतरित हुए, फिर भी धर्म संरक्षण को उतना महत्त्व नहीं देते हैं और ज्ञान–वैराग्य के घनीभूत भगवान राम यहाँ भक्ति, ज्ञान–वैराग्य की उपेक्षा कर देते हैं ऐसा आभास होता है, क्योंकि दोनों ही अपने मित्रों को लड़ने की प्रेरणा देते हैं, अतः दोनों बातें अशोभनीय लगती हैं। दोनों प्रसंगों में यथेष्ट साम्य होने पर भी कुछ पार्थक्य है। बालि–सुग्रीव के संघर्ष में कुल क्षय जैसी कोई भयावह बात नहीं थी केवल अधिक से अधिक एक की मृत्यु होती। दूसरी कृष्ण एवं राम की भूमिकाओं में पार्थक्य है। दोनों जगह ईश्वर के दो रूपों का अंतर स्पष्ट है। एक में सुग्रीव नहीं, भगवान बालि–वध करते हैं, सुग्रीव केवल चुनौती देगा। पर महाभारत में अर्जुन स्वयं लड़ेगा तथा कृष्ण तो रथचालक हैं।

वेदांत–दर्शन में तो ब्रह्म केवल द्रष्टा मात्र है। वह अभोक्ता एवं अकर्ता है। भक्ति दर्शन अलग

तरह का है। उसकी दृष्टि में सब कुछ ईश्वर ही करता है।

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।। (1/128/1)

कृष्ण और राम क्रमशः इसी तरह की भूमिका दोनों ग्रंथों में अपनाते हैं। राम द्रष्टा नहीं, पूरी तरह युद्ध करते हैं। यह दर्शी का अधूरापन है। वास्तव में महाभारत के श्रीकृष्ण अकर्ता लगते अवश्य हैं, पर सब कुछ वही करते हैं। महाभारत में सारे योद्धाओं का वध वे स्वयं करते हैं, अर्जुन को विराट रूप में तो यही प्रदर्शित करते हैं। यथा–

''मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्।'' (गीता 11/33) मानस में प्रभु स्वयं सबका वध करते हैं, पर स्व दृष्टि से वे अकर्ता हैं, इसीलिए जब वह अयोध्या पुष्पक विमान से वापस आते हैं तो जानकी जी को वह दृश्य दिखाते हुए कहते हैं कि ''लछिमन इहाँ हत्यो इँद्रजीता'' किन्तु रावण और कुम्भकर्ण के मृत्यु स्थल की ओर संकेत करते हुए कहते हैं–यहाँ रावण एवं कुम्भकर्ण मारे गये। यथा–

कुंभकरन रावन द्वौ भाई। इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई।। (6/119/11)

ऐसा प्रतीत होता है कि इस लीला के माध्यम से ईश्वर ने कर्ता और ब्रह्म के अकर्ता की गाँठ खोल दी, क्योंकि कर्ता और अकर्ता दोनों वही हैं, पर यह हमारी भावना पर आधारित है कि हम उसे किस रूप में देखना चाहते हैं। दोनों प्रसंगों में ईश्वर द्वन्द रहित निर्द्वन्द है, पर सखा और जीव दोनों संशय ग्रस्त हैं। बहिरंग रूप से अर्जुन तथा सुग्रीव की बातें सिद्धान्त वाली एवं युक्तियुक्त लगती हैं। दोनों जगह प्रभु ने स्वीकार भी किया

अशोच्यानन्व शोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासून गतासूंश्च नानुशोचन्ति पंडिताः।। (गीता 2/11)

जो कछु कहेहु सत्य सब सोई। सखा बचन मम मृषा न होई।। (मानस 4/7/23)

फिर भी दोनों मित्रों को युद्ध का आदेश दिया जाता है। अर्जुन को गीता–ज्ञान देना पड़ा एवं भगवान राम को सुग्रीव की भ्रान्ति दूर करने के लिए उसे बालि से पिटवाने का अभिनय करना पड़ा।

दोनों मित्र यह जान चुके हैं कि राम व कृष्ण ईश्वर के रूप हैं। दोनों प्रसंगों में यह अद्भुत साम्य है, इतना होते हुए भी अनजाने में दोनों ईश्वर की अपेक्षा स्वयं को अधिक विवेकी एवं सहृदय मान रहे हैं, क्योंकि अर्जुन भविष्य का भयावह चित्र प्रस्तुत करते हुए यह भूल गया कि सामने सर्वज्ञ हैं। इसी प्रकार सुग्रीव ने सृष्टि का मिथ्यात्व तथा अभेद ज्ञान ज्ञान घन श्रीराम के सामने वर्णन कर भगवान में भेद बुद्धि की कल्पना कर ली। वास्तव में सुग्रीव तथा अर्जुन दोनों ही अपने विरोधाभासी अन्तःकरण से संत्रस्त हैं। यदि दोनों राम–कृष्ण को ईश्वर न माने होते तो

उनका अंतरद्वन्द अटपटा न होता पर ईश्वरत्व की स्वीकृति के साथ दोनों युद्ध से विरति सर्वथा असंगत थी।

दूसरा महत्त्वपूर्ण तथ्य यह कि दोनों के भावोद्‌गार आवेशजन्य थे। उनके पीछे कोई विचार या चिंतन नहीं था। दोनों ने भावना का ऐसा भव्य भवन खड़ा किया, जिसकी नींव थी ही नहीं, जिसका गिरना अवश्यम्भावी था। इसीलिए अवतार द्वय ने अपने मित्रों को उस गिरते हुए भवन से बाहर निकाला तथा इसी कार्य विधि का आश्रय लिया।

सृष्टि रहस्यमयी है जिसमें बहुत कुछ ऐसा है जो कुरूप व दुखद लगता है साथ ही आनंद व सौंदर्य का सृजन भी। उस रचयिता द्वारा की गई इस द्वन्दमयी सृष्टि की क्या आवश्यकता थी इसका समाधान भी बहुत तरह से दिया गया, जिससे कुछ लोग संतुष्ट हो जाते हैं, कुछ नहीं। प्रत्येक दर्शन में सृष्टि तत्व की कोई न कोई मीमांसा प्रस्तुत की गयी है। कुछ लोग ईश्वर को रचयिता न मानकर परमाणु व अणुओं का संयोग वियोग मानते हैं। कोई सृष्टि के पीछे कर्म को मानते हैं। कोई आचार्य इसे माया मात्र स्वीकार करते हैं कि सृष्टि माया का एक स्वप्न है, उसमें अच्छा या बुरा कोई अर्थ नहीं रखता। कोई–कोई इन झमेलों से ऊबकर कह देता है कि कारण की खोज व्यर्थ है, जो दुःख सामने है उसका निराकरण करो। घूम फिर कर बात आत्म संतोष पर आकर रुक जाती है। जिसे आत्म संतोष शब्द नहीं भाता वह सत्य नाम दे देता है तथा यह मानकर संतोष कर लेता है कि मैंने सत्य को पा लिया है।

सृष्टि है और उत्पत्ति, स्थिति व विनाश उसका क्रम है। व्यक्ति पहली दो श्रेणी तो पसंद करता है, उसका आग्रही है, पर विनाश से वह बहुत भयभीत रहता है, यद्यपि विनाश वस्तुतः कुछ नहीं केवल वस्तु और आकृति का परिवर्तन मात्र है। ईश्वर को यह तीनों चिर स्थितियाँ प्रिय हैं तथा उनके लिए इनमें कोई अन्तर नहीं है। ईश्वर पुरातन को तोड़कर रोज नया सृजन करता ही रहता है। उसको यही सब करने में आनन्द का अनुभव होता है, किन्तु जिनका वस्तु या व्यक्ति में राग है उन्हें इसमें रचयिता का बचपना दिखाई देता है।

जो सृजि पालइ हरइ बहोरी। बालकेलि सम बिधि मति भोरी॥ (2/282/2)

कुरुक्षेत्र में भी ईश्वर व जीव की दृष्टि का अंतर दिखाई दे रहा है। अर्जुन विनाश नहीं चाहता, पर ईश्वर को कोई अंतर नहीं है। अर्जुन काँपा जा रहा है कि क्या अनर्थ होने जा रहा है, किन्तु कृष्ण हँस पड़ते हैं जैसे वे कह रहे हों कि तू मेरी आँख से रणक्षेत्र ही नहीं, पूरा ब्रह्माण्ड देख, फिर तेरा यह कंपन व डर चला जाएगा।

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्। (गीता 2/12)

श्रीकृष्ण पूछते हैं अर्जुन वह क्या है जो मिट जायेगा। ये सब मर कर कहाँ जायेंगे? इस

जीवन के पहले हम तुम और ये राजा लोग कहाँ थे? ऐसा ही कुछ प्रश्न तारा से भगवान राम ने किया कि तुम क्यों रो रही हो?।

छिति जल पावक गगन समीरा । पंच रचित अति अधम सरीरा॥
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा । जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा॥

(मानस 4/11/4–5½

श्रीकृष्ण जी को यह ज्ञात था कि अर्जुन की यह क्षणिक भावुकता उसके व समाज के लिए कितनी घातक सिद्ध होगी। कौरव अर्जुन की इस कृपा को कायरता के रूप में ही देखेंगे। ऐसे अस्थिर मस्तिष्क मनुष्य का साथ भी कौन देगा। दुर्योधन की विजय का अर्थ था अन्याय की विजय। यदि एक बार समाज में यह धारणा प्रबल हो जाए कि अन्याय व अत्याचार का कोई प्रतिफल प्राप्त नहीं होता और अधर्म ही विजयी होता है, तब तो यही वृत्ति समाज को अन्याय व अत्याचार की दिशा में ही प्रेरित करेगी एवं पाप व अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष में यदि कोई जाति अथवा देश नष्ट भी हो जाए, तब भी मनुष्य को शाश्वत संघर्ष की प्रेरणा मिलती रहेगी, अतः भगवान कृष्ण की अर्जुन के लिए युद्ध की प्रेरणा सभी प्रकार से उत्तम व सुसंगत थी।

भगवान राम के सामने इससे भिन्न परिस्थितियाँ थीं, किन्तु युद्ध न करने की दृष्टि से अर्जुन और सुग्रीव की मनोवृत्ति में समानता थी, क्योंकि पुराणों में ऐसे बहुत भक्तों के चरित्र हैं जो सुख, संपत्ति, परिवार और बड़ाई के रहते हुए राम चरणों में अनन्यानुरागी रहे हैं। वस्तुतः राम भक्ति से व्यक्ति व वस्तु नहीं, अपितु इन वस्तुओं में ममत्व व आशक्ति बाधक है, इसीलिए प्रभु ने सारे संबंधों से ममत्व समेटकर अपने चरणों में लगाने का आदेश विभीषण को दिया है–

जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृद परिवारा॥
सब कै ममता ताग बटोरी । मम पद मनहि बाँध बरि डोरी॥ (मानस 5/48/4–5)

ममता और आशक्ति का परित्याग किये बिना त्याग व्यक्ति में अहंकार की सृष्टि करता है, भक्ति की नहीं। वास्तव में पहले ममता व आशक्ति का परित्याग हो जाने से, फिर बहिरंग रीति से व्यक्ति और वस्तुओं का त्याग अपने आप हो जाता है। सुग्रीव के अन्तःकरण में ममता और आशक्ति पूरी तरह से हैं, ऐसी स्थिति में सर्वत्याग आत्म प्रवंचना ही है। मिथ्यात्व के ज्ञान का अर्थ व्यवहार की समाप्ति नहीं है। पापी व पुण्यात्मा से समान व्यवहार तो नहीं किया जा सकता। सृष्टि के मिथ्यात्व ज्ञान का सम्बन्ध विचार से है, यह किसी भावात्मक आवेश का फल नहीं हो सकता। सुग्रीव की बात स्वीकृत योग्य नहीं थी। जहाँ भी सद्भाव और आदर्श की एकता है, वहाँ प्रभु भाई बनाने के लिए प्रस्तुत हैं–

तब रघुपति बोले मुसुकाई। तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई॥ (मानस 4/21/7)

भगवान राम का समाज में यही आदर्श प्रस्तुत होता है।

युद्ध या संघर्ष से भागने का अर्थ है सृष्टि को उन लोगों के हाथ सौंपना जो अपनी शक्तियों का दुरुपयोग करते हुए संसार को पराधीन बनाकर अपनी इच्छा के अनुकूल चलायेंगे, अतः अर्जुन व सुग्रीव को दोनों अवतारी द्वारा युद्ध की प्रेरणा दिया जाना धर्मानुकूल है।

गीता में दूसरा आदर्श स्वधर्म का है, जहाँ स्थितप्रज्ञ की कसौटी उसका रूप आंतरिक विवेक है, वहाँ स्वधर्म बाह्य क्रियाकलाप और आंतरिक जीवन का समन्वय प्रस्तुत किया गया है। भगवान कृष्ण अर्जुन के जीवन में स्वधर्म की स्थापना देखना चाहते हैं। उसे युद्ध कर्म में प्रेरित करना चाहते हैं। गीता में सकाम कर्म करने से लेकर निष्काम कर्मयोग तक की क्रमिक और तात्विक व्याख्या की गयी है। पहले भगवान अर्जुन के सामने कर्म का आकर्षक रूप रखते हैं, फिर कहते हैं तुम्हें क्षत्रिय होने के नाते धर्म युद्ध से विचलित नहीं होना चाहिए, अन्यथा तेरे विरोधी कथनीय शब्दों में तेरी निंदा करेंगे। **''हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्''।** (गीता 2/37)

मानव प्रकृति ऐसी है कि समाज के लिए सर्वश्रेष्ठ नियमन की कोई भी व्यवस्था बना लें उसके दुरुपयोग की संभावना तो रहती ही है। सदा से वर्ण व्यवस्था संकीर्ण व अन्यायपूर्ण नहीं रही है। इसमें संस्कारों के वर्गीकरण का भाव विद्यमान था, पर सबसे दुखद पक्ष यह रहा कि चतुर्वर्ण को अति हीन व घृणा का पात्र समझ लिया गया, अतः इसके प्रति आक्रोश भी स्वाभाविक हुआ। वस्तुतः स्व या स्वधर्म कोई जड़ केन्द्रित वस्तु नहीं है, वह देश काल और परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। इस समय अर्जुन का स्वधर्म युद्ध था। थोड़ी देर के लिए आवेश मानव मन में आया करता है और यही अर्जुन के साथ हुआ। अर्जुन को बताने के पहले भी निजधर्म को प्रयोग किया गया है यथा–

प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती।।
सब नर करहिं परस्पर प्रीती । चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।।

(मानस–3/16/6 तथा 7/21/2)

द्वापर में पग पग पर दिखाई देती अंतरद्वन्द की वृत्ति। त्रेता युग में इसका अभाव था। द्वापर युग का व्यक्ति किंकर्तव्यविमूढ़ है। इसका सबसे दुखद दृश्य था द्रौपदी के चीर–हरण में भीष्म, द्रोणाचार्य व कृपाचार्य जैसे महापुरुषों का अन्याय देखते हुए भी मूक दर्शक बना रहना। प्रचलित रूढ़ियों और परम्पराओं से अलग हटकर शास्त्र और विवेक से धर्म के सच्चे स्वरूप के निर्णय का साहस इनमें से किसी में भी नहीं था। इस तरह यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कार्यों को स्वधर्म सिद्ध करने का प्रयास करे तब फिर अधर्म शब्द की आवश्यकता ही क्या है। गोस्वामी जी ने इसीलिए दोहावली में लिखा–

रामायण सिख अनुहरत जग भयो भारत रीति।
तुलसी हठ की को सुने कलि कुचाल पर प्रीति।।

यह महाभारत के प्रति अनास्था नहीं है, अपितु महाभारत के अर्थ को लेकर धर्म विषयक उत्पन्न भ्रान्ति की सूचक है। मानस में स्वधर्म की व्याख्या के उदाहरण हैं, पर भ्रान्ति को कहीं स्थान नहीं है–

छत्रिय तनु धरि समर सकाना। कुल कलंकु तेहि पावँर आना।।

(1/284/3)

इस व्याख्या में सबसे बड़ा संतुलन यह है कि भगवान राम परशुराम जी से युद्ध के लिए राजी नहीं हैं, जबकि वे उन्हें युद्ध के लिए ललकारते हैं यथा–

करु परितोषु मोर संग्रामा। नाहिं त छाड़ कहाउब रामा।।

(1/281/2)

भगवान राम धर्म का अर्थ युद्ध के लिए व्यग्रता नहीं मानते, अपितु संतुलन के लिए कहते हैं–

बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहि डेराई।। (1/284/5)

अभय के साथ सत्पुरुषों से भय मानना ही सच्चा क्षत्रिय धर्म है। राम का जीवन दर्शन भी यही है। कृष्ण जी भी तो गीता में यही कहते है ''स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः। सारांश स्वरूप जीवन में स्वधर्म का पालन ही आवश्यक है चाहे उसमें युद्ध ही क्यों न करना पड़े, पर पराये धर्म को अंगीकार कभी नहीं करना चाहिए। मनुष्य को स्वधर्म में सदैव निरत रहना चाहिए। गीता एवं श्रीरामचरितमानस का यही संदेश इस प्रस्तुति के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

इंसान भी कितना अजीब है-

प्रार्थना करते वक्त समझता है कि भगवान सब सुन रहा है,
पर निंदा करते वक्त ये भूल जाता है।
पुण्य करते वक्त समझता है कि भगवान सब देख रहा है,
पर पाप करते वक्त ये सब भूल जाता है।
दान करते वक्त समझता है कि भगवान सब देख रहा है,
पर चोरी करते वक्त ये भूल जाता है।
प्रेम करते वक्त समझता है कि भगवान सब देख रहा है,
पर नफरत करते वक्त ये भूल जाता है।

तन जितना घूमे, उतना ही स्वस्थ रहता है,
और मन जितना स्थिर रहे उतना ही स्वस्थ रहता है।

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा विरचित ग्रन्थ

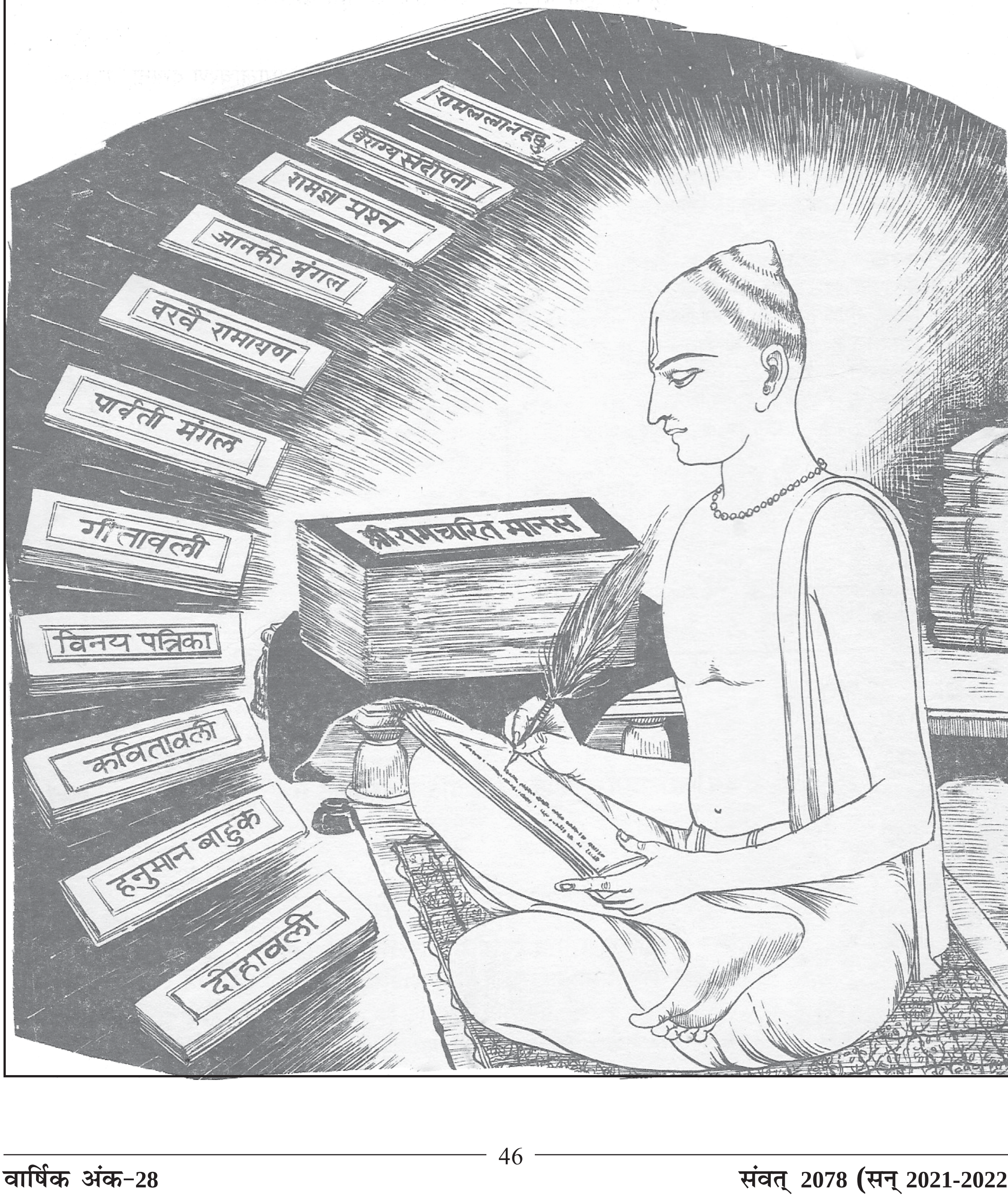

सीता निर्वासन

समिति के अध्यक्ष, पं. दिनेश चन्द्र शर्मा

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के चरित्र परम मंगलमय लोकोपकारक एवं मानव जीवन में सांगोपांग सम्पूर्ण रूप से अनुकरणीय हैं। भगवान राम की कथा साक्षात् राम का ही स्वरूप है, परन्तु भगवान की कुछ लीलायें बड़ी गूढ़ हैं, जिन्हें आम आदमी समझ नहीं पाते। उन्हीं में से एक लीला है–**''सीता निर्वासन''** सीता–निर्वासन ऐसा प्रसंग है, जिनके विषय में धार्मिक, साहित्यिक, राजनैतिक तथा सर्वव्यापक बाह्य दृष्टिकोण से देखने में सर्व साधारण से लेकर बड़े–बड़े विद्वान भी यह कह ही देते हैं कि निर्दोष, निष्कलंक, गंगाजल सी पावन और गर्भवती सीता माता का निर्वासन कर श्रीराम ने कौन सी मर्यादा का पालन किया? यह निस्सन्देह गंभीर एवं विचारणीय प्रश्न है।

श्रीरामतापनीयोपनिषद् में वर्णन आता है कि श्रीराम का चरित्र आने वाली समस्त पीढ़ी के राजाओं के लिये आदर्श एवं अनुकरणीय होगा। भविष्य में उसका पालन करने से परम लोकोपकार होगा। श्रीराम स्वयं ही कहते हैं–

भूयो भूयो भाविनो भूमिपालाः नत्वा नत्वा याचते रामचन्द्रः।
सामान्योऽयं धर्मसेतुर्नराणां काले काले पालनीयो भवद्भिः।।

हे भविष्य में होने वाले राजागण! आप लोगों को बारंबार नमस्कार करते हुए रामचन्द्र प्रार्थना करते हैं कि माता–पिता, बन्धु–बान्धव, पति–पत्नी, मित्र समाज, प्रजाजन, पुरजन, वन्य–जन, शत्रुजनों आदि के साथ जो जो हमने व्यवहार किया है उसका सामान्य रूप से धर्मानुसार समय समय पर पालन करते रहने से आप सभी का कल्याण होगा। इसी कारण कहा गया–

न राम सदृशो राजा पृथिव्यां नीतिवानभूत्।

श्रीरामचरितमानस में महर्षि वसिष्ठ जी ने भी यही कहा है–

नीति प्रीति परमारथ स्वारथु। कोउ न राम सम जान जथारथु।। (2/254/5)

इस प्रकार श्रीराम के परम पावन चरित्र में किसी भी प्रकार का लेशमात्र भी दोष नहीं है। सीता–निर्वासन में जो दोष दिखाई देता है, गंभीर दृष्टि से विचार करने पर उसका निराकरण हो जाता है। वह राजाराम के परमादर्श चरित्र का ज्वलन्त अनुपमेय उदाहरण है, क्योंकि–

नीति प्रीति परमारथ स्वारथु।

इन चारों दृष्टिकोण से विचार करने पर ही वास्तविकता का ज्ञान होगा। यही राजाराम की मर्यादा पुरुषोत्तमता का परमादर्श है।

1. नीति-दृष्टि से

प्रजा के लोक—परलोक दोनों का ही दायित्व राजा पर होता है, क्योंकि 'राजा दण्डधरो गुरूः'। राजा के आचरण में गुणदोष आ जाने पर प्रजा पूर्ण रूप से उन गुण—दोषों से प्रभावित होती है, क्योंकि—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते।। (गीता—3/21)

श्रेष्ठ लोग जैसा—जैसा आचरण करते हैं लोक समाज भी वैसा ही अनुकरण करता है। 'यथा राजा तथा प्रजा' महापुरुष का आचरण ही सबका आदर्श होता है। जब प्रजा में सीताजी के प्रति कलंक का भाव उत्पन्न हो गया। उस स्थिति में जब पुत्र (प्रजा) ही स्वयं सीता माता (रानी) को संदेह की दृष्टि से देखने लगे तो फिर प्रजा में आदर्श बनाये रखने के लिये श्रीराम को सीता निर्वासन के अतिरिक्त कलंक प्रक्षालन का कोई अन्य उत्तम उपाय नहीं था।

नीति का स्पष्ट आदेश है कि 'त्यजेदेकं कुलस्यार्थे', कुल के कल्याण के लिये एक का त्याग उचित है। श्रीराम ने सोचा कि एक सीता त्याग मात्र से समस्त कलंक प्रक्षालन हो जायेगा और वे यह भी जानते थे कि सीता कलंक प्रक्षालन यदि करना है तो फिर दंड द्वारा हो ही नहीं सकता, अपितु कलंक का प्रचार प्रसार ही होगा। महर्षि वाल्मीकीय रामायण के अनुसार केवल धोबी ही निन्दा नहीं करता था, अपितु पुर के अधिकांश लोग निंदा करते थे। गोस्वामी तुलसीदासजी भी यही बात कहते हैं—

तुलसी जु पै गुमान को होत जो कहूँ उपाय।
तौ कि जानकिहिं जानि जिय परिहरते रघुराय।।

जो प्रजा का पालन करने के साथ—साथ प्रजा का मनोरंजन भी करता है, वही राजा कहलाने का अधिकारी है—'रंजनात् राजा'। प्रजा का मनोरंजन करने के लिये राजा को सर्वस्व त्याग करना पड़ता है। यही सिद्धांत श्रीरामचरितमानस में वर्णित है यथा—

तनु तिय तनय धामु धनु धरनी। सत्यसंध कहुँ तृन सम बरनी।।

(2/35/8)

श्रीराम सत्यसंध हैं ही। श्रीराम ने राज्याभिषेक काल में यह शपथ ग्रहण की थी।

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतोनास्ति मे व्यथा।। (भवभूति)

अपने स्नेह, दया, सुख, यहाँ तक कि जानकी तक का भी त्याग यदि अपनी प्रजा की प्रसन्नता एवं सुव्यवस्था के लिये करना पड़े तो हमें कोई कष्ट नहीं होगा। श्रीराम आदर्श राजा थे। इस कारण इस शपथ ग्रहण को जीवन में उन्होंने स्वयं चरितार्थ करके दिखाया। आज की भाँति नहीं थे कि जब नेताओं को शपथ ग्रहण करायी जाती है तो शपथ–पत्र मात्र औपचारिकता ही होता है। इसी कारण गोस्वामी जी कलि वर्णन में जैसा संकेत करते हैं, आज स्पष्ट रूप में वैसा ही दिखाई दे रहा है–

नृप पाप परायन धर्म नहीं। करि दंड बिडंब प्रजा नितहीं।। (7/101/छंद)

किन्तु धन्य हैं राजा रामजी जो कि उनका शपथ–ग्रहण के अनुकूल ही सम्पूर्ण व्यवहार हुआ, क्योंकि–

मनस्येक वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।

मन, वाणी, क्रिया का पूर्ण सामंजस्य राजाराम की शपथ ग्रहण की भाषा में परमादर्श रूप में देखा गया। इसी कारण जानकीजी का त्याग नीति की दृष्टि से परमावश्यक था।

2. प्रीति-दृष्टि से

प्रीति के अनुसार श्रीराम ने लोकहित के लिये ही वैदेही का त्याग किया था। सीताजी की परम पवित्रता से तो वे पूर्ण परिचित थे ही और सीताजी से अभिन्न भी थे–

गिरा अरथ जल बीचि सम कहियत भिन्न न भिन्न। (1/18)

मनोमयी सीता तो उनके हृदय में सर्वदा ही निवास करती रहीं। यही तो हनुमानजी के द्वारा सीताजी को संदेश देते हुए कहा था–

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा।।
सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रस एतनेहि माहीं।। (5/15/6–7)

और इससे बढ़कर प्रेम की पराकाष्ठा क्या होगी कि सीता–निर्वासन के साथ ही श्रीराम ने अपने समस्त राजसुखों का हमेशा के लिये परित्याग कर दिया–

मानिय सिय अपराध बिनु, प्रभु परिहरि पछितात।
रुचै समाज न राजसुख, मन मलीन कृश गात।।

मंत्रिमंडल, पुरजन, प्रजाजन एवं गुरुजनों ने भी श्रीराम से प्रार्थना की कि सीताजी की अनुपस्थिति में आप दूसरा विवाह कर सकते हैं, किन्तु धन्य है श्रीराम का एक पत्नीव्रत। उन्होंने धर्मकार्य सम्पन्न करने के लिये धर्मपत्नी सीता की स्वर्णमयी प्रतिमा प्रतिष्ठापित करके अश्वमेध–यज्ञ सम्पन्न किया। प्रजा से स्पष्ट यह भी कह दिया कि तुम लोगों की दृष्टि में सीता कलंकिनी होगी, किन्तु मेरी दृष्टि में सीता परम साध्वी, पतिव्रता एवं त्याग, तपस्या तथा आदर्श की साक्षात् मूर्ति

हैं। इस समाचार को सुनकर सीताजी परम प्रसन्न हुयीं। जब लक्ष्मणजी ने वाल्मीकि आश्रम के समीप सीताजी को त्यागकर प्रणाम किया, तब सीताजी कहती हैं—वत्स लक्ष्मण! प्राणनाथ से मेरा यह संदेश अवश्य ही कहना कि 'अग्नि परिक्षिता शुद्धा' मुझ सीता का परित्याग लोकोपवाद के भय के कारण ही किया। आपके रघुवंश के अनुरूप ही हुआ। इस कारण अब मैं सूर्य भगवान से प्रार्थना करूँगी कि फिर दूसरे जन्म में भी परमादर्श स्वरूप राजाराम ही हमारे पति बनें। धन्य हो माँ जानकी और धन्य है तुम्हारा पति–प्रेम।

श्रीराम के प्रेम की सावधानी देखिए कि प्राणप्रिया सीताजी का त्याग तो किया, किन्तु भेजा महर्षि वाल्मीकिजी के आश्रम में। वनवास काल में समस्त ऋषिगणों के आश्रमों में भ्रमण करके उन्होंने यह जान लिया था कि वाल्मीकिजी का आश्रम सीता के लिये सब प्रकार से उपयुक्त होगा।

वाल्मीकिजी के ही आश्रम पर भेजने में अनेक कारणों के साथ ही साथ एक कारण यह भी था कि वाल्मीकि महाराज दशरथ एवं जनकजी के मित्र थे और चिर परिचित भी थे। तभी तो महर्षि वाल्मीकिजी सीताजी से कहते हैं कि यहाँ पर मायके एवं ससुराल दोनों का लाभ है—

पुत्रि! सोचिए आइहौं जनक गृह जिय जानि।
काल ही कल्याण कौतुक कुसल तव कल्यानि॥ (गीतावली)

सीताजी के कलंक प्रक्षालन के लिये वाल्मीकिजी के आश्रम के अतिरिक्त कोई भी सुन्दर स्थान था ही नहीं। अन्त में वाल्मीकिजी ने ही श्रीराम के भरे हुए दरबार में सीताजी की परम पवित्रता के लिये शपथपूर्वक स्वयं को प्रमाणित किया।

जिन श्रीराम ने अपनी प्राणवल्लभा, सीताजी 'आनहु चर्म कहति वैदेही' की इच्छा अपने को अनेकों कष्टों में डालकर भी पूर्ण की। वे श्रीराम दौहृदावस्था की इस इच्छा को क्यों न पूर्ण करते? इन सब कार्यों के लिये वाल्मीकि आश्रम परम उपयुक्त था। यह सीता त्याग नहीं, अपितु दौहृदावस्था में सुयोग्य पति को पत्नी की इच्छा को पूर्ण करना कर्तव्यनिष्ठा का ज्वलन्त उदाहरण था।

3. परमार्थ दृष्टि से

परमार्थ की दृष्टि से श्रीराम ने यह सोचा कि हम वास्तव में अखंड ब्रह्मचर्य व्रतपालन पूर्वक ही जीवन यापन करके अधिक प्रजानुरंजन कर सकेंगे। परलोक सुधर सकेगा। सीता दौहृदावस्था में हैं, अतः प्रजा को अनुकरण के लिये भावी परम्परा प्राप्त होगी और ऐसा हुआ भी। जब राजा एक पत्नीव्रती बने तो प्रजा पर भी इसका पूर्ण प्रभाव पड़ा।

एकनारि ब्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी॥ (7/22/8)

राज्य स्वीकार कर लेने पर आदर्श राजा को अपने समस्त स्वार्थों का परित्याग करना पड़ता

है, क्योंकि वही राजा का परमादर्श होता है, इसलिये विशेष राजधर्म के सामने व्यक्तिगत सुख का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। राजाराम ने जहाँ कुत्ते को घायल करने के अपराध में संन्यासी को दण्ड दिया, उल्लू और गीध का न्याय किया, स्वकर्मत्यागी अनधिकृत धर्मानुरागी शम्बूक का वध किया, वहाँ पर फिर एक धोबिन का धोबी द्वारा अपमान एवं भर्त्सना हो इस कलंक को कैसे सहन कर सकते थे? साथ ही साथ–

सिय निंदक अघ ओघ नसाए। लोक बिसोक बनाइ बसाए।। (1/16/3)

धोबी पर दोषारोपण न करके उसे अभय दान दिया। इसी प्रकार राजाराम ने सीता के निर्वासन द्वारा सच्चे न्याय को प्रश्रय दिया। प्रजानुरंजन तथा परमादर्श की स्थापना की। क्या आज के तथाकथित राजा (नेतागण) इस चरित्र से आदर्श ग्रहण कर सकेंगे? इसी कारण कहा गया–

न राम सदृशो राजा पृथिव्यां नीतिमानभूत्।

दूसरा कारण यह भी था कि पिता की आयु के भोगकाल में पत्नी को साथ रखना उचित नहीं था। गोस्वामीजी ने गीतावली (उत्तरकाण्ड) में स्पष्ट वर्णन किया है–

संकट सुकृत को सोचत जानि जिय रघुराउ।
सहस द्वादश पंचसत में कछुक है अब आउ।।
भोग पुनि पितु आयु को सोउ किए बनत बनाउ।
परिहरे बिनु जानकी नहीं अनघ उपाउ।।

तीसरी बात यह है कि संसार को यह भी दिखाया कि स्वयं सीता की अग्नि–परीक्षा करके देख चुका हूँ कि सीता परम निर्दोष तथा परमशुद्धा पतिव्रता है, किन्तु जनता के मन में संदेह है तो लोकतंत्र की रक्षा के लिये जानकी का त्याग कर रहा हूँ। इस दृष्टि से परमार्थ निर्वाह पूर्णरूप से किया।

4. स्वार्थ (लोकहित) दृष्टि से

श्रीराम ने लोकहित की दृष्टि से ही भगवती सीता को महर्षि वाल्मीकि के आश्रम के निकट भेजा था, क्योंकि इस बात को वे भलीभाँति जानते थे कि वहाँ रहकर मेरी भावी सन्तान को समस्त संस्कार, विद्या, शास्त्र तथा शस्त्रादि की शिक्षा प्राप्त होगी और साथ ही महर्षि का परम कल्याणमय आशीर्वाद भी उपलब्ध होगा।

श्रीरामजी इस बात को भलीभाँति जानते थे कि गर्भावस्था में सीता की सेवा तथा उनके मनोविनोद के लिये वहाँ पर सखीगण मिलेंगी, जिनसे स्पष्ट रूप से बातचीत करने तथा निजी दुखानुभूति को प्रबोधपूर्वक दूर करने की पूरी सहायता मिलेगी। भावी सन्तान के लालन–पालन

में अपेक्षित सामग्री, वातावरण, विद्या, संस्कारादि सभी वहाँ एक साथ सुलभ होंगे, जो अन्यत्र नहीं हो सकते थे। साथ ही साथ ऋषि–महर्षियों के सत्संग का भी परम सुख मिलेगा। जैसा कि वनवास काल में उन्हें चित्रकूट प्रवास में प्राप्त हुआ था।

जहाँ बैठि मुनिगन सहित नित सिय रामु सुजान।
सुनहिं कथा इतिहास सब आगम निगम पुरान।। (2/237)

सांसारिक समस्त प्रपंचों से सर्वथा विनिर्मुक्त वनवास के प्राकृतिक परम, पवित्र वातावरण का आनन्द मूर्तिमान सीताराम दोनों ही ले चुके थे, जिसमें इनका स्वयं का ही आनन्द आदर्श मूर्तिमान रामराज्य के लिये प्रस्तुत हुआ। फिर इन सब सुविधाओं को जानकर भी इस महत्त्वपूर्ण वातावरण में सुयोग्य राज्य के उत्तराधिकारी के निर्माण के लिये किसी न किसी बहाने से सीताजी को वन में भेजना श्रीराम का परम अभीष्ट था।

वाल्मीकि आश्रम में लव–कुश का जन्म हुआ। महर्षि ने सभी संस्कार किये। समस्त विद्या, शिक्षा, दीक्षा दी। रामायण की रचना करके उनको कंठस्थ करायी। स्वर लय ताल का समग्र ज्ञान कराया। फिर लवकुश ने अयोध्या में समस्त नगरवासियों को सस्वर रामायण सुनाई। धीरे–धीरे यह चर्चा दरबार तक पहुँची। दरबार में भी रामायण का गान हुआ।

परम सुयोग्य लव–कुश को अपना अधिकार मिला। श्रीराम का यह कार्य भी एक साथ सध गया। यदि त्याग न होता तो क्या सीता का कलंक धुल पाता, इस आदर्श और मर्यादा के साथ। यदि ऐसा न किया जाता तो धोबी एवं प्रजा की चर्चा द्वारा सीताजी सदा के लिये कलंकिनी ही बनी रहतीं। सीताजी के अनुकरणीय नारि–चरित्र में यह महान कलंक सदा के लिये खटकता रहता।

इस प्रकार राजाराम के सांगोपांग स्नेह, दया, सुख चारों के त्याग द्वारा राज्य सिंहासनारूढ़ के समय ली गई शपथ को पूर्ण चरितार्थ कर विश्व में परमादर्श उपस्थित किया।

यद्यपि सीता–निर्वासन (सीता–त्याग) के संबंध में भारतीय संस्कृति के संतजनों एवं विद्वज्जनों में भी पूर्ण मतैक्य नहीं है। वह हो भी नहीं सकता, क्योंकि यह भावना से जुड़ा हुआ करुण प्रकरण है, तथापि यह तो प्रभु श्रीराम ही जानें, क्योंकि उनकी लीला हमारी तर्क–बुद्धि से परे है। उनके स्वभाव के संदर्भ में श्रीरामचरितमानस में लिखा है–

कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि।
चित्त खगेस राम कर समुझि परइ कहु काहि।। (7/19 ग)

जहाँ अनेक विद्वान वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड के साथ अनेक अंशों को प्रक्षिप्त मानते हैं, वहीं कतिपय मर्मज्ञ एवं अनुसंधानकर्ता इन्हें सर्वथा उचित एवं सामयिक मानकर समर्थन भी

करते हैं, जिसमें कि राजाराम का परमादर्श और मर्यादापुरुषोत्तम स्वरूप है। इस लेख का निचोड़ यही है कि भावी राजाओं **(नेताओं)** को त्याग का संदेश है **सीता-निर्वासन**। यदि वर्तमान सत्तासीन नेतागण भगवान राम की इस लीला से त्याग की दीक्षा ग्रहण कर स्वार्थ त्याग कर सच्चे मन से देश की सेवा करें तो निश्चित रूप से देशोत्थान, निरीह जनता का कल्याण और रामराज्य का स्वप्न साकार हो सकता है।

प्रसाद चढ़ाने का रहस्य

''क्या भगवान हमारे द्वारा चढ़ाया गया भोग खाते हैं? यदि खाते हैं, तो वह वस्तु समाप्त क्यों नहीं हो जाती और यदि नहीं खाते हैं, तो भोग लगाने का क्या लाभ?'' एक लड़के ने पाठ के बीच में अपने गुरु से प्रश्न किया। गुरु ने तत्काल कोई उत्तर नहीं दिया। वे पूर्ववत् पाठ पढ़ाते रहे। उस दिन उन्होंने पाठ के अन्त में एक श्लोक पढ़ाया–

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

(यजुर्वेद)

पाठ पूरा होने के बाद गुरु ने सभी शिष्यों से कहा कि पुस्तक देखकर श्लोक कंठस्थ कर लें। एक घंटे बाद गुरु ने प्रश्न करने वाले शिष्य से पूछा कि उसे श्लोक कंठस्थ हुआ कि नहीं। उस शिष्य ने पूरा श्लोक शुद्ध-शुद्ध गुरु को सुना दिया। फिर भी गुरुजी ने सिर नहीं में हिलाया, तो शिष्य ने कहा कि–''वे चाहें तो पुस्तक देख लें; श्लोक बिलकुल शुद्ध है।'' गुरु ने पुस्तक दिखाते हुए कहा–''श्लोक तो पुस्तक में ही है, तो तुम्हें कैसे याद हो गया?'' शिष्य कुछ नहीं कह पाया। गुरु ने कहा–''पुस्तक में जो श्लोक है, वह स्थूल रूप में है। तुमने जब श्लोक पढ़ा, तो वह सूक्ष्म रूप से तुम्हारे अंदर प्रवेश कर गया। उसी सूक्ष्म रूप में वह तुम्हारे मन में रहता है। इतना ही नहीं, जब तुमने इसको पढ़कर कंठस्थ कर लिया, तब भी पुस्तक के स्थूल रूप से श्लोक में कोई कमी नहीं आई। इसी प्रकार पूरे विश्व में व्याप्त परमात्मा हमारे द्वारा चढ़ाए गए निवेदन को सूक्ष्म रूप में ग्रहण करते हैं और इससे स्थूल रूप के वस्तु में कोई कमी नहीं होती। उसी को हम प्रसाद के रूप में स्वीकार करते हैं। शिष्य को अपने प्रश्न का उत्तर मिल चुका था।

हर दिन मंदिर न जा सकें तो कोई बात नहीं,
पर कर्म ऐसे हों कि जहाँ जाएँ वहीं मंदिर बन जाए।

भक्त श्री रामदेव जी का समर्पण

कन्धे पर कपड़े का थान लादे और हाट–बाजार जाने की तैयारी करते हुए रामदेव जी से पत्नी ने कहा–भगत जी! आज घर में खाने को कुछ भी नहीं है। आटा, नमक, दाल, चावल, गुड़ और शक्कर सब खत्म हो गए हैं। शाम को बाजार से आते हुए घर के लिए राशन का सामान लेते आइएगा। भक्त रामदेव जी ने उत्तर दिया–देखता हूँ जैसी विट्ठल जी की इच्छा। अगर कोई अच्छा मूल्य मिला, तो निश्चय ही घर में आज धन–धान्य हो जायेगा। पत्नी बोली संत जी! अगर अच्छी कीमत ना भी मिले, तब भी इस बुने हुए थान को बेचकर कुछ राशन तो लेते आना। घर के बड़े–बूढ़े तो भूख बर्दाश्त कर लेंगे, पर बच्चे अभी छोटे हैं, उनके लिए तो कुछ ले ही आना। जैसी मेरे विट्ठल की इच्छा, ऐसा कहकर भक्त रामदेव जी हाट–बाजार को चले गए। बाजार में उन्हें किसी ने पुकारा–वाह सांई! कपड़ा तो बड़ा अच्छा बुना है और ठोक भी अच्छी लगाई है। तेरा परिवार बसता रहे। ये फकीर ठंड में कांप–कांप कर मर जाएगा। दया करके रब के नाम पर दो चादरों का कपड़ा इस फकीर के ऊपर ओढ़ा दे। भक्त रामदेव जी–दो चादरों में कितना कपड़ा लगेगा फकीर जी? फकीर ने जितना कपड़ा माँगा, संयोग से भक्त रामदेव जी के थान में कुल कपड़ा उतना ही था और भक्त रामदेवजी ने पूरा थान उस फकीर को दान कर दिया। दान करने के बाद जब भक्त रामदेव घर लौटने लगे तो उनके सामने परिजनों के भूखे चेहरे नजर आने लगे। फिर पत्नी की कही बात कि घर में खाने की सब सामग्री खत्म है। दाम कम भी मिले तो भी बच्चों के लिए तो कुछ ले ही आना। अब दाम तो क्या, थान भी दान जा चुका था। भक्त रामदेव जी एकान्त में पीपल की छांव में बैठ गए। जैसी मेरे विट्ठल की इच्छा। जब सारी सृष्टि की सार पूर्ति वो खुद करता है, तो अब मेरे परिवार की सार भी वो ही करेगा और फिर भक्त रामदेवजी अपने हरि विट्ठल के भजन में लीन हो गए। अब भगवान कहाँ रुकने वाले थे। भक्त रामदेव जी ने सारे परिवार की जिम्मेदारी अब उनके सुपुर्द जो कर दी थी। अब भगवान जी ने भक्त की झोपड़ी का दरवाजा खटखटाया। रामदेव जी की पत्नी ने पूछा कौन है? रामदेव का घर यही है ना? भगवान जी ने पूछा। अंदर से आवाज आई हाँ जी, यही है, आपको कुछ चाहिये। भगवान सोचने लगे कि धन्य है रामदेव जी का परिवार घर में कुछ भी नहीं है फिर भी हृदय में देने की, सहायता की जिज्ञासा है। भगवान बोले दरवाजा खोलिये। लेकिन आप कौन? भगवान जी ने कहा–सेवक की क्या पहचान होती है भगतानी? जैसे रामदेव जी विट्ठल के सेवक वैसे ही मैं रामदेव जी का सेवक हूँ। ये राशन का सामान रखवा लो। पत्नी ने दरवाजा पूरा खोल दिया। फिर इतना राशन घर में उतरना शुरू हुआ कि घर के जीवों की घर में रहने की जगह ही कम पड़ गई। इतना सामान रामदेवजी ने भेजा है? मुझे नहीं लगता। पत्नी ने पूछा। भगवान जी ने कहा–हाँ भगतानी! आज रामदेव का थान सच्ची सरकार ने खरीदा है जो रामदेव का सामर्थ्य था उसने भुगता दिया और अब जो मेरी सरकार का सामर्थ्य है वो चुकता कर रही है जगह और बताओ। सब कुछ आने वाला है भगत जी के घर में। शाम ढलने

शेष पृष्ठ 59 पर...

अवगुन आठ सदा उर रहहीं

डॉ. भगवान दास पटैरया, समिति के महासचिव

श्रीरामचरितमानस एक ऐसा दिव्य ग्रन्थ है, जो संत शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी ने ईश्वरीय प्रेरणा से लिखा है। बुद्धिजीवियों का मानना है कि उन्होंने तो इस महाकाव्य को केवल लिपिबद्ध किया है, लिखवाने वाले तो ईश्वर ही थे। इसका संकेत स्वयं तुलसीदासजी ने 'मानस' के प्रारंभ में ही लिख दिया है। कथा लिखते समय वे कहते हैं कि वे न तो कोई कवि हैं और न कविता लिखने का श्रेय लेना चाहते हैं, किंतु आगे चलकर वे स्पष्ट लिखते हैं कि शिवजी की कृपा से मेरे हृदय में सुमति हिलोरे ले रही है, अतः श्रीरामचरितमानस को कवि तुलसीदास लिख रहे हैं, यथा–

कबि न होउँ नहिं चतुर कहावउँ। मति अनुरूप राम गुन गावउँ।।
भनिति मोरि सिव कृपाँ बिभाती। ससि समाज मिलि मनहुँ सुराती।।
जस कछु बुधि बिबेक बल मेरें । तस कहिहउँ हियँ हरि के प्रेरें।।
संभु प्रसाद सुमति हियँ हुलसी। रामचरितमानस कबि तुलसी।।

(1/12/9, 1/15/9, 1/31/3 तथा 1/36/1)

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि श्रीरामचरितमानस ईश्वरीय प्रेरणा से लिखा गया महाकाव्य है, अतः इसकी प्रत्येक शब्द–पंक्ति मंत्रवत् है। कुछ विद्वान इसमें त्रुटियाँ निकालते हैं, पर यह उचित नहीं है। कुछ लोगों को आशंका है कि जब यह ग्रन्थ सम्पादित किया होगा, हो सकता है उस समय कुछ उपलब्ध सामग्री में त्रुटियाँ रही हों, किंतु यह आशंका भी निर्मूल है, क्योंकि गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित श्रीरामचरितमानस के प्रारंभ में ही 'नम्र निवेदन' शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशक ने स्थिति स्पष्ट कर दी है। इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि यह समिति अपनी वार्षिक स्मारिका के माध्यम से श्रीरामचरितमानस में वर्णित तथाकथित (जैसा कुछ लोग सोचते हैं) आशंकाओं/भ्रांतियों को दूर करने का प्रयास करती रही है।

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी।। (5/59/6)

इसके सम्बन्ध में कुछ लोगों के मन में भ्रांति है कि इससे शूद्र और नारी का अपमान हुआ है, पर ऐसा नहीं है। इस विषय पर दो लेख हमारी वार्षिक स्मारिका में प्रकाशित हुए हैं – 1. वार्षिक अंक 18 (संवत् 2068, सन् 2011–12) पृष्ठ 11–12 तथा 2. वार्षिक अंक 21 (संवत् 2071, सन् 2014–15), पृष्ठ 57–59। इसी श्रृंखला में निम्नांकित चौपाई के संदर्भ में स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है–

नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं। अवगुन आठ सदा उर रहहीं।।
साहस अनृत चपलता माया। भय अबिबेक असौच अदाया।।

(6 / 16 / 2—3)

जब मंदोदरी रावण को श्रीराम के ईश्वरीय स्वरूप को समझाते हुए निवेदन करती है कि श्रीराम से वैर भाव छोड़कर सीता को लौटा दो, तब रावण कहता है कि स्त्रियों के हृदय में आठ अवगुण– ''साहस, अनृत, चपलता, माया, भय, अविवेक, अशौच और 'अदाया' सदा ही रहते हैं। इससे कुछ लोगों के मन में यह भ्रांति (आशंका) पैदा हो जाती है कि इससे नारी का अपमान हुआ है, किंतु ऐसा नहीं है, हमें पूरे प्रकरण को समझना होगा तभी सही संदेश का पता चल सकेगा। इस संदर्भ में सर्वप्रथम तो यह समझना होगा कि किस प्रसंग में कौन सा पात्र किससे संवाद कर रहा है। इस प्रकरण में रावण अपनी पत्नी मंदोदरी से वार्ता कर रहा है। यह सर्वविदित तथ्य है कि जिसकी जैसी भावना होती है वह उसी प्रकार से वार्ता करता है। एक ही तथ्य पर भिन्न–भिन्न विचार वाले अलग–अलग तरीके से अपने विचार रखते हैं, यथा–

जिन्ह कें रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी।
निज निज रुख रामहि सबु देखा। कोउ न जान कछु मरमु बिसेषा।।

(1 / 241 / 4 तथा 1 / 244 / 7)

सभी के मन पर जो बुद्धि काम करती है वह दो प्रकार की होती है–सुमति और कुमति। अपने भाई रावण को समझाते हुए विभीषण कहते हैं कि आपके हृदय में कुमति का निवास हो गया है, इस कारण आपको सब विपरीत दिखाई देता है, आप शत्रु को मित्र और मित्र को शत्रु समझते हैं यथा'

सुमति कुमति सब कें उर रहहीं। नाथ पुरान निगम अस कहहीं।। (5/40/5)
तव उर कुमति बसी बिपरीता। हित अनहित मानहु रिपु प्रीता।। (5/40/7)

इस प्रकार से जब रावण के मन में कुमति का वास है, तब वह उल्टा ही तो बोलेगा। उसने स्त्री के जो आठ अवगुण गिनाए हैं, वास्तव में सभी गुण हैं। इन पर एक–एक करके विचार करते हैं:–

1 **साहसः–** अपने धर्म, अपने सतीत्व और अपने सुहाग की रक्षा हेतु नारी में असीम साहस होता है। लंका–दहन के पश्चात् से ही मंदोदरी समझ गई थी कि राम साधारण मनुष्य नहीं हैं, बल्कि ईश्वर का अवतार हैं, इसीलिए उसने रावण को चार बार समझाया। उसने इसकी चिन्ता नहीं की कि रावण नाराज हो जाएगा, बल्कि साहसपूर्वक निम्नांकित प्रकार से चार बार वार्ता की।

(क) लंका–दहन के पश्चात्:–

सुनहु नाथ सीता बिनु दीन्हें। हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें।। (5/36/10)

(ख) श्रीरामजी द्वारा समुद्र पर पुल बनवाने के पश्चात्:–

नाथ बयरु कीजे ताहीं सो। बुधि बल सकिअ जीति जाहीं सो।।
तुम्हहि रघुपतिहि अंतर कैसा । खलु खद्योत दिनकरहि जैसा।। (6/6/5–6)

(ग) श्रीरामजी के अदृश्य बाण से अखाड़े में मंदोदरी का कर्णफूल गिर जाने के पश्चात्:–

बिस्वरूप रघुबंस मनि करहु बचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर अंग अंग प्रति जासु।। (6/14)

(घ) श्रीरामजी के दूत अंगद का प्रभाव देखने के पश्चात्:–

अब पति मृषा गाल जनि मानहु। मोर कहा कछु हृदयँ बिचारहु।।
पति रघुपतिहि नृपति जनि मानहु। अग जग नाथ अतुलबल जानहु।। (6/36/7–8)

इस प्रकार से नारी में 'साहस' का होना अवगुण नहीं, बल्कि उसका एक महत्त्वपूर्ण गुण है।

2. **अनृतः–** अनृत अर्थात् झूठ बोलना नारी के स्वभाव में है, कुछ लोग ऐसा मानते हैं, उनमें रावण भी एक था। वास्तव में व्यवहार की दृष्टि से तथा गृहस्थी चलाने के लिए यदि थोड़ा सा झूठ भी कह दिया जाए तो वह पाप की श्रेणी में नहीं आता। द्रोणाचार्य के वध के लिए श्रीकृष्णजी ने युधिष्ठिर से ''नरो वा कुंजरो' कहलाकर झूठ बुलवाया था। वह आवश्यकता के अनुरूप था। यदि ऐसा न किया जाता तो द्रोणाचार्य का वध असंभव था। इसी सिद्धांत का सहारा लेकर अगर गृहिणी यह कह दे कि आटा/दाल/चावल समाप्त हो गए (जबकि अभी कुछ शेष हैं) शीघ्र प्रबंध कीजिए, तो वह 'अनृत' भी उपयोगी है तथा अनृत की श्रेणी में नहीं आता। इस प्रकार से यह भी दुर्गुण नहीं बल्कि सद्गुण है।

3 **चपलताः–** माता–पिता दोनों पर अपनी संतान के पालन–पोषण का उत्तरदायित्व होता है, किंतु इसमें माता की भागीदारी सामान्यतया अधिक होती है। बच्चे 'चंचल स्वभाव' के होते हैं, इसलिए नारी में चपलता का होना, दुर्गुण नहीं, बल्कि ऐसा सद्गुण है, जो उसकी संतान के पालन–पोषण में सहायक होता है।

4. **मायाः–** श्रीरामचरितमानस के सुन्दरकाण्ड में ज्ञान और भक्ति के भेद के वर्णन में लिखा है कि 'नारी' स्वयं विष्णु की माया का स्वरूप ही है यथा–

सोउ मुनि ग्याननिधान मृगनयनी बिधु मुख निरखि।
बिबस होइ हरिजान नारि बिष्नु माया प्रगट।। (7/115ख)

जब नारी स्वयं विष्णु भगवान की माया का ही एक स्वरूप है, तब यह उसका अवगुण कैसे हो सकता है, अतः यह भी उसका गुण ही है।

5. **भयः–** अपने सुहाग की रक्षा हेतु नारी सदैव सतर्कता के साथ भयभीत भी रहती है। जब

रावण को मंदोदरी समझा रही थी, तब उसने कहा था कि तुम व्यर्थ ही भयभीत हो, संसार में मेरे समान कोई वीर नहीं है यथा–

सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना। जग जोधा को मोहि समाना।। (6/8/2)

इस प्रकार से अपने सौभाग्य (सुहाग) की रक्षा के प्रति भयभीत होना नारी का अवगुण नहीं, बल्कि सद्गुण है।

6 **अबिबेकः–** अविवेक अर्थात् विवेक का न होना, यह नारी का दुर्गुण नहीं हो सकता, क्योंकि नारी श्रद्धा की मूर्ति है और श्रद्धा में तर्क–विर्तक अर्थात् विवेक का कोई स्थान नहीं है। नारी को 'भावना प्रधान' तथा पुरुष को 'विवेक प्रधान' माना गया है। इसका प्रमाण देखिए जनक वाटिका के प्रसंग में, जब श्रीरामजी एवं सीताजी एक–दूसरे का दर्शन करते हैं और वापिस जाते समय सीताजी रामजी के स्वरूप को अपने हृदय में धारण करती हैं और रामजी सीताजी के स्वरूप को अपने चित्त में धारण करते हैं यथा–

जानि कठिन सिवचाप बिसूरति। चली राखि उर स्यामल मूरति।।
प्रभु जब जात जानकी जानी। सुख सनेह सोभा गुन खानी।।
परम प्रेममय मृदु मसि कीन्ही। चारु चित्त भीतीं लिखि लीन्ही।। (1/235/1–3)

इस प्रकार से नारी में 'अविवेक' अवगुण नहीं, उसका ऐसा गुण है जो उसे समाज में **'कोमलता और भावना प्रधानता'** के कारण उच्च स्थान प्रदान करता है।

7. **असौच–** 'अशौच अर्थात् अपवित्रता का संबंध नारी के मासिक धर्म से है। यह भला अवगुण कैसे हो सकता है। इसी गुण के कारण नारी संतान को जन्म देती है और सृष्टि का सृजन होता है। रावण की दृष्टि में यह नारी का अवगुण हो सकता है, क्योंकि उसके हृदय में उस समय कुमति का वास था, पर यह नारी का एक महत्त्वपूर्ण गुण है।

8. **अदायाः–** अदाया अर्थात् दया न करना, यह परिस्थिति विशेष में एक गुण के रूप में है, अवगुण नहीं है। बच्चों के पालन–पोषण में कभी–कभी इस गुण का उपयोग किया जाता है। जब उसकी संतान कुमार्ग पर चलने लगती है, तब कभी–कभी वह कठोरतापूर्वक अर्थात् 'अदाया' से ही उसे सन्मार्ग पर लाती है और यदि उसकी संतान को कोई रोग होता है तो उसे दूर करने के लिए भी इसी गुण का उपयोग करती है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

जिमि सिसु तन ब्रन होइ गोसाईं। मातु चिराव कठिन की नाईं।।

जदपि प्रथम दुख पावइ रोवइ बाल अधीर।
ब्याधि नास हित जननी गनति न सो सिसु पीर।।

(7/74/8 तथा 7/74क)

इस प्रकार से रावण ने नारी के जिन आठ अवगुणों का बखान किया, वे अवगुण नहीं, बल्कि

सद्‌गुण हैं। **इस संदर्भ में उल्लेखनीय है कि श्रीरामचरितमानस में कहीं भी किसी के अपमान की बात नहीं है। हमें प्रसंग को समझकर 'सुमति' के हिसाब से अवलोकन करना चाहिए। कुछ विद्वानों ने श्रीरामचरितमानस की कुछ चौपाइयों में संशोधन सुझाए हैं, किंतु संत समाज ने इसे पूर्णतया नकार दिया है, क्योंकि यह तो श्रीरामजी की प्रेरणा तथा शिवजी की कृपा से रचित है। श्रीरामचरितमानस श्रीरामजी का ग्रन्थावतार है। इस विषय में इसी अंक में प्रकाशित श्री देवेन्द्र शर्मा का लेख पठनीय है।**

...पृष्ठ 54 का शेष

लगी थी और रात का अंधेरा पांव पसारने लगा था। सामान रखवाते-रखवाते पत्नी थक चुकी थी। बच्चे घर में अमीरी आते देख खुश थे। वे कभी बोरे से शक्कर निकाल कर खाते और कभी गुड़। कभी मेवे देखकर मन ललचाते और झोली भर-भर कर मेवे लेकर बैठ जाते। उनके बाल मन अभी तक तृप्त नहीं हुए थे। भक्त रामदेव जी अभी तक घर नहीं आये थे, पर सामान आना लगातार जारी था। आखिर पत्नी ने हाथ जोड़कर कहा-सेवक जी! अब बाकी सामान संत जी के आने के बाद ही आप ले आना। हमें उन्हें ढूँढ़ने जाना है, क्योंकि वे अभी तक घर नहीं आए हैं। भगवान जी बोले-वे तो गाँव के बाहर पीपल के नीचे बैठकर विट्ठल सरकार का भजन-सिमरन कर रहे हैं। अब परिजन रामदेव जी को देखने गये। सब परिवार को सामने देखकर रामदेव जी सोचने लगे, जरूर ये भूख से बेहाल होकर मुझे ढूँढ़ रहे हैं। इससे पहले कि संत रामदेव जी कुछ कहते, उनकी पत्नी बोल पड़ीं-कुछ पैसे बचा लेने थे। अगर थान अच्छे भाव बिक गया था, तो सारा सामान संत जी आज ही खरीद कर आज ही घर भेजना था क्या? भक्त रामदेव जी कुछ पल के लिए विस्मित हुए। फिर बच्चों के खिलते चेहरे देखकर उन्हें एहसास हो गया कि जरूर मेरे प्रभु ने कोई खेल खेला है। पत्नी ने कहा अच्छी सरकार को आपने थान बेचा और वे तो सामान घर में भेजने से रुकता ही नहीं था। पता नहीं कितने वर्षों तक का राशन दे गया। उससे मिन्नत करके रुकवाया-बस कर! बाकी संत जी के आने के बाद उनसे पूछकर कहीं रखवाएँगे। भक्त रामदेव जी हँसने लगे और बोले-वो सरकार है ही ऐसी। जब देना शुरू करती है तो लेने वाले थक जाते हैं। उसकी बख्शीश कभी भी खत्म नहीं होती। वह शक्ति परम तत्व एक ही है। उसको किसी भी नाम से पुकारो। विट्ठल के नाम से या राम कृष्ण साहेब के नाम से या अन्य किसी नाम से। **जब तक ईश्वर के बताये मार्ग पर चलोगे नहीं, परोपकार करोगे नहीं, एकाग्रचित् होकर भजन करोगे नहीं, हमारे अंदर में बैठा राम, कृष्ण, विट्ठल साहेब प्रसन्न होने वाला नहीं है।**

ईश्वर की बनाई ये सृष्टि, बेशकीमती खजाने से भरी है,
पर चौकीदार एक भी नहीं, व्यवस्था इतनी मजबूत,
कि दुनिया में अरबों व्यक्तियों का आवागमन हर साल होता है,
परंतु यहाँ से कोई एक तीली भी नहीं ले जा सकता।

नवधा भक्ति में नवम भक्ति

पं. श्री कैलाश त्रिपाठी, औरैया (उ0प्र0), फोन: 9897939095

भगवान श्रीराम भक्तिमती शबरी को नवधा भक्ति का उपदेश देते हुए नवम भक्ति के संबंध में कहते हैं:—

नवम सरल सब सन छलहीना। मम भरोस हियँ हरष न दीना।।

(3 / 36 / 5)

सरलता मनुष्य के अन्तःकरण की निर्मल या अविकारी अवस्था है। बालक स्वभावतः सरल होता है, क्योंकि उसके मन व बुद्धि आदि में सांसारिक विकारों का समावेश नहीं होता है। धीरे—धीरे परिवार और समाज के संसर्ग से उसमें ज्यों—ज्यों विकारों का आधान, स्थापन या समावेश होता जाता है त्यों—त्यों उसकी सरलता विलुप्त होती चली जाती है। सरलता जीवात्मा का मूल स्वभाव है, लेकिन वह समाज के संसर्ग से माया के वशीभूत होकर अपना मूल स्वभाव खो देता है और धीरे—धीरे विकारों से आच्छादित होकर कृत्रिम बनावटी या विकृत स्वभाव धारण कर लेता है। किष्किन्धाकाण्ड के वर्षा वर्णन में गोस्वामीजी का संकेत देखें।

भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी।।

(4 / 14 / 6)

माता—पिता, भाई—बहिन, परिवार आदि के साथ सम्पूर्ण समाज ही विकारी होने से बालक का निर्मल निर्विकारी अन्तःकरण भी विकारी हो जाता है और उसकी सरलता विलुप्त हो जाती है। मन, वचन और कर्म में शत प्रतिशत साम्यता होना ही सरलता है। धीरे—धीरे मन, वचन और कर्म में वैषम्य आ जाता है अर्थात् हमारे अन्दर कुछ और होता है और बाहर कुछ और दिखाते हैं, सोचते कुछ हैं, कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। यथार्थ को छिपाकर स्वयं को बनावटी रूप में प्रस्तुत करना ही प्राकारान्तर से वक्रता, कपट और छल है। यह वक्रता, छल व कपट आदि बहुत व्यापक हैं तथा इनके अनेक रूप और स्तर हैं। बाह्य दृष्टि से देखने में ऐसा लगता है कि हम अपनी वक्रता, छल या कपट से दूसरे को धोखा देते हैं, लेकिन वास्तव में या तात्विक दृष्टि से दूसरे को नहीं स्वयं को धोखा देते हैं। हमारे इन विकारों का हमारे अन्तःकरण के साथ—साथ शरीर पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और हम विभिन्न प्रकार की मानसिक एवं शारीरिक व्याधियों से पीड़ित होते चले जाते हैं। हमारी सोच विपरीत दिशा में होने से हमें लगता है कि व्याधियाँ (रोग) आती हैं। सच्चाई यह है कि व्याधियाँ हमारे पास न आती हैं न आ सकती हैं। हम ही

व्याधियों की ओर जाते हैं। ज्यों–ज्यों हमारी सरलता वक्रता, छल, कपट व प्रपंचादि में बदलती जाती है त्यों–त्यों हमारे अन्दर चिंता, भय, निराशा, लोभ, क्लेश, क्षोभ, उद्वेग, स्तेय आदि हमें नाना रूपों में पीड़ित करते चले जाते हैं।

सरलता तो स्वाभाविक साध्य अवस्था है जो जीव को स्वतः प्राप्त है। हमें केवल किसी प्रकार अपनी उस अवस्था को यथावत् बनाये रखना है और यदि किसी प्रकार विकारों के संसर्ग से हमने अपनी सरलता खो दी है तो धीरे–धीरे अपने द्वारा अपनाये गये विकारों का शमन करते हुए उसके मूल स्वभाव सरलता की ओर वापस आना है। जिसमें छल, कपट, दंभ, लोभ आदि विकार हैं उसमें सरलता नहीं हो सकती और जिसमें सरलता है उसमें छल, कपट, दभ, लोभ, झूठ, चालाकी आदि का अभाव होगा, अतः सरलता स्वयं में भक्ति है। रामराज्य में सर्वत्र सुख–शान्ति स्थापित हो जाने के पश्चात् श्रीरामजी अयोध्यावासियों को ज्ञान का उपदेश देते हुए कहते हैं–

सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई।।
मोर दास कहाइ नर आसा। करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा।।

(7 / 46 / 2–3)

अर्थात् कुटिलता रहित सरल स्वभाव तथा सहज प्राप्त लाभ में संतोष होना ही भक्ति है। मेरा दास कहलाकर भी यदि कोई मनुष्यों से आशा करता है तो उसका क्या विश्वास है? इसका आशय यह है कि ईश्वर के प्रति पूर्ण विश्वास रखना चाहिए। ईश्वर पर पूर्ण विश्वास होने पर दैन्यभाव समाप्त हो जाता है तथा इसके परिणामस्वरूप समत्व की स्थिति आ जाने से दुख–सुख, हर्ष–शोक आदि नहीं होता।

इसी प्रकार बालकाण्ड में भी तुलसीदासजी कहते हैं कि मन, वचन और कर्म से चालाकी का त्याग करके भजन करने से ही रघुनाथजी कृपा करेंगे।

मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई। भजत कृपा करिहहिं रघुराई।।

(1 / 200 / 6)

मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार अन्तःकरण चतुष्ट्य जब षड्विकारों से मलिन हो जाता है, तब सरलता के स्थान पर नाना प्रकार की वक्रता या छल, कपट प्रभावी हो जाते हैं। अन्तःकरणों में प्रथम है मन जो विभिन्न वृत्तियों का उद्गाता है, अतः सरलता के लिए मन पर नियंत्रण आवश्यक है।

'विश्वासो फलदायकम्' भारतीय चिंतनधारा का मूल मंत्र है। विश्वास के बिना यथोचित फल प्राप्त नहीं हो सकता। विश्वास की सबसे बड़ी बाधा संशय (संदेह) है। गीता में भगवान अर्जुन से कहते हैं–

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः॥ (गीता 4/40)

अर्थात् विवेकहीन और श्रद्धारहित संशययुक्त मनुष्य परमार्थ से भ्रष्ट हो जाता है। ऐसे संशययुक्त मनुष्य के लिए न यह लोक है न परलोक और न सुख ही है। अस्तु नवम भक्ति में भगवान पर विश्वास को विशेष महत्त्व प्रदान किया है। यथार्थ यह है कि विश्वास के बिना भक्ति नहीं हो सकती। यही सिद्धांत श्रीरामचरितमानस में लिखा है, यथा–

बिनु बिस्वास भगति नहिं तेहि बिनु द्रवहिं न राम।
राम कृपा बिनु सपनेहुँ जीव न लह बिश्रामु॥

(7/90क)

अतः हमें विश्वासपूर्वक इस **'नवम भक्ति'** का आचरण करना चाहिए।

पिपासा शान्त करने का उपाय

एक आदमी घोड़े पर कहीं जा रहा था। घोड़े को जोर की प्यास लगी थी। दूर कुएँ पर एक किसान बैलों से ''रहट'' चलाकर खेती में पानी लगा रहा था। मुसाफिर कुएँ पर आया और घोड़े को ''रहट'' में से पानी पिलाने लगा, पर जैसे ही घोड़ा झुककर पानी पीने की कोशिश करता, ''रहट'' की ठक-ठक की आवाज से डर कर पीछे हट जाता। फिर आगे बढ़कर पानी पीने की कोशिश करता और फिर ''रहट'' की ठक-ठक से डरकर हट जाता। मुसाफिर कुछ क्षण तो यह देखता रहा, फिर उसने किसान से कहा कि थोड़ी देर के लिए अपने बैलों को रोक लीजिए ताकि रहट की ठक-ठक बन्द हो और घोड़ा पानी पी सके। किसान ने कहा कि जैसे ही बैल रुकेंगे कुएँ में से पानी आना बन्द हो जायेगा, इसलिए पानी तो इसे ठक-ठक में ही पीना पड़ेगा। ठीक ऐसे ही यदि हम सोचें कि जीवन की ठक-ठक (हलचल) बन्द हो तभी हम भजन, सन्ध्या, वन्दना आदि करेंगे तो यह हमारी भूल है। हमें भी जीवन की इस ठक-ठक (हलचल) में से ही समय निकालना होगा, तभी हम अपना कुछ पारमार्थिक मंगल कर सकेंगे, अन्यथा उस घोड़े की तरह हमेशा प्यासा ही रहना होगा। यही इस दृष्टांत का संदेश है।

सब काम करते हुए सब दायित्व निभाते हुए ही हमें प्रभु सुमिरन में लगे रहना होगा, क्योंकि जीवन में ठक-ठक तो चलती ही रहेगी।

भगवान कहते हैं, हर बार संभाल लूँगा, गिरो तुम चाहे जितनी भी बार, पर गुजारिश एक ही है, कभी मेरी नजरों से मत गिरना।

राम और काम

डॉ. पं. राम गोपाल तिवारी 'मानस-रत्न' बाँदा (उ.प्र.), फोनः 9451142792

यह विषय इतना गहन है कि प्रभु श्रीरामजी की शरण का कवच प्रथम आवश्यक है। राम तो वह प्रकाश पुंज हैं, जहाँ सृष्टि के सम्पूर्ण दोष दुर्गुण अवगुण रूपी अन्धकार कभी नहीं टिक सकता यथा–

इहाँ मोह कर कारन नाहीं। रबि सन्मुख तम कबहुँ कि जाहीं।। (7/72/8)

यद्यपि

जहाँ काम तहँ राम नहिं। यह दोहा तुलसी साहित्य में मुझे अभी तक पढ़ने को नहीं मिला जबकि कबीर दोहावली में इस प्रकार उल्लेख है–

जहाँ काम तहँ नाम नहिं, जहाँ राम नहिं काम।
दोनों कबहूँ ना मिले, रवि रजनी इक ठाम।।

अर्थात् जहाँ विषय रूपी काम का वास होता है उस स्थान पर सद्‌गुरु का नाम एवं स्वरूप बोध रूपी ज्ञान नहीं ठहरता और जहाँ सद्‌गुरु का निवास होता है वहाँ काम के लिए स्थान नहीं होता। जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश और रात्रि का अंधेरा दोनों एक स्थान पर नहीं रह सकते, उसी प्रकार ये दोनों एक साथ नहीं रह सकते।

इसका सामंजस्य मेरी अल्पमति के अनुसार इस प्रकार से है–

जिसके अन्तःकरण में काम आदि वासनाविकार की आसक्ति होगी, वहाँ राम (यथार्थ ज्ञान घन तत्व) की स्थिति होना सम्भव नहीं है। विनय–पत्रिका में एक पद है।

मै केहि कहौं बिपति अति भारी। श्री रघुबीर धीर हितकारी।।
मम हृदय भवन प्रभु तोरा। तहँ बसे आइ बहु चीरा।।
अति कठिन करहिं बरजोरा । मानहिं नहिं बिनय निहोरा।।
तम, लोभ, मोह, अहँकारा । मद, क्रोध, बोध-रिपु मारा।।
अति करहिं उपद्रव नाथा । मरदहिं मोहि जानि अनाथा।।
मैं एक अमिट बटपारा । कोउ सुनै न मोर पुकारा।।
भागेहु नहिं नाथ उबारा । रघुनायक, करहुँ सँभारा।।
कह तुलसिदास सुनु रामा । लूटहिं तसकर तव धामा।।

चिंता यह मोहिं अपारा। अपजस नहिं होइ तुम्हारा॥ (पद सं. 125)

श्रीरामचरितमानस में भी कहा गया है यथा–

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेऽस्मदीये सत्यं वदामि च भवानखिलान्तरात्मा।
भक्तिं प्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरां मे कामादिदोषरहितं कुरु मानसं च॥ (5/मंगलाचरण/2)

इसका तात्पर्य यह है कि गोस्वामी जी कहते हैं कि मेरे अन्तःकरण को काम आदि दोषों से मुक्त कर दीजिए तभी मेरा हृदय राम का स्थाई निवास बनेगा। इसी तथ्य को महर्षि वाल्मीकि जी भी कहते हैं यथा–

काम कोह मद मान न मोहा। लाभ न छोभ न राग न द्रोहा॥
जिन्ह कें कपट दंभ नहिं माया। तेहि कें हृदय बसहु रघुराया॥
जननी सम जानहिं पर नारी। धनु पराव बिष तें बिष भारी॥

(2/130/1, 2 तथा 6)

अब इसके दूसरे पक्ष पर भी दृष्टिपात करते हैं, जिसके आधार पर यह भी कहा जाता है–

जहाँ काम तहँ राम हैं जहाँ राम तहँ काम।
सुनहु सुजन ऐसे रहैं रबि रजनी इक ठाम॥

उपर्युक्त केवल कथन शैली है इसका साहित्यिक प्रमाण नहीं है, किन्तु मानस में जहाँ राम हैं, वहीं काम सदैव उनके साथ है, उदाहरणार्थ, दशरथजी के चार पुत्र, चार फल हैं यथा–

नृप समीप सोहहिं सुत चारी। जनु धन धरमादिक तनुधारी॥
मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह समेत निहारि।
जनु पाए महिपाल मनि क्रियन्हि सहित फलचारि॥

(1/309/2 तथा 1/325)

चार फल में शत्रुघ्न (अर्थ), भरत (धर्म), लक्ष्मण (काम) और राम (मोक्ष) हैं। यहाँ (लक्ष्मण रूपी) काम के साथ (उर्मिला) योग क्रिया हैं अर्थात् काम के साथ जब भोग क्रिया होगी तब काम पतन अधोगामी नरक का द्वार होगा। श्रीमद्भगवतगीता के अनुसार–

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधः तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्॥ (गीता 16/21)

और श्रीरामचरितमानस के अनुसार

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ। (5/38)

उल्लेखनीय है कि जब काम के साथ योग क्रिया हो तो

धर्म ते बिरति जोग ते ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना॥ (3/16/1)

इसीलिए (योगात्मक काम) लक्ष्मण सदैव (मोक्ष) राम के पीछे हैं अर्थात् जीवन जब (जीव और ब्रह्म को मिलाने की) योगात्मक स्थिति आयेगी तब जोग ते ग्याना और ग्यान मोक्षप्रद बेद बखाना होगा।

विनय–पत्रिका में मेघनाद को काम कहा है–

मोह दसमौलि, तद्भ्रात अहंकार, पाकारिजित काम बिश्रामहारी॥ (पद स. 58/4)

लंका के रणांगण में यही सिद्ध किया गया है कि (भोगात्मक काम मेघनाद) को नष्ट करने के लिए (योगात्मक काम लक्ष्मण) ही सक्षम समर्थ हैं। लक्ष्मणजी रामजी के अनुगामी हैं।

छत्रि जाति रघुकुल जनमु राम अनुग जग जान।
लातहुँ मारे चढ़त सिर नीच को धूरि समान॥ (2/229)

इसी बात को गोस्वामी जी ने दोहावली में इस प्रकार कहा है–

गुरु संगति गुरु होइ सो लघु संगति लघु नाम।
चारि पदारथ में गनहिं नरक द्वारहूँ काम॥

अर्थात् काम जब क्रोध और लोभ के साथ होता है तब नरकगामी होता है (भोगात्मक काम), किंतु जब वही अर्थ, धर्म और मोक्ष के बीच में होता है तब चार फल में गिना जाता है (योगात्मक काम)।

काम यद्यपि देवताओं की सेना का विशिष्ट अजेय योद्धा है, इसलिए काम को कामदेव कहते हैं जबकि क्रोध या लोभ को क्रोधदेव या लोभदेव कभी नहीं कहते। काम सदैव देवताओं के हित के लिए ही किसी संघर्ष या आक्रमण के लिए तैयार रहता है यथा–

अस्तुति सुरन्ह कीन्ह अति हेतू। प्रगटेउ बिषमबान झषकेतू॥
चलत मार अस हृदयँ बिचारा। सिव बिरोध ध्रुव मरनु हमारा॥

(1/83/8 तथा 1/84/4)

काम तो देव पक्ष का है, दैत्य पक्ष का नहीं, अतः जब रामजी के निकट देवता आ सकते हैं तो देवताओं के साथ उनके सुरक्षाकर्मियों के रूप में काम योद्धा के रहने में कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। एक और भाव इस सृष्टि में काम सबसे सुंदर है लेकिन गोस्वामीजी ने जब राम को देखा तब उन्होंने राम को बहुत सुंदर कहा, तब किसी ने गोस्वामीजी से पूछा कि राम कितने सुंदर हैं? इसका उत्तर देने के लिए राम की सुंदरता को नापने का बाट कैसे ढूँढें? तब गोस्वामीजी ने सांसारिक लोगों से पूछा कि आप लोग सुंदरता में सर्वश्रेष्ठ किसको जानते हो? संसारी दर्शकों ने तपाक से उत्तर दिया कि इस दैहिक सृष्टि में सबसे सुंदर काम है, तब गोस्वामीजी ने राम की सुंदरता बताने में राम के साथ काम की झड़ी लगा दी। अर्थात् जहाँ–जहाँ

राम वहीं–वहीं काम। मनुजी के सामने का दृश्य देखिए–

नील सरोरुह नील मनि नील नीलधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।। (1/146)

अन्यत्र भी इसी तरह राम को कार्य के साथ जोड़कर विभिन्न प्रसंगों का वर्णन किया गया है यथा–

बय किसोर सुषमा सदन स्याम गौर सुख धाम।
अंग अंग पर वारिअहिं कोटि कोटि सत काम।।
उर मनि माल कंबु कल गीवा। काम कलभ कर भुज बलसींवा।।

(1/220 तथा 1/233/7)

जनकपुर की पुष्प वाटिका में–

मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही। मनसा बिस्व बिजय कहँ कीन्ही।। (1/230/2)

दूल्हा वेश में राम के लिए काम

कहि न जाइ सब भाँति सुहावा। बाजि बेषु जनु काम बनावा।।
जनु बाजि बेषु बनाइ मनसिजु राम हित अति सोहई।

(1/316/8 तथा छंद)

विवाह मण्डप में–

मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा। देखत राम बिआहु अनूपा।। (1/325/4)

वन पथ पर–

कोटि मनोज लजावनिहारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे।। (2/117/1)

चित्रकूट में–

लखन जानकी सहित प्रभु राजत रुचिर निकेत।
सोह मदनु मुनि बेष जनु रति रितुराज समेत।। (2/133)

भरतजी की दृष्टि में–

बलकल बसन जटिल तनु स्यामा। जनु मुनिबेष कीन्ह रति कामा।। (2/239/7)

उत्तरकाण्ड में–

रामु काम सत कोटि सुभग तन। दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन।। (7/91/7)

इन दृश्यों के आधार पर ये कहा जा सकता है कि जहाँ जहाँ राम हैं वहीं वहीं काम भी है। लेकिन ये राम के पास काम तो सृष्टि के सौन्दर्य की पराकाष्ठा या सृष्टि की सुंदरता से परे राम के रूप सौन्दर्य के वर्णन की भावाभिव्यक्ति में है। राम के निकट देह भोगेच्छा वाले वासनात्मक

काम की स्थिति कभी भी संभव नहीं, बल्कि काम को भगाने के लिए केवल एक मात्र उपाय है राम को अपने हृदय में बसा लेना। गोस्वामीजी ने मानस के अंत में रामजी से प्रार्थना की कि प्रभु इस दैहिक जीवन में काम के प्रभाव से बचने का एक ही उपाय है, वह यह कि कामी व्यक्ति को रूप की सुंदरता बहुत प्रिय लगती है। संसार में रूप के सौंदर्य में आकर्षित होकर व्यक्ति काम के वशीभूत होता है, इसीलिए काम जब किसी के ऊपर आक्रमण करता है, तब पहले अलौकिक सुंदरी ही प्रस्तुत करता है–

करहिं गान बहु तान तरंगा। बहुबिधि क्रीड़हिं पानि पतंगा।।
रंभादिक सुर नारि नबीना। सकल असमसर कला प्रबीना।।

(1/126/5 तथा 4)

गोस्वामीजी ने रामजी से कहा प्रभु आप मुझे बहुत प्रिय लगो। रामजी ने पूछा कि कितना प्रिय लगूँ? तब गोस्वामीजी की प्रियता के लिए संसार में काम प्रभावित कामी की याद आ गई वह याद जो उनके जीवन में अनुभूत है कि एक रात का भी पत्नी का वियोग सहन नहीं कर सके थे, रात में ही ससुराल पहुँच गये थे और प्रियता की वही नाप बता दी यथा–

कामिहिं नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम।।

(7/130ख)

अभी तक काम का अर्थ इन्द्रिय विषयात्मक सुख से लिया गया। अब यदि काम का अर्थ कामना से लें। कामना अर्थात् इच्छा, तब तो हमारे अन्दर किसी भी प्रकार की इच्छा या लोभ का कारण है हमारे जीवन में अभाव या किसी अन्य के सापेक्ष कुछ कमी होना और यह किसी अन्य तुलना में अपने को देखकर हम सदैव ही किसी न किसी से पीछे ही रहेंगे अर्थात् सबसे अधिक सर्व सुख, प्रतिष्ठा प्राप्त करने की कामना (काम) कभी भी समाप्त नहीं होगी। इसका एक ही उपाय है कि एक बार यदि पूर्ण काम को पा जायें तो अपूर्णता समाप्त हो जायेगी, इसीलिए गोस्वामीजी ने कवितावली में कहा है–

जग जाँचिय कोउ न जाँचिय जो जिय जाँचिय जानकि जानहिं रे।
जेहि जाँचत जाँचकता जरि जाइ जो जारत जोर जहाँ नहिं रे।।

अर्थात् एक बार (जानकी जान या जानकी प्राण) राम को माँग लेने से जाँचकता (माँगते रहने की भिखारी वृत्ति) ही भस्म (समाप्त) हो जायेगी। चूँकि कल्पवृक्ष सभी इच्छाओं को पूर्ण कर देता है, अतः यदि हमें कल्पवृक्ष मिल जाये अथवा कामधेनु मिल जाये तो हमारी इच्छा (कामना) या काम समाप्त हो जायेगा। अब विचार करें कि कल्पवृक्ष या कामधेनु कौन है...? महाराज मनुजी के शब्दों में रामजी का सम्बोधन–

सुनु सेवक सुरतरु सुरधेनू। बिधि हरि हर बंदित पद रेनू।। (1/146/1)

इसीलिए महाराज मनुजी ने बिधि हरि हर से कुछ न लेकर (कल्पवृक्ष) राम को ही माँग लिया यथा—

दानि सिरोमनि कृपानिधि नाथ कहउँ सतिभाउ।
चाहउँ तुम्हहिं समान सुत प्रभु सन कवन दुराउ।। (1/149)

अपूर्णता का भान समाप्त होते ही हम कामना (काम) मुक्त हो जायेंगे। तो पूर्णकाम कौन है?

पूरनकाम राम सुख रासी। मनुजचरित कर अज अबिनासी।। (3/30/17)

हमारे पुरातन शास्त्रों का यही कथन है—

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।। (यजुर्वेद)

इसलिए गोस्वामीजी लिखते हैं—

राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा।। (7/90/2)

भक्ति की दृष्टि से भी आठवीं भक्ति है संतोष यथा—

आठवँ जथालाभ संतोषा। सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा।। (3/36/4)

इसीलिए यह सिद्धांत है कि—

बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं।। (7/90/1)

ज्ञान की दृष्टि से (भक्ति ज्ञान के अंतर के प्रसंग में)—

ज्ञान दीपक प्रसंग में—

परम धर्ममय पय दुहि भाई। अवटै अनल अकाम बनाई।। (7/117/13)

कर्म (पुरुषार्थ रूपी परशुराम) के प्रसंग में, परशुराम लक्ष्मण संवाद में—

नहिं संतोष त पुनि कछु कहहू। जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू।। (1/274/7)

अर्थात् संतोष के बिना काम (कामनाएँ) नष्ट नहीं होता, बिनु संतोष न काम नसाहीं। रामजी के तत्व ज्ञान, (कर्म) समर्पण तथा उनकी भक्ति से ही संतोषी प्रवृत्ति सम्भव है। उदाहरणार्थ—राम को पाकर केवट काम (इच्छा) मुक्त हो गया बोल पड़ा—

अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीनदयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/7)

अर्थात् महर्षि वाल्मीकिजी के वचनानुसार केवट का हृदय काम मुक्त हुआ तो राम का गेह बन गया।

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु।
बसहु निरंतर तासु उर सो राउर निज गेहु।। (2/131)

तात्पर्य यह है कि जीव का अन्तिम लक्ष्य है राम।

सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होइ अचल जिमि जिव हरि पाई।। (4/14/8)

इस प्रकार से राम और काम (कामदेव और कामनाओं) का संबंध जो उपर्युक्त वर्णन किया गया है उसका एकमात्र सारांश यही है कि जीव को अपने परम लक्ष्य (परमात्मा की प्राप्ति) की ओर अग्रसर होने के लिए श्रीराम की शरण में जाकर करुण भाव से प्रार्थना करनी चाहिए, क्योंकि उनकी कृपा के बिना 'काम' से चाहे कामदेव के रूप में हो या कामनाओं के रूप में, छुटकारा संभव नहीं है और जब तक 'काम' से छुटकारा नहीं मिलता, तब तक जीव का कल्याण संभव नहीं है।

प्रेरणादायक कहानी

एक बार अर्जुन ने कृष्ण से पूछा–माधव! ये 'सफल जीवन' क्या होता है? कृष्ण अर्जुन को पतंग उड़ाने ले गए। अर्जुन कृष्ण को ध्यान से पतंग उड़ाते देख रहा था, थोड़ी देर बाद अर्जुन बोला–माधव! ये धागे की वजह से पतंग अपनी आजादी से और ऊपर की ओर नहीं जा पा रही है, क्या हम इसे तोड़ दें? ये और ऊपर चली जाएगी। कृष्ण ने धागा तोड़ दिया। पतंग थोड़ा सा और ऊपर गई और उसके बाद लहराकर नीचे आयी और दूर अनजान जगह पर जाकर गिर गई। तब कृष्ण ने अर्जुन को जीवन और दर्शन समझाया, पार्थ! जिन्दगी में हम जिस ऊँचाई पर हैं, हमें अक्सर लगता कि कुछ चीजें, जिनसे हम बँधे हैं वे हमें और ऊपर जाने से रोक रही हैं; जैसे:–घर, परिवार, अनुशासन, माता–पिता, गुरु और समाज और हम उनसे आजाद होना चाहते हैं। ये वे धागे होते हैं जो हमें ऊँचाई पर बनाकर रखते हैं। इन धागों के बिना हम एक बार तो ऊपर जायेंगे परन्तु बाद में हमारा वही हाल होगा जो बिना धागे के पतंग का हुआ। ''अत: जीवन में यदि तुम ऊँचाइयों पर बने रहना चाहते हो तो, कभी भी इन धागों से रिश्ता मत तोड़ना।'' **'धागे और पतंग जैसे जुड़ाव के सफल संतुलन से मिली हुई ऊँचाई को ही 'सफल जीवन कहते हैं'।**

कहीं न कहीं कर्मों का डर है,
वरना गंगा पर इतनी भीड़ न होती।
जो कर्म को समझता है, उसे धर्म को समझने की जरूरत नहीं,
पाप शरीर नहीं करता, विचार करते हैं,
और गंगा विचारों को नहीं, सिर्फ शरीर को धोती है?

जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना

श्री योगेश कुमार श्रीवास्तव, कानपुर, (उत्तर प्रदेश) फोन–9140709634

मेघनाद वध के पश्चात् रावण स्वयं युद्ध करने रणभूमि में पहुँचता है। उसे रथारूढ़ और श्रीरामजी को बिना जूते, कवच और रथ के देखकर विभीषण प्रेमवश अधीर हो उठा और प्रश्न करता है कि यह वीर-बलवान रावण किस प्रकार से जीता जा सकेगा। इसके उत्तर में श्रीराम जी ऐसे धर्ममय रथ का वर्णन करते हैं कि यह जिसके पास होगा, वह रावण क्या, संसार रूपी दुर्जय शत्रु (जन्म-मृत्यु) को भी जीत सकता है। इस प्रस्तुति में श्रीरामचरितमानस के षष्ठम् सोपान लंकाकाण्ड में वर्णित 'धर्ममय रथ' का वर्णन किया जा रहा है।

मेघनाद का वध लंका में घोर निराशा लेकर आया है। चारों तरफ त्राहि–त्राहि मची हुई है। राक्षसों का बड़ी संख्या में संहार हो चुका है। कुल मिलाकर लंका नगरी विधवाओं की चीत्कार से भर उठी और इन परिस्थितियों का एकमात्र कारण है स्वयं लंकेश। अगले दिन रावण चतुरंगिणी सेना तैयार कर सब में उत्साह का संचार करता है और रथारूढ़ हो युद्धभूमि की ओर प्रस्थान करता है। यह राम–रावण युद्ध की निर्णायक घड़ी है। दोनों ही प्रबल पराक्रमी हैं और इस युद्ध में किसी एक का भी मर्मांतक प्रहार दूसरे की इहलीला समाप्त कर सकता है अर्थात् विजयश्री किसी का भी वरण कर सकती है। रावण के सर पर मुकुट है, जिसे सिरस्त्राण भी कहते हैं, बदन पर कवच सुशोभित है, पैरों में स्वर्णिम जूतियाँ हैं और अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित रथ व कुशल सारथी। इसके विपरीत राम के पास कुछ भी नहीं–मात्र धोती, पीतांबर, तरकस और धनुष। वे नंगे पैर भूमि पर सुशोभित हैं। मानव मनोविज्ञान देखिए। विभीषण यद्यपि प्रभु की सामर्थ्य देख चुका है तथापि उसके मन में कतिपय संशय बरकरार है। वह सोचता है–

1. क्या साधन विहीन श्रीराम लंकाधिपति रावण का सामना कर पाएँगे?
2. और अगर नहीं कर पाए तो इनके पश्चात् रावण निश्चित ही मेरा वध कर देगा।
3. साधु स्वभाव का होने के बाद भी कहीं न कहीं विभीषण के मन में लंका का अधिपति बनने की कामना घर कर गई है। यह चाहत भी रावण की पराजय अर्थात् वध चाहती है।

उससे रहा नहीं गया और अंततोगत्वा वह प्रभु श्रीराम के समक्ष अपना अंतर्द्वन्द खोलकर सामने रख देता है। इस असहाय अवस्था में आप विजयश्री का वरण कैसे कर पाएँगे? न तो

आपके पास सिरस्त्राण है, न कवच, न जूते और न ही रथ? चिरपरिचित सहज स्मितियुक्त मुख–मण्डल के साथ प्रभु बोले–

सुनहु सखा कह कृपानिधाना। जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना।।
सौरज धीरज तेहि रथ चाका। सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका।। (6/80/4–5)

श्रीरामजी कहते हैं कि हे मित्र! अधीर मत हो। तुम्हें जय चाहिये न, मिलेगी। पर उसके लिये ऐसे स्थूल रथ की आवश्यकता नहीं। उसके अवयव इस स्थूल तत्वों से भिन्न होते हैं। उसके पहिये ही विशेष तरह के हैं; एक तो है शौर्य अर्थात् शूरवीरता या पराक्रम और दूसरा धैर्य अर्थात् कैसी भी स्थिति आ जाये चरम बिन्दु तक अडिग रहना। सदा सत्यनिष्ठ रहना और शील यानी सदाचार युक्त जीवन जीना, यह सत्य और शील ऐसे रथ की मजबूत ध्वजा–पताकायें हैं, अर्थात् इन गुणों के चलते युद्धरत व्यक्ति का जोश उच्च लहरा रहा होता है।

बल बिबेक दम परहित घोरे। छमा कृपा समता रजु जोरे।।
ईस भजनु सारथी सुजाना। बिरति चर्म संतोष कृपाना।। (6/80/6–7)

और मित्र विभीषण! ये जो चार घोड़े इस रथ में जुते हुये हैं इनकी भी अवधारणा अच्छे से समझ लो। ये चार हैं–बल, विवेक, दम और परहित। बल व्यायाम के सतत् अभ्यास, विवेक योग्य गुरु के शरणागत होने से, दम अर्थात् इन्द्रियों का वश में होना और मन में परहित के भाव; इन अश्व समूहों से संचालित रथ सदा विजयश्री प्राप्त करता है। ईश्वर का भजन अर्थात् उसके नाम का निरंतर सुमिरन चतुर सारथी मान लो तथा वैराग्य को ऐसे रथी की ढाल और संतोष को तलवार समझो।

दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा। बर बिग्यान कठिन कोदंडा।। (6/80/8)

दान की प्रवृत्ति (जैसे महाभारतकालीन कर्ण; इसी प्रवृत्ति के चलते जगत्प्रसिद्ध) ही फरसा, बुद्धि प्रचंड शक्ति और विज्ञान के मूल सूत्रों की जानकारी अद्भुत धनुष है। 'धर्मरथ' का वर्णन करते हुए श्रीराम जी कहते हैं–

अमल अचल मन त्रोन समाना। सम जम नियम सिलीमुख नाना।। (6/80/9)

उस विज्ञान रूपी धनुष के लिये पाप रहित और स्थिर मन दो तरकश हैं। बिना चिरस्थिर हुये लक्ष्यबेध संभव ही नहीं है, अतः सम अर्थात् मन का वश में होना आवश्यक है। जम का तात्पर्य यम से है। यम के अंग होते हैं;

अहिंसा–किसी को कष्ट व पीड़ा न देना, सभी के प्रति हित एवं सुख के भाव रखना। पर मानव, जो प्रभु की सर्वश्रेष्ठ रचना कही गयी, हिंसा के सारे प्रतिमान तोड़ दे रहा है। कितनी प्रजातियाँ लुप्त हो चलीं और बचीखुची भी भयभीत। सन् 2020 में लॉकडाउन के चलते थमे शोर

और नियंत्रित प्रदूषण में कितनों को आनन्दित करती उपस्थिति सामने आयी।

सत्य–जो जैसा है उसे वैसा ही जानना और मानना सत्य कहलाता है। झूठ बोलने वाला कभी भी निडर या एकाग्र नहीं हो सकता। एकाग्र नहीं, तब विजय कहाँ?

अस्तेय–चोरी न करना। यहाँ चोरी का तात्पर्य है मन से भी चोरी न करने से है। दूसरे की श्रेष्ठ संपदाओं को देख ललचाना यह भी चोरी है।

ब्रह्मचर्य–इन्द्रियों का संयम रखना। इन्द्रियों की चंचलता ब्रह्मचर्य के पालन में बाधक है। एक उपाय यह है कि महापुरुषों, वीरों, ऋषियों, आदर्श पुरुष के चरित्र सदैव स्मृति पटल पर रहें। भगवत् भजन इस कार्य में बहुत सहायक है।

अपरिग्रह–मन, वाणी व शरीर से अनावश्यक वस्तुओं व विचारों का संग्रह न करना अपरिग्रह है। ...(दोऊ हाथ उलीचिये यह सज्जन को काम व **''साँई उतना दीजिये जामें कुटुम्ब समाय''** जैसे वचन हमें बताये जाते रहे हैं।) हमारे अधिक संग्रह की वृत्ति से प्रकृति का भी अनावश्यक दोहन होता है, जिससे पंचभूतों की भी हानि होती है। ओजोन परत का क्षय भी इसी प्रवृत्ति के कारण से है।

शौच–शौच से तात्पर्य है शरीर व मन की शुद्धि। खानपान, स्नान आदि से शरीर की शुद्धि और विद्या, ज्ञान, सत्संग, संयम, धर्मानुकूल आचरण से मन की शुद्धि होती है। मन की शुद्धि शरीर की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है, परन्तु वर्तमान में अधिकांश साधन शरीर शुद्धि में नियोजित हो रहे हैं। कहा गया है जैसा साधन वैसा ही आहार, वैसा ही ज्ञान और उसी तरह से कर्म भी शुद्ध या अशुद्ध। तब साधन की शुद्धता पर भी बहुत ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है, तभी मन की शुद्धि हो सकती है।

संतोष–जब व्यक्ति अपनी तृष्णा व लोभ को समाप्त कर दे, तब संतोष की स्थिति आती है। अपनी योग्यता (क्षमता) से जो अर्जित कर पाए, जितना कुछ मिल पाया उसमें संतोष कर लेना चाहिए। रहीम कितनी सादगी से बता रहे–

गो धन गज धन बाजि धन और रतन धन खान।
जब आवे संतोष धन सब धन धूरि समान।।

गोस्वामी तुलसीदासजी श्रीरामचरितमानस में लिखते हैं–

बिनु संतोष न काम नसाहीं। काम अछत सुख सपनेहुँ नाहीं।।
राम भजन बिनु मिटहिं कि कामा। थल बिहीन तरु कबहुँ कि जामा।।

(7/90/1–2)

'तप'–जीवन बहुआयामी है, कभी एकसार नहीं रहता। तब हानि–लाभ, सुख–दुख, भूख–प्यास, सर्दी–गर्मी, मान–अपमान आदि द्वन्दों को शांति व धैर्य से सहन करने को तप कहा गया है।

कर्तव्य पालन में प्राप्त दुख को सहन करने को भी तप की श्रेणी में गिना जाता है।

'स्वाध्याय'–दो तरह की विद्याएँ हमें बताई जाती हैं; भौतिक विद्या और आध्यात्मिक विद्या। दोनों का ही अध्ययन करना स्वाध्याय कहलाता है, परन्तु आध्यात्मिक विद्या को प्रमुखता दी गई है; क्योंकि इसके अध्ययन से हम मुक्ति पथ पर बढ़ सकते हैं।

'ईश्वर प्राणिधान'–ईश्वर के समक्ष, उस परमसत्ता के समक्ष समर्पण कर देना। ईश्वर के प्रति अटूट, अडिग विश्वास यह विचार कर कि जो कुछ भी घटित हो रहा है या आगे होने वाला है वह सब हमारे लिए कल्याणकारी ही होगा।

भावविभोर विभीषण निर्निमेष नेत्रों से रघुनंदन का मुखमण्डल निहार रहे हैं। इतनी व्यापक सोच कभी रही नहीं उनकी और यह पदगामी संन्यासी—योद्धा उनके अंतरपट खोल रहा है, उनके अस्तित्व को झकझोर रहा है। लंका की प्राचीर के तुरन्त बाहर युद्धभूमि में खड़े विभीषण अवाक् जानकीनाथ के वचन सुन रहे हैं।

कवच अभेद बिप्र गुर पूजा। एहि सम बिजय उपाय न दूजा।। (6/80/10)

श्रीरामजी कहते हैं—विभीषण! अब अश्वों, पताकाओं, सारथी, ढाल, तलवार, धनुष—तरकश, फरसा युक्त रथ तैयार है, अब आपकी चिंता का एक ही कारण बचा : कवच और सिरस्त्राण। तो सुनो विप्र और गुरु के शरणागत रहना, उनकी आज्ञा—पालन को तत्पर रहना ही चारों ओर अभेद कवच को निर्मित करता है। ज्ञान सर्वोपरि निधि है और यह अनमोल धन हमें विप्रों और गुरुओं के समक्ष नत शिर होने से ही उपलब्ध हो सकता है। विप्र तो सदा ज्ञान—विज्ञान की सारणियों से भिज्ञ रहते हैं, ताजादम रहते हैं, तब जो जागेगा वही तो दे भी पायेगा वत्स विभीषण। संसार के समस्त आकर्षणों से दूर जो सदैव ज्ञान साधना में ही तत्पर रहता हो, ऐसा गुरु सदैव पूजनीय है और उसकी कृपा किसी कवच से कम नहीं और विभीषण इन सब साधनों के अतिरिक्त विजय का और कोई राजमार्ग भी नहीं। 'धर्मरथ' की व्याख्या करने के पश्चात् श्रीराम जी कहते हैं—

सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।।
महा अजय संसार रिपु जीति सकइ सो बीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर।।

(6/80क)

जिसका ऐसा धर्ममय रथ हो, वह फिर किस शत्रु पर विजय प्राप्त करे अर्थात् फिर उसका कोई शत्रु ही कहाँ? जिस योद्धा के पास, जिस स्थितिप्रज्ञ पुरुष के पास भी ऐसा मजबूत रथ हो, वह इस अजेय संसार रूपी समर को, अजेय अर्थात् जिससे पार पाना असंभव सा है, उस आवागमन रूपी अथाह सागर को जीत सकता है फिर रावण क्या है?

विजयी रथ की ऐसी दिव्य अवधारणा सुन विभीषण के रोम–रोम पुलकित हो उठे। कल्पना की ऐसी ऊँची उड़ान उसकी सोच में थी ही नहीं। सजल नयन बस सामने खड़ी आकृति को देखे जा रहा है, उनके आत्मविश्वास को देख रहा है और जब कुछ करते नहीं बना तो चरणों पर गिर पड़ा। रुंधे कंड से बस इतना ही कह सका विभीषण, **''बड़ी कृपा आपकी भगवन!** रथ के बहाने एक महान उपदेश आपने मुझे और समस्त मानवता को दिया।

इस छोटे से प्रकरण में श्रीरामजी द्वारा जो ज्ञान–चर्चा हुई है, असाधारण है। इसका निर्मल–शांत चित्त अवगाहन हमारी दशा और दिशा में आमूल परिवर्तन ला सकेगा, पूर्णता प्रदान कर सकेगा, जीवन–लक्ष्य की ओर ले चल सकेगा।

क्या है सबसे अच्छा

१. लोगों को खुश रखना अच्छा है, किन्तु स्वयं को खुश रखना सबसे अच्छा है।

२. बेटे को धनवान बना देना अच्छा है, किंतु बेटे को बोधवान (गुणवान) बना देना सबसे अच्छा है।

३. मजबूत घर बनाना अच्छा है, किंतु मजबूत मन बनाना सबसे अच्छा है।

४. चीजों का त्याग अच्छा है, किंतु अहंकार का त्याग सबसे अच्छा है।

५. शत्रु को जीतना अच्छा है, किंतु मन-इन्द्रियों को जीतना सबसे अच्छा है।

६. चांद-सितारों की गति जानना अच्छा है, किंतु मन के संकल्पों-विकल्पों की गति जानना सबसे अच्छा है।

७. लोगों के सामने मुस्कुराना अच्छा है, किंतु अंदर से मुस्कुराते रहना सबसे अच्छा है।

८. दुनिया का ज्ञान अच्छा है, किंतु आत्मज्ञान सबसे अच्छा है।

९. सर्वोच्च पद पर स्थित होना अच्छा है, किंतु स्व स्वरूप में स्थित होना सबसे अच्छा है।

कभी किसी के चेहरे को मत देखो बल्कि उसके मन को देखो, क्योंकि अगर सफेद रंग में वफा होती तो नमक जख्मों की दवा होती। जैसे-जैसे आपका नाम ऊँचा होता है, वैसे-वैसे शांत रहना सीखिए, क्योंकि आवाज हमेशा सिक्के ही करते हैं, नोटों को कभी बजते नहीं देखा।

बसें हृदय-मंदिर श्रीराम

सरल शास्त्री, फोन-9311384212

जय कौसल्या - प्राण प्यारे
जय दशरथ-नन्दन श्रीराम।
रघुवंशी रघुकुल-चूड़ामणि
रघुनन्दन रघुनाथ अकाम॥१॥

जय रक्षक मुनि-यज्ञ धनुर्धर
असुर-दलन कर्कश रणधीर।
शापित नारि अपावन पावन
शिवशंकर-धनु-भंजन वीर॥२॥

नील कमल सा तन छवि सुंदर
नवल कमल से नयन ललाम।
जटा-मुकुट मुनि वेश सुशोभित
फिरें नग्न पद वन सुखधाम॥३॥

धर्म ज्ञान वैराग्य सु-वैभव
यश शरीर शोभा निस्सीम।
आप वासना कर्म कर्म-फल
भव-बंधन से परे असीम॥४॥

मूल तत्व तुम सत्य सनातन
निर्गुण-सगुण स्वरूप अकाम।
शु) सच्चिदानंद ब्रह्म तुम
निराकार-साकार ललाम॥५॥

तुम अव्यक्त अखंड एकरस
निर्विकार चेतन सुखधाम।
मन-वाणी से परे अगोचर
भक्तों के मनभावन राम॥६॥

आदि न अंत न राम तुम्हारा
कण-कण बसते जगन्निवास।
ज्ञानस्वरूप अनादि पुरातन
हे जगदीश्वर घट-घट वास॥७॥

प्राणाधार तुम्हीं जीवों के
तुम ही तो हो जगदाधार।
दुख-भंजन जन-रंजन, हरते
मानव-तन धर कर भू-भार॥८॥
राम तुम्हारे ही हाथों में
सब जीवों की जीवन डोर।
तुम्हीं नचाते कठपुतली सम
जीवों को निज उँगली-पोर॥९॥
तापस रूप धरे तप मानो
तपने को भीषण वन-ताप।
तापस-लीला दिखलाने को
करते सुन्दर अभिनय आप॥१०॥
ज्ञान-योग मनु भक्ति देह धर
तज कर महलों के सुख ठाठ।
अभिनय कर सिखलाते फिरते
मानवता के सुन्दर पाठ॥११॥
मुनि-मन भावन अन्तर्यामी
जय-जय मंगलमय भगवान।
भक्त संत जन करते रहते
राम तुम्हारा नित गुण-गान॥१२॥
भज ले मन तू गुण-सुख-सागर
सीतापति से कर अनुराग।
पी ले छक कर हे मन-मधुकर
प्रभु-पद-पंकज मधुर पराग॥१३।
कोमल फूलों से भी कोमल
तरी अहल्या जिन पद-धूल।
हम नित भजते उन चरणों जिन
चुभे विपिन में चलते शूल॥१४॥
मैं शरणागत यही माँगता
करके नमन तुम्हें गुणगान।
निज चरणों की भक्ति दास को
अनुकम्पा कर करें प्रदान॥१५॥
अटकी तरणी वैतरणी में
पार लगाओ करुणा-धाम।
'सरल' दास की इतनी विनती
बसें हृदय-मंदिर श्रीराम॥१६॥

फिरहिं रामु सीता मैं हारी

श्री अवध किशोर दूबे, झारखण्ड, फोनः 8409925271

मानस प्रेमी सज्जन वृंद! अंगद ने रामजी के प्रताप को समझकर शिव सहित कैलाश पर्वत को अपने बाहुबल से तौलने का दावा करने वाले रावण को भरी सभा में चुनौती दी कि–

जौं मम चरन सकसि सठ टारी। फिरहिं राम सीता मैं हारी।। (6/34/9)

इसमें यथामति निवेदन यह है कि अंगद के कथन...''फिरहिं राम सीता मैं हारी'', में अंगद का अभिप्राय सीताजी को दांव पर लगाना नहीं था। मुझ अल्पमति का मानना है कि स्वयं मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामजी भी ऐसा नहीं करते, फिर उनका परम चतुर दूत ऐसा क्यों करेगा?

और मानस तो मर्यादा का महासागर है तो फिर अंगद के दांव पर क्या था? इस पर विचार करने की आवश्यकता है। दांव पर या अंगद का विश्वास। एक ओर अंगद का विश्वास तो दूसरी ओर जिसने तौला कैलाश अर्थात् अंगद के कहने का तात्पर्य है कि यदि किसी ने मेरे चरण को टाल (खिसका) भी दिया तो चूँकि रामजी ने जो प्रतिज्ञा की है (बध्यो चहत एहि कृपानिधाना) वह तो होकर रहेगा, राम जी तुम्हें मारेंगे भी और सीताजी को लेकर वापस जाएँगे, यह निश्चय है, किन्तु यदि तुमसे मेरा चरण टल गया तो मैं हार जाऊँगा....फिरहिं राम सीता, मैं हारी।।

el gkj tkÅxk vkj jke th d lodkbl d cny rEgkjh lodkbl d:xkAA

तुम कहते हो न कि तपस्वी राम की सेवकाई से मेरी हीनता है (निज मुख तापस दूत कहायहु) तो दिखाओ अपनी श्रेष्ठता। अंगद के कथन का भाव सीता मैं हारी क्यों नहीं? अंगद द्वारा सीताजी को दांव पर लगाना व्यावहारिक क्यों नहीं लगता? क्योंकि उसी को दांव पर लगा सकते हैं जो अपने पास/जिनके प्रतिनिधि हैं उनके पास हो, किन्तु सीताजी उस समय रावण के पास बंदी हैं (माया सीता ही सही पर ये सब उन्हीं के लिए ही हो रहा है)। रावण कड़ी सुरक्षा व्यवस्था के बीच सीताजी को अपने सुरक्षित स्थान पर रखे हुए है। सीताजी उसके पास हैं तभी तो उससे विभीषण, मंदोदरी आदि सीता को देने की बात करते हैं...देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही।.
..

सीता देहु राम कहुँ अहित न होइ तुम्हार। (5/40)

और रावण भी सीता मैं हारी पर नहीं उठा है, बल्कि वो तो वीरता को चुनौती पर, ललकार पर उठा है.

कपि बल देखि सकल हियँ हारे। उठा आपु कपि कें परचारे।। (6/35/1)

एक वीर योद्धा किसी योद्धा की ललकार सहन नहीं कर सकता, इसलिए रावण उठा। स्वयं रामजी का विचार है कि यदि स्वयं काल भी युद्ध के लिए चुनौती दे तो सुखपूर्वक लड़ूँगा। वे परशुरामजी से कहते हैं–

जौं रन हमहिं पचारै कोऊ। लरहिं सुखेन कालु किन होऊ।। (1/284/2)

इसलिए रावण सीता मैं हारी पर नहीं, बल्कि चुनौती पर उठा, क्योंकि चुनौती देने वाला सामने पांव रोप कर खड़ा है, ललकार रहा है तो प्रश्न उठता है कि अंगद की क्या विशेषता है जो सभी उद्यत हुए?

रावण के पास एक से बढ़कर एक विश्व विजेता है (एक एक जग जीति सक ऐसे सुभट निकाय), वहाँ अंगद की क्या गिनती? स्पष्ट कर दूँ कि अंगद उसी बलशाली बाली का बेटा है जिसका नाम सुनकर ही रावण सिकुड़ गया था।

अंगद नाम बालि कर बेटा। तासों कबहुँ भई ही भेटा।। (6/21/3)

अंगद ने पूछा कि कभी बाली से भेंट हुई है कि नहीं? इतना सुनते ही रावण सिकुड़ गया. ..

अंगद बचन सुनत सकुचाना। रहा बालि बानर मैं जाना।। (6/21/4)

अर्थात् अंगद उसी बाली का बेटा है जिसने रावण को अपनी कांख में दबा लिया था और अंगद कमजोर भी नहीं है इसका पहला प्रमाण बाली के कथन से है...

यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजिऐ।
गहि बाँह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिऐ।। (4/10/छंद)

अंगद बल में बाली के जैसा है, इसका एक प्रमाण वहीं अखाड़े में उन्होंने रावण के एक नवयुवक पहलवान बेटे को पटक कर दे दिया था।

पुर पैठत रावन कर बेटा। खेलत रहा सो होइ गै भेटा।।
बातहिं बात करष बढ़ि आई। जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई।।
तेहिं अंगद कहुँ लात उठाई। गहि पद पटकेउ भूमि भँवाई।।

(6/18/3–5)

अंगद ने रावण के उस पहलवान बेटे के पैर पकड़ कर घुमाकर ऐसा पटका कि उसका कचूमर निकल गया। यह दृश्य देखकर लंका के लोग भयभीत हो गए थे। वह अंगद तुच्छ कैसे? अंगद को अपने पक्ष में करने के लिए रावण भेद नीति का प्रयोग करता है, फोड़ना चाहता है, किंतु वे उसकी चालाकी समझ जाते हैं, वे तुच्छ कैसे? रावण अंगद से कहता है कि तुम उसी

बलशाली बाली के पुत्र हो—

अंगद तहीं बालि कर बालक। उपजेहु बंस अनल कुल घालक।। (6/21/5)

अर्थात् रावण की बातों में व्यंग्य है कि जिसने तुम्हारे पिता का वध किया, जिसने तुम्हारे पैतृक अधिकार किष्किंधा का राज्य वैरी सुग्रीव को दे दिया और जिस बाली की मुझ त्रैलोक्य विजयी रावण से मित्रता थी, तुम उसी बाली के पुत्र हो? तुमने तपस्वी का दूत बनकर सब कुछ मिट्टी में मिला दिया, तुम्हें इतना भी समझ में नहीं आया कि जो तेरे पिता का शत्रु है वह तुम्हारा भी शत्रु होना चाहिए और जो तुम्हारे पिता के मित्र हैं वे तुम्हारे हितैषी। तुम अपने पिता को मरवाने वाले और मारने वाले के पक्ष में हो गए हो। यह रावण की फूट डालो वाली भेद नीति थी, क्योंकि वानरी सेना में अंगद के प्रति बंदरों की सहानुभूति है, जिसे सीताजी की खोज के समय अंगद की पीड़ा पर सभी की सहानुभूति देखने योग्य थी। अंगद को रावण ने युद्धभूमि में भी हलके से नहीं लिया, बल्कि वह तो भयभीत हो गया। जब अंगद, हनुमान रावण के महल पर चढ़ गए और उसके सामने उसके प्रिय महल को ढाहने लगे तो रावण को विरोध करने का साहस नहीं हुआ—

रावन भवन चढ़े द्वौ धाई। करहिं कोसलाधीस दोहाई।।
कलस सहित गहि भवनु ढहावा। देखि निसाचरपति भय पावा।।

(6/44/2—3)

मंदोदरी आदि रानियाँ प्रिय महल की बर्बादी देखकर छाती पीट पीट कर रोते हुए रावण से रक्षा करने की पुकार करती हैं, किन्तु रावण अंगद, हनुमान से भयभीत हो गया। इतना ही नहीं, बल्कि अंगद—हनुमान, रावण के बड़े—बड़े योद्धाओं को पटक—पटक कर उनके सिर तोड़कर रावण के दरबार में उसके सामने फेंकने लगे। फिर भी रावण को कुछ भी करने का साहस नहीं हुआ।

एक एक सों मर्दहि तोरि चलावहिं मुंड।।
रावन आगें परहिं ते जनु फूटहिं दधि कुंड।। (6/44)

भला जिस अंगद की हाँक सुनकर निसाचरी सेना युद्धभूमि से भाग जाती है वो अंगद तुच्छ कैसे? युद्ध समाप्ति के बाद जब रामजी सीताजी को युद्धभूमि दिखाने लगे वहाँ वर्णन है कि रावण के जो बड़े भारी योद्धा थे सभी का अंगद—हनुमान ने संहार किया।

हनुमान अंगद के मारे। रन महिं परे निसाचर भारे।। (6/119/10)

मानस में रामजी की भुजाओं के लिए भुजदंड शब्द का प्रयोग हुआ है तो रावण के लिए भी और अंगद के लिए भी। जिस अंगद द्वारा अपनी भुजाओं को पृथ्वी पर पटक देने से रावण दरबार में भूकंप आ गया, रावण सिंहासन से गिरने लगा, रावण के दसों सिर के मुकुट पृथ्वी पर गिर

गए, वह अंगद तुच्छ कैसे? पांव रोपने से पहले की ये घटना भी अंगद के 'भुजदंड' की महिमा दर्शाती है।

कटकटान कपिकुंजर भारी। दुहु भुजदंड तमकि महि मारी।।
डोलत धरनि सभासद खसे। चले भाजि भय मारुत ग्रसे।।
गिरत सँभारि उठा दसकंधर। भूतल परे मुकुट अति सुन्दर।। (6/32/3–5)

विचार करें कि फिर अंगद रावण के लिए तुच्छ कैसे हो सकते हैं? तात्पर्य यह है कि अंगद किसी भी दृष्टिकोण से तुच्छ नहीं है। अंगद उस समय रामदूत है, अतः उसके **'मैं हारी'** से स्वामी के भी संबंध है और वे अंगद जानते थे कि राम जी सेवक के विश्वास पर कभी आँच नहीं आने देंगे।

एक कक्षा में प्रश्नोत्तर

मैडम–उस इमारत का नाम बताओ जो विश्वभर में प्रेम के प्रतीक के रूप में प्रसिद्ध है। समूची कक्षा, जो 90% हिन्दू छात्रों से भरी थी, एक साथ पुकार उठी, ''आगरा का ताजमहल''। तब एक छात्र खड़ा हुआ और कहा–''मैडम जी, विश्वभर में प्रेम के प्रतीक के रूप में ''रामसेतु'' प्रसिद्ध है, जिसे श्रीराम ने अपनी प्रिय पत्नी श्रीसीताजी की रक्षा हेतु अहंकार से गरजते समुद्र की छाती पर बनवा डाला था और फिर सेना सहित उस पुल से होते हुए लंका पर आक्रमण कर रावण का कुलसहित मर्दन कर अपनी प्रिय पत्नी को सकुशल वापिस ले आये। श्रीराम ने सेतु बाँधने वाले वानरों के हाथ नहीं काटे, बल्कि प्रेम सहित उन्हें अयोध्या ले गए। ये प्रेम है। आज पहली बार टीचर की आँखें खुलीं। **लेकिन क्या हमारी आँखें भी कभी खुलेंगी?**

भक्ति का स्वरूप

1. भक्ति जब पानी में प्रवेश करती है, पानी चरणामृत बन जाता है।
2. भक्ति जब संगीत में प्रवेश करती है, संगीत कीर्तन बन जाता है।
3. भक्ति जब घर में प्रवेश करती है, घर मंदिर बन जाता है।
4. भक्ति जब कार्य में प्रवेश करती है, कार्य कर्म बन जाता है।
5. भक्ति जब क्रिया में प्रवेश करती है, क्रिया सेवा बन जाती है।
6. भक्ति जब व्यक्ति में प्रवेश करती है, व्यक्ति मानव बन जाता है।
7. भक्ति जब सफर में प्रवेश करती है, सफर तीर्थयात्रा बन जाता है।
8. भक्ति जब भूख में प्रवेश करती है, भूख व्रत बन जाती है।
9. भक्ति जब भोजन में प्रवेश करती है, भोजन प्रसाद बन जाता है।

मानस में धर्माचरण

श्री सचिन शर्मा, होशियारपुर, सेक्टर–51, नोएडा, फोन–9310555665

लोकनायक कवि संतशिरोमणि तुलसीदास द्वारा रचित महाकाव्य 'श्रीरामचरितमानस' (मानस) हिन्दी साहित्य में बेजोड़ है। यह सरल सरस हिन्दी भाषा में लिखा है। **'मानस'** मर्यादापुरुषोत्तम भगवान के उच्च आदर्श एवं पावन चरित्रों का मानसरोवर है। मानव–जीवन के उच्चतम आदर्श, सच्चरित्र, सदाचार, पारिवारिक जीवन, कर्म–भक्ति–ज्ञान, लोक–व्यवहार, आदर्श गृहस्थ–धर्म, आदर्श राज–धर्म, पातिव्रत धर्म, भ्रातृ–धर्म एवं व्यावहारिक–धर्म का जितना प्रचार तुलसी के मानस से हुआ है, उतना विश्व साहित्य के किसी अन्य ग्रन्थ से नहीं हुआ। तुलसी का मानस धर्माचरण का स्रोत है। धर्माचरण के ज्ञान का जितना विशाल भण्डार मानस में मिलता है, उतना विश्व के किसी कवि के साहित्य में नहीं मिलता।

यहाँ सर्वप्रथम प्रश्न यह उठता है कि धर्म किसे कहते हैं?

'धर्म' शब्द देखने में तो बहुत छोटा लगता है, परन्तु इसका अर्थ बहुत व्यापक है, इसलिये 'धर्म' के अर्थ को किसी एक परिभाषा में नहीं बाँधा जा सकता। वैसे 'धर्म' का शाब्दिक अर्थ है–सत्कर्म, पुण्य, सदाचार, प्रकृति (स्वभाव), गुण, नियम आदि। किसी वस्तु का गुण या स्वभाव उस वस्तु का धर्म है, जैसे आग का गुण या स्वभाव ताप (दाहकता यानी जलाना) है तो दाहकता आग का धर्म है। यदि आग में दाहकता न हो तो आग का कोई अस्तित्व नहीं यानी दाहकता न होने पर उसे आग नहीं, राख कहते हैं।

'धर्मस्य गहना गतिः' (धर्म की गति बड़ी गहन है अर्थात् धर्म को समझना सरल नहीं है।) फिर भी धर्मशास्त्रों ने अपने–अपने ढंग से धर्म को समझाने का प्रयास किया है, अतः धर्म की व्याख्याओं से हमारे धर्मशास्त्र भरे पड़े हैं। यहाँ धर्मशास्त्रों से चुनी हुयी कुछ परिभाषाओं का ही दिग्दर्शन मात्र कराया जा रहा है।

जिस कर्म से व्यक्ति की लौकिक उन्नति हो, वही धर्म है– चार्वाक

अहिंसा और निर्वाण प्राप्ति के उपायों को धर्म कहते हैं– बौद्ध

यज्ञ, यागादि अर्थात् कर्मकांड को धर्म कहते हैं– मीमांसक

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेय शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥ (मनुस्मृति)

(मनुस्मृति में धर्म के दश लक्षण बतलाये हैं–धृति (धैर्य), क्षमा, दम (मन का संयम), अस्तेय (चोरी

न करना), शौच (बाहर–भीतर की शुद्धि), इन्द्रिय निग्रह, धी (बुद्धि), विद्या (आत्मज्ञान), सत्य और अक्रोध (क्रोध न करना)।

अहिंसा परमो धर्मः, आचारः परमो धर्मः, न दया सदृशो धर्मो (दया के समान कोई धर्म नहीं) आदि वाक्य भी धर्म की परिभाषा में कहे गये हैं।

'धारणाद् धर्मः' (जो जगत को धारण करता है, उसे धर्म कहते हैं अर्थात् जो हमें सब तरफ के विनाश और अधोगति (पतन) से बचाकर सर्वांगीण उन्नति की ओर ले जाता है, वह धर्म है।)

धर्म दो प्रकार के होते हैं–सामान्य धर्म और विशेष धर्म।

सामान्य धर्म–

अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, पवित्रता रखना, इन्द्रियों पर संयम, दान, मन पर संयम, दया और किसी के बुरा करने पर भी मन में बदले की भावना न आना–ये सभी वर्णों (जातियों) के सामान्य धर्म हैं।

विशेष धर्म–

अपने वर्ण और आश्रम के अनुसार अपने धर्म का पालन करना विशेष धर्म है।

संत तुलसीदास ने अपने मानस में स्त्रियों के लिये पति–सेवा को ही सर्वोत्तम धर्म बतलाया है।

एकइ धर्म एक ब्रत नेमा। कायँ बचन मन पति पद प्रेमा।। (3/5/10)

(तन, मन, वाणी और कर्म से पति की सेवा करना नारी का एकमात्र धर्म है।)

तुलसीदासजी ने तो परहित को बड़ा धर्म बतलाया है। 'परहित' शब्द का अर्थ है–दूसरों का भला करना। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वह समाज में पैदा होता है, समाज में जीता है और समाज में मरता है, इसलिए हर मनुष्य समाज की इकाई है। समाज के नियम–कानून, कायदे और सामाजिक मर्यादा के अनुसार रहने में ही मनुष्य की प्रतिष्ठा है। सामाजिक प्राणी होने के नाते हर व्यक्ति का समाज के प्रति कर्तव्य भी है। यदि समाज में रहने वाला व्यक्ति एक–दूसरे के सुख–दुख में सहयोग नहीं करता तो समाज सुखी नहीं रह सकता, समाज का उत्थान नहीं हो सकता। समाज को सुखी और समृद्धशाली बनाने के लिये मानव–मन में सहयोग की भावना होनी आवश्यक है। मानव–मन में परहित की भावना प्रकृति द्वारा प्रदत्त है या यों कहें कि मानव–हृदय में परहित धर्म की भावना ओत–प्रोत है। परहित–धर्म का भाव केवल मानव में ही नहीं, अपितु पशु, पक्षी और वृक्षों तक में होता है।

'परहित' के इसी महत्त्व को ध्यान में रखकर जगत के नियन्ता जगदीश्वर भगवान श्रीराम ने तो परहित (दूसरों की भलाई) को ही सबसे बड़ा धर्म बतलाया है। वे अपने भाइयों से कहते

हैं—हे भाइयो! दूसरों की भलाई (परहित) के समान कोई धर्म नहीं है—

पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। (7/41/1)

जगज्जननी भगवती सीता को अपहर्ता राक्षसराज रावण के चंगुल से छुड़ाने के लिए अपना बलिदान देने वाले मरणासन्न जटायु से श्रीराम कहते हैं—जिनके मन में दूसरे का हित करने का भाव रहता है, उनके लिये जगत में कुछ भी (कोई भी गति) दुर्लभ नहीं है—

परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं।। (3/31/9)

वेदों में भी दूसरों के उपकार (परोपकार) को परम धर्म बतलाया है। जो प्राणी दूसरे के हित के लिये अपना शरीर त्याग देता है, संत लोग सदा उसकी बड़ाई करते हैं—

पर हित लागि तजइ जो देही। संतत संत प्रसंसहि तेही।। (1/84/2)

जब लंका के समरांगण में राम—रावण का निर्णायक युद्ध होने जा रहा था, तब त्रिलोकविजयी रावण को कवचादि से सज्जित दिव्य रथ पर सवार और राम को नंगे पद बिना रथ के भूमि पर खड़ा देखकर विभीषण व्याकुल होकर बोले—प्रभु! न आपके पास कवच है और न रथ है, फिर आप बिना रथ के त्रिलोकविजयी रावण को कैसे जीत सकते हैं?

अन्तर्यामी भगवान श्रीराम भक्त विभीषण की व्याकुलता ताड़ कर बोले—हे मित्र! जो रथ रावण के पास है, उससे शत्रु को नहीं जीता जा सकता। जिस रथ से शत्रु पर विजय प्राप्त की जाती है, वह विजय रथ तो मेरे पास है और उस विजय रथ का नाम है— धर्म—रथ। वे धर्म—रथ का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जिसके पास ऐसा धर्म—रथ हो, वही वीर पुरुष शत्रु पर विजय प्राप्त करता है—

सखा धर्ममय अस रथ जाकें। जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें।। (6/80/11)

भगवान राम ने इस कथन से लोक को यह शिक्षा दी कि धर्म—रथ से त्रिलोकविजयी रावण तो क्या, चौदह लोकों को भी जीता जा सकता है। यह है धर्म की महत्ता।

धर्म के चार चरण होते हैं—सत्य, शौच, दया और दान। रामराज्य में सर्वत्र धर्म के चारों ही चरण विद्यमान थे। कहीं भी पाप नहीं था—

चारिउ चरन धर्म जग माहीं। पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं।। (7/21/3)

संतशिरोमणि तुलसीदास ने ईश्वर के अवतार का मुख्य हेतु धर्म के ह्रास (पतन) को ही बतलाया है—**जब जब होइ धरम कै हानी।** (1/121/6)

परम वीतरागी शुकदेवजी ने भी श्रीमद्भागवत में भगवान के अवतार का कारण धर्म—ह्रास और अधर्म—वृद्धि को बतलाया है—

यदा यदेह धर्मस्य क्षयो वृद्धिश्च पाप्मनः।
तदा तु भगवानीश आत्मानं सृजते हरिः॥

(राजन! जब–जब संसार में धर्म का ह्रास और अधर्म की वृद्धि होती है, तब–तब सर्वशक्तिमान भगवान श्रीहरि अवतार लेते हैं।)

यही बात लीला पुरुषोत्तम भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

(श्रीमद्भगवतगीता–4 / 7)

माया के तीनों गुणों (सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण) से परे जगन्नियंता जगदीश्वर भगवान श्रीराम साक्षात् धर्म की मूर्ति थे–**रामो विग्रहवान् धर्मः** और स्वयं भी वेद–मार्ग पर चलने वाले धर्मधुरंधर थे–

श्रुति पथ पालक धर्म धुरंधर। (7 / 24 / 2)

जिस देश का शासक अपनी मर्यादाओं में रह कर अपने वर्णाश्रम–धर्म का पालन करते हुये सन्मार्ग का अनुगामी होता है तो **'यथा राजा तथा प्रजा'** लोकोक्ति के अनुसार उस देश की प्रजा भी अपनी मर्यादाओं में रह कर अपने–अपने वर्णाश्रम–धर्म का पालन करते हुये सन्मार्ग पर चलती है।

रामराज्य में सभी लोग परस्पर प्रेम करते थे और वेदों में बतायी हुयी मर्यादा में रहकर अपने–अपने धर्म का पालन करते थे–

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती॥ (7 / 21 / 2)

सभी लोग अपने–अपने वर्णाश्रम–धर्म का पालन करते हुये वेदों में बताये हुये सन्मार्ग पर चलते थे–

बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग। (7 / 20)

अब प्रश्न उठता है कि धर्माचरण कैसे करें?

अपने–अपने वर्णाश्रम–धर्म के अनुसार सन्मार्ग पर चलना ही धर्माचरण कहलाता है। इसी से वर्तमान जीवन में सुख प्राप्त होता है और परलोक सुधरता है। जिस रामराज्य की लोग प्रशंसा करते हैं, उस रामराज्य की जनता अपने–अपने वर्णाश्रम–धर्म का पालन करती थी। माता–पिता आदि गुरुजनों को नित्य सादर प्रणाम करना, उनकी आज्ञा का पालन करना और उनकी भक्ति भाव से सेवा करना धर्म के अंग हैं। विश्ववंद्य भगवान श्रीराम भक्तों के प्रेमवश साधारण मुनष्य की तरह नित्य गुरुजनों को प्रणाम, उनकी आज्ञा का पालन और सेवा करते थे। भगवान राम

द्वारा धर्म पालन के उदाहरण श्रीरामचरितमानस (मानस) में अनेक स्थलों पर मिलते हैं। भगवान राम के धर्माचरण की एक झलक देखिए–

पुत्र–धर्म

श्रीराम नित्य प्रातःकाल उठकर अपने माता–पिता (कौसल्या–दशरथ) और गुरुवर वशिष्ठ को प्रणाम करते थे–

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा। मातु पिता गुरु नावहिं माथा।। (1/205/7)

वरदानबद्ध होने पर भी न्यायी राजा दशरथ द्वारा निर्दोष पुत्र राम को वनवास न दिये जाने पर भी अपने पूज्य पिता की कीर्ति में कालिमा न लगे और उनके वचन को सत्य करने के लिये अयोध्या की विपुल राज्यलक्ष्मी को त्याग कर सहर्ष वन–गमन कर राम ने पुत्र–धर्म का पालन किया।

शिष्य–धर्म

कुलगुरु वसिष्ठ और गुरु विश्वामित्र की नित्य चरण–वंदना, सेवा और आज्ञा–पालन कर राम ने शिष्य–धर्म का पालन किया–

जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाइ तुरत लै आवौं।। (1/218/6)

मुनिबर सयन कीन्हि तब जाई। लगे चरन चापन दोउ भाई।। (1/226/3)

भ्रातृ–धर्म

राम अपने तीनों भाइयों से बहुत स्नेह करते थे। वे साथ–साथ खाते–पीते और खेलते थे। खेल में स्वयं की जीत होने पर भी वे अपने अनुजों को जिता दिया करते थे। इस विषय में भरत ने अपना अनुभव बतलाया है कि खेल में मेरे हारने पर भी प्रभु मुझे जिता देते थे–

हारेहुँ खेल जितावहिं मोही। (2/260/8)

खेल में अपने भाइयों को जिताकर राम ने भ्रातृ–धर्म का पालन किया।

मित्र–धर्म

स्वयं पत्नी विरह से संतप्त होने पर भी राम ने विरहाकुल सुग्रीव को मित्र बनाया और मित्र से सहयोग लेने से पूर्व मित्र का दुख दूर कर राम ने मित्र–धर्म का पालन किया।

पति–धर्म

श्रीराम अपनी पत्नी सीता से हार्दिक प्रेम करते थे। सीता–हरण के बाद वे कितने दुखी हुये, कितने रोए और पागल की भाँति सीता की खोज में महीनों वन–वन भटके। सीता का पता लगने पर दुस्तर सागर पर 1000 किलोमीटर लम्बा पुल बनवाकर त्रिलोकविजयी राक्षसराज रावण का

समूल विनाश कर वंदिनी प्राणप्रिया सीता को मुक्त कराकर पति–धर्म का पालन किया।

राज–धर्म

जिस अपहृता प्राणप्रिया सीता को पाने के लिये राम को कितने पापड़ बेलने पड़े। जान की बाजी लगाकर भीषण युद्ध करना पड़ा। उसी पत्नी के चरित्र पर कुछ प्रजाजनों द्वारा उँगली उठाये जाने पर प्रजा–मनोरंजन के लिए अपनी निर्दोष, निष्पाप, निष्कलंक और गंगाजल सी पावन प्राणप्रिया सीता का परित्याग कर राम ने राज–धर्म का पालन किया।

एक विद्वान कथावाचक के अनुसार भगवान राम ने चार धर्मों की स्थापना की–सामान्य धर्म, विशेष धर्म, विशेषतर धर्म और विशेषतम धर्म। मानस में इन चारों धर्मों का भली भाँति पालन किया गया है, जैसे–

सामान्य धर्म (पितृ देवो भव, मातृ देवो भव, अतिथि देवो भव आदि) का पालन स्वयं भगवान राम ने किया। राम ने सामान्य मनुष्य की तरह सम्पूर्ण मानव–धर्म का पालन किया।

विशेष धर्म (भगवान की शरणागति+प्रेम अर्थात् भगवान कि बिना न रहना) का पालन लक्ष्मण ने किया। जब सुमित्रानन्दन लक्ष्मण ने राम के वन–गमन का समाचार सुना, तब वे व्याकुल होकर दौड़े और आँखों में आँसू भरे काँपते हुये भगवान राम के चरण पकड़ लिये। उस समय वे ऐसे छटपटा रहे थे, जैसे जल बिना मछली छटपटाती है। लक्ष्मण को परमाकुल देखकर राम ने लक्ष्मण को अपने साथ चलने की आज्ञा दी, तो मानो उन्हें पुनर्जीवन मिला। दूसरे जब काल को दिये वचन के अनुसार राम को लक्ष्मण का परित्याग करना पड़ा, तब भगवान के बिना न रह पाने के कारण लक्ष्मण ने उसी क्षण शरीर त्यागकर विशेष धर्म का पालन किया।

विशेषतर धर्म (प्रेम+शरणागति+शील अर्थात् जैसे भगवान राम रखें, वैसे रहना–जा विधि राखें राम ताहि विधि रहिए) का पालन भरत ने किया। भक्त भरत आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास के साथ राम को लौटाने चित्रकूट गये थे, परन्तु राम के यह कहने पर कि पिता–वचन का पालन करना हम दोनों का धर्म है। भरत राम की आज्ञा को शिरोधार्य कर अयोध्या लौट आये और भगवान राम ने जैसे रखे, वैसे रहकर विशेषतर धर्म का पालन किया।

विशेषतम धर्म (भगवान के भक्त के अधीन रहना और भगवान के भक्त को अपना आराध्य मानकर सेवा करना) का पालन शत्रुघ्न ने किया। शत्रुघ्न ने आजीवन भगवान राम के अनन्य भक्त भरत को अपना आराध्य मानकर उनकी सेवा में दिन–रात संलग्न रहकर विशेषतम धर्म का पालन किया।

इन चारों भाइयों ने अपने–अपने धर्म का पालन कर विश्व में कीर्तिमान स्थापित किये।

हनुमान का अद्‌भुत सेवा-धर्म

कर्मनिष्ठ, कर्मठ हनुमान का सिद्धान्त था—पहले काम, फिर आराम, इसलिये उन्होंने राम—कार्य (सीता खोज) के बीच आराम करने को विघ्न मानकर ही मैनाक पर्वत से कहा था—

राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम। (5/1)

हनुमानजी की कथनी—करनी एक थी, तभी तो तीन—तीन बाधाओं के शिरों पर ठुमकियाँ लगाते हुये दुस्तर समुद्र को पार कर सीता माता की खोज, वाटिका—विध्वंस और लंका—दहन करने के बाद ही समुद्र में कूद कर थकान मिटाई—**पूँछ बुझाइ खोइ श्रम।** (5/26)

दूसरे रात ही रात में हजारों किलोमीटर दूर हिमालय से संजीवनी लाकर रामानुज लक्ष्मण के प्राण बचाकर अद्‌भुत सेवा—धर्म का पालन किया।

भगवान राम ने लक्ष्मण के धर्माचरण को भक्ति का प्रथम सोपान बतलाया है। संक्षेप में कहा जाये तो निष्काम भाव से भगवान का भजन करना ही धर्म का सार है। कलियुग में भगवान का नाम—स्मरण ही धर्म का तत्व है। मानस में धर्माचरण के और कितने ही उदाहरण हैं, उनका कहाँ तक वर्णन किया जाये, क्योंकि धर्माचरण के उदाहरणों से समूचा मानस खचाखच भरा पड़ा है, अतः मुझे यह कहने में अतिशयोक्ति ने होगी कि संतशिरोमणि तुलसीदास का मानस धर्माचरण का स्रोत है।

रामायण का एक दृष्टिकोण यह भी

एकटक देर तक उस सत्पुरुष को निहारते रहने के बाद बुजुर्ग भीलनी के मुँह से स्वर/बोल फूटे-''कहो राम! शबरी की डीह ढूँढ़ने में अधिक कष्ट तो नहीं हुआ''? राम मुस्कुराए-''यहाँ तो आना ही था माँ, कष्ट का क्या मोल/मूल्य?'' जानते हो राम! तुम्हारी प्रतीक्षा तब से कर रही हूँ, जब तुम जन्मे भी नहीं थे। यह भी नहीं जानती थी, तुम कौन हो? कैसे दिखते हो? क्यों आओगे मेरे पास? बस इतना ज्ञात था कि कोई पुरुषोत्तम आएगा जो मेरी प्रतीक्षा का अंत करेगा। राम ने कहा-''तभी तो मेरे जन्म के पूर्व ही तय हो चुका था कि राम को शबरी के आश्रम में जाना है''। एक बात बताऊँ प्रभु! भक्ति के दो भाव होते हैं-पहला 'मर्कट भाव' और दूसरा 'मार्जार भाव'। बन्दर का बच्चा अपनी पूरी शक्ति लगाकर अपनी माँ का पेट पकड़े रहता है, ताकि गिरे न, क्योंकि उसे सबसे अधिक भरोसा माँ पर ही होता है और वह उसे पूरी शक्ति से पकड़े रहता है। दिन-रात उसकी आराधना करता है। यही मर्कट भाव है। पर मैंने यह भाव नहीं अपनाया। ''मैं तो उस बिल्ली के बच्चे की भाँति थी, जो अपनी माँ को पकड़ता ही नहीं, बल्कि निश्चिन्त बैठा रहता है कि माँ है न, वह स्वयं ही मेरी रक्षा करेगी और माँ सचमुच उसे अपने मुँह में टांग कर घुमाती है। मैं भी

शेष पृष्ठ 88 पर....

...पृष्ठ 87 का शेष

निश्चिन्त थी कि तुम आओगे ही, तुम्हें क्या पकड़ना।'' यह मार्जार भाव है। राम मुस्कुरा कर रह गए। भीलनी ने पुनः कहा–''सोच रही हूँ बुराई में भी तनिक अच्छाई छिपी होती है न, ''कहाँ सुदूर उत्तर में तुम, कहाँ घोर दक्षिण में मैं।'' तुम प्रतिष्ठित रघुकुल के भविष्य, मैं वन की भीलनी, यदि रावण का अंत नहीं करना होता तो तुम कहाँ से आते?'' राम गम्भीर हुए कहा–भ्रम में न पड़ो माँ! ''राम क्या केवल रावण का वध करने आया है''? रावण का वध तो लक्ष्मण अपने पैर से बाण चलाकर कर सकता है। राम हजारों कोस चलकर इस गहन वन में आया है, तो केवल तुमसे मिलने आया है माँ, ताकि ''सहस्रों वर्षों बाद, जब कोई भारत के अस्तित्व पर प्रश्न खड़ा करे तो इतिहास चिल्ला कर उत्तर दे कि इस राष्ट्र को क्षत्रिय राम और उसकी भीलनी माँ ने मिलकर गढ़ा था''। जब कोई भारत की परम्पराओं पर उँगली उठाये तो काल उसका गला पकड़ कर कहे कि नहीं, यह एकमात्र ऐसी सभ्यता है जहाँ एक राजपुत्र वन में प्रतीक्षा करती एक दरिद्र वनवासिनी से भेंट करने के लिए चौदह वर्ष का वनवास स्वीकार करता है। राम वन में बस इसलिए आया है, ताकि ''जब युगों का इतिहास लिखा जाये, तो उसमें अंकित हो कि 'शासन/प्रशासन/सत्ता' जब पैदल चलकर समाज के अंतिम व्यक्ति तक पहुँचे तभी वह रामराज्य है''। राम वन में इसलिए आया है, ताकि भविष्य स्मरण रखे कि प्रतीक्षाएँ अवश्य पूरी होती हैं। राम रावण को मारने भर के लिए नहीं आया है माँ। माता शबरी एकटक राम को निहारती रहीं। राम ने फिर कहा–''राम की वन यात्रा रावण युद्ध के लिए नहीं है माता! राम की यात्रा प्रारंभ हुई है, भविष्य के आदर्श की स्थापना के लिए''। राम निकला है, ताकि ''विश्व को संदेश दे सके कि माँ की अवांछनीय इच्छाओं को भी पूरा करना ही 'राम' होना है।'' राम निकला है, ताकि ''भारत को सीख दे सके कि किसी सीता के अपमान का दण्ड असभ्य रावण के पूरे साम्राज्य के विध्वंस से पूरा होता है''। राम आया है ताकि ''भारत को बता सके कि अन्याय का अंत करना ही धर्म है''। राम आया है ताकि ''युगों को सीख दे सके कि विदेश में बैठे शत्रु की समाप्ति के लिए आवश्यक है कि पहले देश में बैठी उसकी समर्थक शूर्पणखाओं की नाक काटी जाये और खर–दूषणों का घमंड तोड़ा जाये'' और राम आया है ताकि ''युगों को बता सके कि रावणों से युद्ध केवल राम की शक्ति से नहीं, बल्कि वन में बैठी शबरी के आशीर्वाद से जीते जाते है''। शबरी की आँखों में जल भर आया था। उसने बात बदलकर कहा–''बेर खाओगे राम''? राम मुस्कुराए, ''बिना खाये जाऊँगा भी नहीं माँ! शबरी अपनी कुटिया से झपोली में बेर लेकर आई और राम के समक्ष रख दिए। राम और लक्ष्मण खाने लगे तो कहा– ''बेर मीठे हैं न प्रभु''? ''यहाँ आकर मीठे और खट्टे का भेद भूल गया हूँ माँ! बस इतना समझ रहा हूँ कि यही अमृत है''। शबरी मुस्कुराई, बोली, ''सचमुच तुम मर्यादा पुरुषोत्तम हो राम''। भरत को समझना है तो राम को जानना होगा। बिना बीज को जाने वृक्ष को नहीं जाना जा सकता।

लोग कीचड़ से बचकर इसलिए चलते हैं कि कहीं कपड़े खराब ने हो जायें और कीचड़ को घमंड हो जाता है कि लोग उससे डरते हैं।

सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना

पं० रामनरेश तिवारी ''पिण्डीवासा'' प्रयागराज, फोनः 9415443173

गोस्वामी तुलसीदास द्वारा प्रणीत महाकाव्य श्रीरामचरितमानस एक ऐसा अनूठा ग्रन्थ है, जिसमें समाज के प्रत्येक वर्ग को मार्गदर्शन एवं प्रत्येक समस्या का समाधान प्राप्त होता है। इस असार संसार में मनुष्य मायाजन्य विडम्बनाओं में उलझकर अपने अस्तित्व को भूल जाता है। मानव–मूल्यों का विस्मरण कर पथभ्रष्ट हो जाता है। आज के वैज्ञानिक युग में तो मनुष्य अपने को सर्वसमर्थ मान बैठा है, जबकि उसके सभी उपक्रम उस परमसत्ता के अधीन हैं। इस यथार्थ सत्य से विभ्रमित मानव धीरे–धीरे माया–मोह वश जीवन के अमूल्य क्षणों को निष्फल व्यतीत कर रहा है। गोस्वामीजी एक ओर संतशिरोमणि थे, वहीं शास्त्रवेत्ता महाकवि के साथ–साथ समाज के उन्नायक सुधारक भी थे। उनकी सृजनशीलता ने तत्कालीन समाज को एक अभिनव एवं सुगम मार्ग प्रशस्त कर जीवन धन्य करने का सुअवसर प्रदान किया। आज भी श्रीरामचरितमानस में वर्णित सिद्धांत उसी प्रकार अनुकरणीय एवं शाश्वत हैं।

अयोध्याकाण्ड के अन्तर्गत राम के चौदह वर्ष वनवास हेतु चले जाने पर महाराज दशरथ के स्वर्गवास के बाद ननिहाल से वापस आये भरत–शत्रुघ्न के शोकग्रस्त होने के कारण गुरु वसिष्ठ ने उन्हें ज्ञानवर्धक उपदेश देकर बहुत समझाया और दशरथजी के प्रति चिन्तित भरत को चिन्तारहित करने का प्रयास किया। गुरु वसिष्ठ जी कहते हैं –

सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ॥ (2/171)

इसी प्रसंग में भरत को निश्चिन्त करने की भावना से गुरु वसिष्ठ ने समाज के विभिन्न वर्गों की सोचनीय स्थिति का उल्लेख किया है। उनके मतानुसार समाज के अधोलिखित व्यक्तियों की मनोदशा चिन्तनीय होती है। इस प्रसंग का वर्णन गोस्वामीजी ने **अयोध्याकाण्ड के 172 एवं 173 दोहों के अन्तर्गत इस प्रकार व्यक्त किया है-**

सोचिअ बिप्र जो बेद बिहीना। तजि निज धरमु बिषय लयलीना।
सोचिअ नृपति जो नीति न जाना। जेहि न प्रजा प्रिय प्रान समाना॥ (2/172/374)

अर्थात् वह ब्राह्मण सोचनीय है जिसे वेद का ज्ञान न हो। वैदिक परंपराओं से विरत ब्राह्मण जो सनातन धर्म का परित्याग कर विषय भोग में ही लीन रहता हो, वह सोच करने योग्य है।

क्षत्रियों का धर्म था राजा के रूप में शासन करना और प्रजा का पालन करना। वह राजा जिसमें नीतिनिपुणता न हो अर्थात् जो राजा नीतिज्ञ न हो और जिसे अपनी प्रजा प्राणों के समान प्यारी न हो, वह सोचनीय है। यहाँ मानस का यह संदर्भ प्रासंगिक और जीवन्त हो उठता है कि इनकी दशा सोचनीय है।

सोचिअ बयसु कृपन धनवानू। जो न अतिथि सिव भगति सुजानू।।
सोचिअ सूद्रु बिप्र अवमानी। मुखर मानप्रिय ग्यान गुमानी।। (2/172/5–6)

उस वैश्य का सोच करना चाहिए जो धनवान होकर भी कंजूस है और जो अतिथि सत्कार तथा शिव भक्ति करने में कुशल नहीं है। यहाँ वैश्य का आशय वर्तमान पूँजीपतियों तथा धनवानों से भी है। जो धनवान संग्रह करके निर्धनों, असहायों के प्रति उदार न हो अथवा अतिथियों की सेवा में जिसकी रुचि न हो और जो श्रद्धा भक्ति पूर्वक अपने धन को धार्मिक कृत्यों में न व्यय करता हो, वह मानस के अनुसार निन्दनीय एवं सोचनीय है। यहाँ तथ्य है कि गोस्वामीजी ने वर्णाश्रम व्यवस्था के अनुरूप वर्णों की सोचनीय दशा का वर्णन किया है। इसी तरह वे शूद्र सोचनीय हैं जो ब्राह्मणों का अपमान करने वाले हैं, अपनी मान बड़ाई की आकांक्षा रखते हैं अथवा अपने ज्ञान का घमंड करने वाले हैं।

सोचिअ पुनि पति बंचक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी।।
सोचिअ बटु निज ब्रतु परिहरई। जो नहिं गुर आयसु अनुसरई।। (2/172/7–8)

पुनः उस स्त्री का सोच करना चाहिए जो पति को छलने वाली, कुटिल, कलहप्रिय स्वेच्छाचारिणी है अर्थात् पतिव्रता स्त्री कदापि सोचनीय नहीं है। इसके विपरीत जो नारियाँ अपने पति से छल प्रपंच कर पर पुरुष गामिनी हों, कलह करने वाली और कुटिल स्वभाव की होती हैं, वही समाज में निन्दनीय तथा सोचनीय हैं। उस ब्रह्मचारी को भी सोचनीय अवस्था में मानना चाहिए जो अपने ब्रह्मचर्य व्रत का परित्याग कर देता है तथा अपने गुरु की आज्ञा का पालन न कर स्वेच्छाचारी है। ऐसा वटु (ब्रह्मचारी) सर्वथा चिन्तनीय (सोचनीय) है।

सोचिअ गृही जो मोह बस करइ करम पथ त्याग।
सोचिअ जती प्रपंच रत बिगत बिबेक बिराग।। (2/172)

यहाँ पर वसिष्ठ जी ने आश्रम पद्धति के विविध सोपानों में सोचनीय व्यक्तियों का संकेत किया है। गृहस्थ जीवन व्यतीत करने वाला वह गृहस्थ सोचनीय होता है जो मोहग्रस्त होकर कर्ममार्ग का त्याग कर देता है। इसी प्रकार उस संन्यासी का सोच करना चाहिए जो सांसारिक प्रपंचों में उलझा हुआ है और ज्ञान–वैराग्य से हीन हो गया है। ऐसे गृहस्थ एवं संन्यासी निश्चित रूप से चिन्तनीय अथवा सोचनीय होते हैं।

बैखानस सोइ सोचै जोगू। तपु बिहाइ जेहि भावइ भोगू।।

सोचिअ पिसुन अकारन क्रोधी। जननि जनक गुरु बंधु बिरोधी।। ¼2@173@1&2½

वानप्रस्थी वही सोच करने योग्य है जिसका मन तपस्या में नहीं लगता, अपितु जिसकी भोग विलास में आसक्ति रहती है। इसी प्रकार चुगलखोर, बिना कारण क्रोध करने वाले तथा माता–पिता, गुरु एवं बंधु–बांधवों से विरोध करने वाले भी सोचनीय हैं।

सब बिधि सोचिअ पर अपकारी। निज तनु पोषक निरदय भारी।।
सोचनीय सबहीं बिधि सोई। जो न छाड़ि छलु हरि जन होई।। (2/173/3–4)

अन्ततः गोस्वामी जी लिखते हैं कि सब प्रकार से उसका सोच करना चाहिए जो दूसरों का सदैव अनिष्ट चिन्तन करता है अर्थात् जो व्यक्ति परोपकारी न होकर अपकारी हो जाता है वह सोचनीय हो जाता है। साथ ही जो केवल अपने ही शरीर का पोषण करने वाला और अत्यन्त निर्मम स्वभाव का व्यक्ति हो वह भी सोच का पात्र है। जो व्यक्ति छल–प्रपंच में संलग्न रहता है और भगवान की भक्ति नहीं करता, जिसका मन विशुद्ध नहीं है, वह व्यक्ति सबसे अधिक सोच करने योग्य है।

इस प्रकार निष्कर्ष यह है कि इस प्रसंग से संतशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज ने समाज के विभिन्न पक्षों का संदर्भ उजागर करते हुए यह सुस्पष्ट कर दिया है कि कौन–कौन व्यक्ति समाज में सोचनीय हैं। वर्तमान समाज के परिप्रेक्ष्य में नीतिगत ये सारे सिद्धान्त सर्वथा प्रासंगिक एवं उपादेय हैं। समाज के उन सभी लोगों को जिन्हें सोचनीय बताया है इन सूत्रों पर ध्यान देकर अपने में सुधार करने की आवश्यकता है। इन सूत्र संदर्भों का महत्त्व आज भी समाज के लिए अनुकरणीय है। चाहे वह राजा (राजनेता) हो अथवा प्रजा, गृहस्थ हो अथवा संन्यासी, ब्रह्मचारी हो अथवा वानप्रस्थ, ब्राह्मण, वैश्य अथवा शूद्र चाहे जो भी हो, यदि उनमें सद्गुण अथवा वैशिष्ट्य विद्यमान नहीं है, तो वे सोच करने योग्य हैं। उन्होंने श्रीरामचरितमानस की रचना कर समाज में घटित विविध घटनाओं का विस्तृत वर्णन करते हुए भरत जी को भावी (होनहार) की प्रबलता का बोध कराया है अर्थात् जब जो होना होता है अवश्य ही होकर रहता है। वर्तमान में समाज में व्याप्त बुराइयों के उसके मूल कारण को निरूपित किया। समाज के अन्दर व्याप्त बुराइयों तथा उनके निवारण हेतु समाज के प्रत्येक पक्ष को स्पर्श करते हुए ही सुन्दर ढंग से वर्णन किया है। अस्तु जनकल्याण एवं राष्ट्रहित में सामाजिक संतुलन परमावश्यक है, जिस पर प्रत्येक भारतवासी को विवेकपूर्ण चिन्तन करना चाहिए।

किसी ने पूछा कि इत्र और मित्र में क्या फर्क है?
उत्तर मिला जो माहौल महका दे वह इत्र और जो जीवन महका दे वह मित्र।

भावी बड़ी बलवान

सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ।
हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ॥

(श्रीरामचरितमानस 2/171)

भावार्थ: मुनिनाथ ने बिलखकर (दु:खी होकर) कहा–हे भरत! सुनो, भावी (होनहार) बड़ी बलवान है। हानि–लाभ, जीवन–मरण और यश–अपयश ये सब विधाता के हाथ हैं। इसी संदर्भ में यह घटना उल्लेखनीय है–

जंगल में एक गर्भवती हिरनी बच्चे को जन्म देने को थी। वह एकांत जगह की तलाश में घूम रही थी। उसे नदी किनारे ऊँची और घनी घास दिखी। उसे वह उपयुक्त स्थान लगा शिशु को जन्म देने के लिये। वहाँ पहुँचते ही उसे प्रसव पीड़ा शुरू हो गयी। उसी समय आसमान में घनघोर बादल वर्षा को आतुर हो उठे और बिजली कड़कने लगी। उसने बाँये देखा तो एक शिकारी तीर का निशाना उसकी तरफ साध रहा था। घबराकर वह दाहिने मुड़ी, तो वहाँ एक भूखा शेर झपटने को तैयार बैठा था। सामने सूखी घास आग पकड़ चुकी थी और पीछे मुड़ी, तो नदी में जल बहुत था। मादा हिरनी क्या करती? वह प्रसव पीड़ा से व्याकुल थी। अब क्या होगा? क्या हिरनी जीवित बचेगी, क्या वह अपने शावक को जन्म दे पायेगी? क्या शावक जीवित रहेगा? क्या जंगल की आग सब कुछ जला देगी? क्या मादा हिरनी शिकारी के तीर से बच पायेगी? क्या मादा हिरनी भूखे शेर का भोजन बनेगी? वह चारों तरफ आग से घिरी है और पीछे नदी है। क्या करेगी वह? हिरनी अपने आपको शून्य में छोड़, अपने बच्चे को जन्म देने में लग गयी। कुदरत का करिश्मा देखिये। बिजली चमकी तो तीर छोड़ते हुए शिकारी की आँखें चौंधिया गयीं। उसका तीर हिरनी के पास से गुजरते शेर की आँख में जा लगा, शेर दहाड़ता हुआ इधर–उधर भागने लगा और शिकारी शेर को घायल जानकर भाग गया। घनघोर बारिश शुरू हो गयी और इससे जंगल की आग बुझ गयी। हिरनी ने शावक को जन्म दिया। हमारे जीवन में भी कभी–कभी कुछ क्षण ऐसे आते हैं, जब हम चारों तरफ से समस्याओं से घिरे होते हैं और कोई निर्णय नहीं ले पाते। तब सब कुछ नियति के हाथों (ईश्वर की इच्छा पर) सौंपकर अपने उत्तरदायित्व व प्राथमिकता पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

अन्तत: यश, अपयश, हार, जीत, जीवन, मृत्यु का अन्तिम निर्णय ईश्वर ही करता है। हमें उस पर विश्वास कर उसके निर्णय का सम्मान करना चाहिए।

अनमोल बोल

एक दिन हम सबको ऐसे परदेश के सफर पर जाना है, जिसमें जाने का (किराए का) कोई भी खर्चा नहीं है। सीट भी कन्फर्म है, फ्लाइट भी ऑन टाइम है!!.. हमारे सभी अच्छे कर्म हमारा सामान होंगे, हमारी इंसानियत हमारा पासपोर्ट होगी! प्यार हमारा वीजा होगा। इसलिए स्वर्ग तक की इस उड़ान में बिजनेस क्लास में बैठने के लिए जीवन में जितना अच्छा हो सके, उतने अच्छे काम करें।

श्रीरामचरितमानसःश्रीरामजी का ग्रन्थावतार

श्री देवेन्द्र शर्मा, गुरुग्राम, फोनः 9810199441

करन चहउँ रघुपति गुन गाहा । लघु मति मोरि चरित अवगाहा॥
जस कछु बुधि बिबेक बल मेरें। तस कहिहउँ हियँ हरि के प्रेरें॥
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥
(1/8/5, 1/31/3 तथा 1/28/3)

बंदउ तुलसी के चरन जिन्ह कीन्ह्यो जग काज।
कलि समुद्र बूढ़त लख्यो बिरच्यो सप्त जहाज॥

श्रीविक्रम संवत् 1631 चैत्र शुक्ल नवमी, भौम (मंगल) वार को ग्रह–नक्षत्रों की वही अनुकूलता थी जो कि त्रेतायुग में प्रभु श्रीराम के अवतार के समय में थी, अतः प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज ने वही दिन, हम जैसे कलिमल ग्रसित दीन–जनों के परम कल्याण हेतु, करुणानिधान दीनवत्सल प्रभु श्रीराम को सपरिवार, कलियुग में श्रीरामचरितमानस रूपी ग्रन्थावतार रूप में अवतरित (लेखन शुभारम्भ) करने हेतु, प्रकट करने हेतु अथवा प्रकाश में लाने हेतु चुना। जन–जन के हित में, कलियुग में हुए प्रभु श्रीराम के ग्रन्थावतार की चर्चा करने का विनम्र प्रयास इस प्रकार हैः–

कहा गया है कि–

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई॥ (3/15/3)

और भगवान कौन हैं?

निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥ (1/192)

विचारणीय तथ्य यह है कि हमारी तो सामर्थ्य नहीं है कि हम उन ''माया गुन गो पार'' प्रभु को ''माया गुन गो'' से पार जाकर देख सकें, तो फिर तो हमें उन ''माया गुन गो पार'' प्रभु को ''माया गुन और गो'' की परिधि और अपनी सामर्थ्य–सीमा में रह कर ही ढूँढ़ने का प्रयास करना होगा और वह भी यह विश्वास करके कि वे माया–पति श्रीभगवान अपनी ही माया से विलग कैसे हो सकते हैं? इस विषय में श्रीमद्भगवद्गीता का कथन है यथा–

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥ (4/6)

अर्थात्–मैं अजन्मा और अविनाशी स्वरूप होते हुए भी तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए

भी अपनी प्रकृति को अधीन करके **अपनी योगमाया से** प्रकट होता हूँ। प्रकट होने का हेतु भी श्रीभगवान गीताजी में बताते हैं कि–

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।। (4/8)

अर्थात् साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए पाप–कर्म करने वालों का विनाश करने के लिए और धर्म की अच्छी तरह से स्थापना करने के लिए मैं युग–युग में प्रकट हुआ करता हूँ।

कहते हैं कि वह परमपिता परमेश्वर कभी भी, किसी भी स्थिति–परिस्थिति में माया से प्रभावित नहीं होता है, तो फिर वह परमात्मा कभी माया–अधीन होगा, इसकी तो कल्पना भी कैसे की जा सकती है, तथापि वे मायापति श्रीभगवान अपनी ही माया से विलग हो सकते हैं या कि नहीं, इसका स्पष्टीकरण स्वयं श्रीभगवान ने इस प्रकार से दिया है–

''मैं अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योगमाया **''से''** प्रकट होता हूँ। व्याकरण के यथा ज्ञान के माध्यम से निवेदन है कि– **''से''** (शब्द) ''कारक'' की तीसरी विभक्ति–''करण'' और पाँचवीं विभक्ति ''अपादान'' से सम्बन्ध रखता है। अब यहाँ पर ''विलग'' होने के अर्थ वाली पाँचवीं विभक्ति– ''अपादान'' तो प्रयुक्त की नहीं जा सकती है, तब फिर, श्रीभगवान का यह वचन येनकेन प्रकारेण ''सम्बन्ध'' बनाए रखने वाली तीसरी विभक्ति–''करण'', अर्थात्– **''से, के द्वारा''** के अन्तर्गत ही आता है, अर्थात् ''योगमाया से'' श्रीभगवान प्रकट हों या फिर प्रकट होकर कोई लीला करें, उनका सम्बन्ध उनके नियंत्रण में रहने वाली **''योगमाया से''** किसी न किसी रूप में रहता ही है। निश्चय ही 'योगमाया' और 'माया' दोनों में सूक्ष्म दृष्टि से कुछ न कुछ अन्तर तो अवश्य ही होगा, क्योंकि–एक तो भक्तों का कल्याण करने वाली होती है यथा–

हरि सेवकहि न ब्याप अबिद्या। प्रभु प्रेरित ब्यापहि तेहि बिद्या।। (7/79/2)

और दूसरी–

एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।। (3/15/5)

अर्थात् जीव को भव–कूप में डालने वाली ''अविद्या–माया'' के नाम से जानी जाती है, लेकिन माया का कोई भी रूप क्यों न हो, श्रीभगवान उसे अपनी ही बताते हैं, यथा–

आदिसक्ति जेहि जग उपजाया। सोउ अवतरिहि मोर यह माया।।
(सृष्टि की सृष्टि करने वाली, अर्थात्– भगवती–आदिशक्ति।)

निज माया बलु हृदयँ बखानी। बोले बिहसि रामु मृदु बानी।।
(भगवती श्रीसती तक को भ्रम अथवा मोह में डालने वाली–महामाया)
(1/152/4 तथा 1/53/6)

और इस नाते से तो श्रीभगवान दोनों ही प्रकार की मायाओं के स्वामी हैं, अतः श्रीभगवान को ग्रन्थों में मायापति भी कहा गया है, यथा–

मायापति सेवक सन माया। करइ त उलटि परइ सुरराया।।
अस जियँ जानि भजहिं मुनि माया पति भगवान।।

(2/218/2 तथा 7/62ख)

अतः जब वे प्रभु मायापति ही हैं तो वह अपनी माया से विलग कैसे हो सकते हैं? इस संदर्भ में श्रीभगवान के स्वयं के वचन भी हैं कि मैं अपनी प्रकृति को अधीन करके **''अपनी योगमाया** (के सम्बन्ध/माध्यम) **से''** प्रकट होता हूँ।

निवेदन है कि निर्गुण निराकार परमेश्वर (ब्रह्म) की तो बात अलग है, लेकिन वह निर्गुण–निराकार परमेश्वर 'बिप्र धेनु सुर संत हित', जब ''आकार'' स्वीकार करता है तो वह ''सगुण'' हो जाता है और सगुण होते ही वह निर्गुण–निराकार परमेश्वर ''गोचर'' अर्थात्–दृष्टिगत होकर, नेत्रों का विषय बन जाता है और फिर उसके गुणों के अनुसार उसके नाम रख दिये जाते हैं, जिससे उसकी पहचान बनती है, यथा–

देखिअहिं रूप नाम आधीना। रूप ग्यान नहिं नाम बिहीना।।
रूप बिसेष नाम बिनु जानें। करतल गत न परहिं पहिचानें।। (1/21/4–5)

अब जैसे ही वह निर्गुण–निराकार परमेश्वर, आकार/स्वरूप और नाम स्वीकार करके सगुण, अर्थात् ''गोचर'' हो जाता है तो स्वाभाविक तौर पर उसका सम्बन्ध माया से ही हो जाता है, यथा–

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।। (3/15/3)

अर्थात्– ''गो गोचर जहँ लगि मन जाई'' वाले त्रिगुणों अथवा माया से होता ही है, फिर चाहे प्रभु का माया से यह सम्बन्ध दूर से हो, कम हो या फिर दिखावे के लिए ही क्यों न हो। प्रभु का माया से यह सम्बन्ध उन प्रभु की नर–लीला में पूर्ण रूप से सहायक भी होता है, जैसे–

हे खग मृग हे मधुकर श्रेनी। तुम्ह देखी सीता मृगनैनी।।
एहि बिधि खोजत बिलपत स्वामी। मनहुँ महा बिरही अति कामी।।
पूरनकाम राम सुख रासी। मनुजचरित कर अज अबिनासी।।

(3/30/9, 16 एवं 17)

उपर्युक्त नर–लीला के साथ–साथ, वे श्रीमायानाथ अपनी माया का प्रयोग भी बड़ी कुशलतापूर्वक करते हैं, जिसका श्रीमानस में एक प्रसिद्ध उदाहरण इस प्रकार मिलता है–

सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक कर्‌यो।

देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मर्‌यो।।

(3 / 20 / छंद–4 / 4)

अर्थात्– मायापति प्रभु श्रीराम ने ऐसी माया रची कि खर–दूषण के सारे राक्षस सैनिक एक दूसरे को राम–रूप में देखने लगे और एक दूसरे से आपस में ही युद्ध करके मृत्यु को प्राप्त हो गए।

इतना ही नहीं, श्रीरामचरितमानस में महामाया–महाशक्ति भगवती श्रीसीताजी स्वयं भी अपनी माया–शक्ति के प्रभाव का प्रयोग करती दिखाई देती हैं, यथा–

सीय सासु प्रति बेष बनाई। सादर करइ सरिस सेवकाई।।
लखा न मरमु राम बिनु काहूँ। माया सब सिय माया माहूँ।। (2 / 252 / 2–3)

निःसन्देह ही, शाश्वत रूप में श्रीभगवान ''माया गुन गो पार'' ही हैं, फिर भी ग्रंथों के माध्यम से श्रीभगवान के उपर्युक्त वचन और उन करुणानिधान–दीनवत्सल प्रभु की लीला की चर्चा से यह ज्ञान मिलता है कि ''माया'' के बिना उन परम–प्रभु का काम भी तो नहीं चलता, जिसके दो–तीन उदाहरण ऊपर भी दिए गए हैं, इसीलिए, वे अनंतकोटि–ब्रह्माण्डनायक करुणानिधान श्रीभगवान, महाराज श्रीमनु और महारानी शतरूपाजी के समक्ष प्रकट होकर स्वयं कहते हैं कि–

इच्छामय नरबेष सँवारे । होइहउँ प्रगट निकेत तुम्हारे।।
अंसन्ह सहित देह धरि ताता। करिहउँ चरति भगत सुखदाता।। (1 / 152 / 1–2)

और मेरे साथ–साथ–

आदिसक्ति जेहिं जग उपजाया। सोउ अवतरिहि मोर यह माया।। (1 / 152 / 4)

हम दीन–जनों का काम भी तो ''माया गुन गो पार'' वाले प्रभु से चलता भी कहाँ है? क्योंकि–

ब्यापकु एकु ब्रह्म अबिनासी। सत चेतन घन आनंद रासी।।
अस प्रभु हृदयँ अछत अबिकारी। सकल जीव जग दीन दुखारी।।

(1 / 23 / 6–7)

अतः हमें तो...

सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं। कृपासिंधु जन हित तनु धरहीं।।
स्याम गौर मृदु बयस किसोरा। लोचन सुखद बिस्व चित चोरा।।
नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।।
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा।।

(1 / 122 / 1, 1 / 215 / 5, 1 / 146 तथा 5 / 46 / 2)

अर्थात् दीन–जनों के दीन–वचन (पुकार) सुनने वाले और अपनी विशाल भुजाओं से दीन–भक्तों को उठा कर हृदय से लगाने वाले नयनाभिराम ''नयनानंद दान के दाता'' सगुण–साकार भगवान श्रीराम और श्रीकृष्ण ही चाहिए।

श्रीभगवान और माया के सम्बन्ध में जो भी कुछ पूर्व में कहा गया है, निश्चित रूप से वह अद्वैतवादी (ज्ञान–मार्गियों) को तो शून्य–मात्र भी स्वीकार नहीं होगा और वे उपर्युक्त कथनों से क्षोभित भी होंगे, लेकिन भक्ति तो द्वैत–भाव से ही होती है। उसमें भी प्रभु का–''लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम'' (1/146) वाला स्वरूप नयनों का विषय बनता है और यदि वह स्वरूप न हो तो फिर–''इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा'' (1/216/5) और ''इष्टदेव इव सब सुख दाता''(1/242/5) वाली भक्ति हो भी कैसे सकती है? मानस में अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं जिनमें–भक्तों ने प्रभु से भेद–भक्ति का ही वरदान माँगा, यथा–

ताते मुनि हरि लीन न भयऊ। प्रथमहिं भेद भगति बर लयऊ।।
ताते उमा मोच्छ नहिं पायो। दसरथ भेद भगति बर पायो।।

(3/9/2 एवं 6/112/6)

और तो और अमर सप्त–ऋषियों में एक ब्रह्मज्ञानी, त्रिकालदर्शी, लेकिन भक्ति–प्रधान बने महर्षि वसिष्ठ जैसे सर्वोत्कृष्ट महामुनि भी श्रीभगवान से वरदान में यही माँगते हैं कि–

नाथ एक बर मागउँ राम कृपा करि देहु।
जनम जनम प्रभु पद कमल कबहुँ घटै जनि नेहु।। ¼7@49½

अर्थात्–मुझे अनेक जन्म मिलें और प्रत्येक जन्म में आपका सान्निध्य मिले तथा किसी भी जन्म में आपके श्रीचरणों के प्रति मेरा प्रेम कम न हो। यही तो अनन्य भक्ति है और यह तो द्वैत–भाव से ही होती है, अन्यथा एक ब्रह्मज्ञानी, मोक्ष जिसकी हथेली पर रहता हो, श्रीराम रूप में परब्रह्म के जो गुरु हों, उन्हें अनेक जन्म की बात सोचने की क्या आवश्यकता पड़ गई।

और फिर जगतवंद्य भगवान श्रीशंकर भी तो इस विषय में सबसे आगे हैं–

बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग।। (7/14क)

कुल मिला कर भक्ति तो प्रथमतः द्वैत भाव के माध्यम से ''गोचर'' का ही विषय है, क्योंकि दूसरा होगा तभी तो वह दिखेगा और देखने में मन–भावन होगा तो उसके प्रति अनुराग की सृष्टि होगी, बाद में भले ही यह नयनों का विषय, हृदय (ध्यान) का विषय बन जाए अर्थात् भक्त का परमार्थ तो प्रभु (उसके इष्टदेव) के गोचर (दर्शन) होने पर ही सिद्ध होता है, चाहे वह ''नाम–रूप–लीला–धाम'' इन चारों में से कोई एक हो या फिर ये चारों ही हों या फिर इन चारों को ही संजोये हुए श्रीरामचरितमानस रूपी ग्रन्थ के स्वरूप में हो। ध्यानाकर्षण योग्य बात यह है

कि इस प्रस्तुत लेख में मानस में उपलब्ध जो शीर्षक–वचन हैं... ''तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा'' इसमें प्रभु के ''बिबिध–सरीरा'' में अवतार लेने हेतु, किसी आकार, स्वरूप, गुण अथवा शरीर का प्रतिबन्ध अथवा सीमा नहीं है। ''बिबिध सरीरा...'' में 'बिप्र धेनु सुर संत हित' हेतु वे करुणानिधान प्रभु किसी भी ''शरीर'' या स्वरूप में अवतार ले सकते हैं। उन्होंने विविध शरीरों में अवतार लिए भी हैं।

वैसे तो सृष्टि का एक–एक कण उन प्रभु का ही अवतार है, लेकिन ग्रन्थों में उन सर्वशक्तिमान दीनानाथ प्रभु के कहीं पर दस अवतार और कहीं पर चौबीस अवतारों का वर्णन प्रसिद्ध है। उन दीनवत्सल प्रभु ने तो सृष्टि–सुर–संत के हित हेतु, दीन मछली से लेकर अनंतकोटि ब्रह्माण्डनायक विराट स्वरूप तक के महा अवतार धारण किए हैं। हमारे लिए तो ''बिबिध सरीरा'' में वे परम प्रभु चाहे श्रीराम और श्रीकृष्ण के शरीर अथवा स्वरूप में हों अथवा किसी अन्य स्वरूप में हों, उनका रूप–स्वरूप, श्रीवामन–श्रीनृसिंह आदि कोई भी हो और वह स्वरूप श्रीरामचरितमानस ग्रन्थ के स्वरूप में भी हो सकता है, लेकिन अवश्य ही वे प्रभु हमारे लिए...

पुण्यं पापहरं सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं
मायामोहमलापहं सुविमलं प्रेमाम्बुपूरं शुभम्।

(7/समापन श्लोक–2)

के गुणों से युक्त श्रीभगवान ही होने चाहिए, जो हमें ''संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दह्यन्ति'' से बचा सके।

इसीलिए कहा गया कि–

राम जनम के हेतु अनेका। परम बिचित्र एक तें एका।।
सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं। कृपासिंधु जन हित तनु धरहीं।। (1/122/2–1)

परम प्रभु के ''परम विचित्र एक तें एका'' अवतारों में प्रभु श्रीराम के अवतार का मुख्य हेतु लिखा गया कि–

जब जब होइ धरम कै हानी । बाढ़हि असुर अधम अभिमानी।।
करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी। सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी।।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।। (1/121/6–8)

और यह भी बताया गया कि वे करुणानिधान श्रीभगवान ''बिप्र धेनु सुर धरनी'' और भक्तों की पीड़ा इस प्रकार हरते हैं–

असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु।
जग बिस्तारहिं बिसद जसु राम जनम कर हेतु।। (1/121)

विचार करें कि—

''भगत भूमि भूसुर सुरभि और सुर—संत'' के हित—हेतु, प्रभु श्रीराम ने त्रेतायुग में अवतार लिया और धर्म के विरोधी कहें या यों कहें कि धर्म को भ्रष्ट—नष्ट करने वाले रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद और इनके सहायकों—ताड़का, सुबाहु, खर—दूषण आदि आदि राक्षसों का नाश किया और धर्म की पुनः स्थापना की।

अब विचार करें कि धर्म दूषित, भ्रष्ट और नष्ट किस प्रकार होता है, तो इस विषय में श्रीरामचरितमानस में भगवान श्रीराम के वचन हैं कि—

खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी।।
जहँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई। हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई।।
काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन।।
बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों।।
झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना।।
बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाइ महा अहि हृदय कठोरा।।
पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।
ते नर पाँवर पामय देह धरें मनुजाद।।
लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न।।
काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई।।
जब काहू कै देखहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती।।
स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी।।
मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आपु गए अरु घालहिं आनहिं।।
करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा।।
अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी।।
बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेषा। दंभ कपट जियँ धरें सुबेषा।।
ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेताँ नाहिं।
द्वापर कछुक बृंद बहु होइहहिं कलिजुग माहिं।।

(7/39/3—8, 7/40/1—8 एवं 7/40)

श्रीरामचरितमानस की उपर्युक्त पंक्तियों में मनुष्य के जो कुछ दोष—दुर्गुण—अवगुण कहे गए हैं, ये सभी धर्म की हानि करने वाले और अधर्म की वृद्धि करने वाले हैं। जब मनुष्य के स्वभाव/आचरण में इन दोषों—दुर्गुणों की अति हो जाती है, तब—

जिन्ह के यह आचरन भवानी। ते जानेहु निसिचर सम प्रानी।। ¼1@184@3½

अर्थात् ऐसे ही धर्म की हानि करने वाले और अधर्म की वृद्धि करने वाले दोष–दुर्गुण–अवगुण से युक्त प्राणियों को राक्षस अथवा निशाचर कहा जाता है और ये ही 'धर्म की ग्लानि' का कारण बनते हैं तथा ऐसे ही राक्षसों का वध/नाश करके धर्म की पुनः स्थापना हेतु प्रभु 'बिबिध सरीरा' में आकर अवतार लिया करते हैं।

गुरु, ग्रन्थों और सत्संग के माध्यम से ज्ञान मिलता है कि श्रीभगवान अवतार लेकर इन राक्षसों के भौतिक स्वरूप का तो नाश कर देते हैं, लेकिन इनका उपर्युक्त स्वभाव अथवा आचरण–गत, आध्यात्मिक प्रतिकूल अथवा आध्यात्मिक शत्रु स्वरूप पूर्ण रूप से नष्ट नहीं होता, क्योंकि पंच भौतिक सृष्टि का तो नियम ही यही है कि–

कहहिं बेद इतिहास पुराना। बिधि प्रपंचु गुन अवगुन साना।।
जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।

(1/6/4 तथा 1/6)

यह भी कहा है कि यह पंच भौतिक प्रकृति त्रिगुणात्मक है, जिनमें से सत्व गुण तो सर्वदा और सर्वथा कल्याणप्रद रूप में मान्य है। रजो गुण से भी कुछ अधिक समस्या नहीं होती, लेकिन यदि अनर्थ होता है तो वह तमोगुण से ही होता है और राक्षस तो **''होइहि भजनु न तामस देहा''** (3/23/5) अर्थात् तमोगुण प्रधान ही होते हैं, जिनके आध्यात्मिक शत्रु स्वरूप का वर्णन पूज्यपाद श्रीगोस्वामी जी विनय पत्रिका में इस प्रकार करते हैं–

मोह दशमौलि, तद्भ्रात अहँकार, पाकारिजित काम विश्रामहारी।
लोभ अतिकाय, मत्सर महोदर दुष्ठट, क्रोध पापिष्ठट-विबुधांतकारी।।
द्वेष दुर्मुख, दंभ खर, अकंपन कपट, दर्प मनुजाद मदशूलपानी।
अमितबल परम दुर्जय निशाचर-निकर सहित षडवर्ग गो-यातुधानी।।

(पद सं. 58/4,5)

अर्थात् श्रीगोस्वामीजी रावण को मोह, कुम्भकर्ण को अहंकार, मेघनाद को शान्ति हरणकर्ता, काम और अन्य राक्षसों जैसे–अतिकाय को लोभ, महोदर को बलवान मत्सर, देवान्तक को क्रोध, दुर्मुख को द्वेष, खर को दंभ, अकंपन को कपट, मनुजाद को दर्प और शूलपाणि को मद बताते हुए लिखते हैं कि हमारे हृदय की लंका के मोहरूपी राजा रावण और इसके राज परिवार के अन्य इन प्रबल दुष्ट राक्षसरूपी अहंकार, कामादि सेनापतियों पर विजय पाना अति कठिन है। इन दोषों–दुर्गुणों–अवगुणों को 'मानस–रोगों' और दूसरे शब्दों में 'माया' की संज्ञा भी दी गई है। इन मोह रूपी राजा रावण तथा अहंकार, कामादि सेनापतियों की श्रीरामचरितमानस में बहुत बड़ी सेना भी बताई गई है, यथा–

ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड।

सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड।। (7/71क)

इन पर नियंत्रण ही हो जाए तो भी जीव कल्याण को प्राप्त हो जाता है। श्रीगीताजी में भगवान के वचनों के अनुसार इस हेतु सतत अभ्यास की आवश्यकता है–

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते। (गीता–6/35)

इस प्रकार वैराग्य की सहायता से अभ्यासपूर्वक पहले तो इन आध्यात्मिक शत्रुओं अर्थात् मानस रोगों से युक्त अथवा पीड़ित मन को वश में करें और फिर–

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः।
छित्त्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत।। (गीता–4/42)

अर्थात् विवेक ज्ञान रूपी तलवार से इन (आध्यात्मिक–शत्रुओं) का नाश करें।

श्रीभगवान के उपर्युक्त वचनों को पूज्यपाद श्रीगोस्वामीजी मानस में इस प्रकार लिखते हैं–

बिरति चर्म असि ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरि भगति देखु खगेस बिचारि।। (7/120ख)

ध्यान देने योग्य परम आवश्यक बात यह है कि श्रीगीताजी में श्रीभगवान अपने वचनों में उपर्युक्त आध्यात्मिक शत्रुओं के नाश हेतु विवेक ज्ञानरूपी तलवार का प्रयोग करने का उपदेश करते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि यह **''विवेक-ज्ञानरूपी अस्त्र''** कहाँ से मिले? कलमल हरणी श्रीमानसजी इस प्रश्न का उत्तर हमें इस प्रकार देती हैं कि–

बिनु सतसंग बिबेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई।।
बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग।।

(1/3/7 तथा 7/61)

श्रीरामचरितमानस की उपर्युक्त तीन मन्त्र–पंक्तियाँ हमें हमारी अनेक समस्याओं का समाधान प्रदान करती हैं, यथा–

विवेक जीवन का अनमोल और परम आवश्यक तत्व है, सो प्रथम मन्त्र–पंक्ति हमें विवेक का स्रोत बताती है और वह स्रोत सत्संग है जो हमें प्रभु श्रीराम की कृपा से ही सुलभ हो पाता है। श्रीरामचरितमानस का उपर्युक्त दोहा यह उपदेश करता है कि सत्संग केवल विवेक का ही स्रोत नहीं है, यह तो हमारे मनोमल को धोने वाली, अनेक प्रकार की श्रीभगवान की पावन कथाओं का भी स्रोत है। श्रद्धा विश्वासपूर्वक श्रवण करने पर श्रीभगवान की पावन कथाएँ, हृदय रूपी लंका में राज करने वाले मोहरूपी रावण को परास्त करने वाली होती हैं और जब मोहरूपी राजा रावण ही परास्त हो जाएगा तो फिर तो इस राजा के सेनापति और समस्त सेना भी मारी जाएगी या

फिर पलायन कर जाएगी। इस प्रकार से ''निर्मल मन जन सो मोहि पावा'' अर्थात् जीव निर्मल मन की अवस्था को प्राप्त होकर श्रीभगवान के पतितपावन श्रीचरण–कमलों में दृढ़ अनुरागी हो जाएगा और फिर श्रीभगवान की शरणागति प्राप्ति हेतु योग्य हो जाएगा।

श्रीमानस जी, हमें सत्संग अथवा सत्संगति के और भी अनेक फल इस प्रकार बताती हैं–

सुनि आचरज करै जनि कोई। सतसंगति महिमा नहिं गोई।।
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई।।
सोइ भरोस मोरें मन आवा। केहिं न सुसंग बड़प्पन पावा।।

(1/3/2,5,6 एवं 9 तथा 1/10/8½

अर्थात् सत्संग और सत्संगति मनुष्य को लोक और परलोक दोनों में बड़प्पन प्रदान करते हैं, लेकिन केवल एक अकेले सत्संग के ही माध्यम से प्राप्त विवेक, हरि–कथा, मोह का निराकरण, निर्मल मन, प्रभु चरणों में दृढ़ अनुराग और फिर प्रभु शरणागति प्राप्ति की योग्यता, इन सब अनमोल पदार्थों के माध्यम से प्राप्त जीव की निर्मल अवस्था का परिणाम बताते हुए श्रीभगवान कहते हैं कि–

बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा।। (7/33/8)

अर्थात् भक्तवत्सल प्रभु श्रीराम कहते हैं कि अकेले सत्संग सेवन से ही जीव की समूची भव–बाधा मिट जाती है, सत्संग जीव को पतितपावनी श्रीहरि–कथा के माध्यम से पहले तो पाप (मोह) से विमुख (मुक्त) करता है। फिर उसे धर्म परायण बनाता है, तदुपरान्त उसे प्रभु–उन्मुख (प्रभु के प्रति अनुराग से युक्त) करता है और अन्ततोगत्वा सत्संग जीव को प्रभु के सम्मुख ही कर देता है। जीव का यही एकमात्र ऐसा लक्ष्य है जिसकी प्राप्ति के लिए भक्ति, ज्ञान और वैराग्य तीनों प्रकार के साधक जन्म–जन्मों तक नाना प्रकार के यत्न करते हैं, जिनमें प्रभु के **''नाम-रूप-लीला-धाम''** ये चारों तो अपरिहार्य रूप से सम्मिलित होते ही हैं।

शेष अगले अंक में....

भक्ति के चार लक्षण : चैतन्य महाप्रभु

१. साधु संग - साधु जो कल्याण के लिए निर्देश करे।
२. नाम कीर्तन - इष्ट के जिस नाम से प्रेम हो वही करे। पूर्ण श्रद्धा हो।
३. भागवत श्रवण - नित्यप्रति पाठ।
४. मथुरावास - तीर्थ क्षेत्र में निवास।

श्रीरामकथा में वन्य प्राणियों की सक्रिय भूमिका

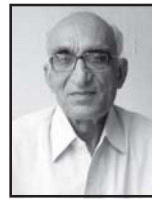

पं. राधाकृष्ण पाठक (अतीत), भांडेर, जिला दतिया (मध्य प्रदेश)
फोन–8770436182

श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड में नारद का अभिमान प्रसंग है और यही वह प्रसंग है, जिसमें नारद मुनि का शाप श्रीरामावतार का हेतु बना। भगवान श्रीराम का महाराजा दशरथ के बड़े पुत्र के रूप में जन्म, अयोध्या राजगद्दी का उत्तराधिकारी होना एवं उनका वन–गमन इसी शाप का परिणाम है, क्योंकि श्रीराम वन नहीं जाते तो कैसे सीता माँ का हरण होता और कैसे लीला पुरुषोत्तम राम विरही बनकर वन के लता वृक्षों से सीता जी का पता पूछते और कैसे लंका–विजय में वानर जाति का सहयोग मिलता। नारद जी का शाप इस प्रकार से था–

भले भवन अब बायन दीन्हा। पावहुगे फल आपन कीन्हा।।
बंचेहु मोहि जवनि धरि देहा। सोइ तनु धरहु श्राप मम एहा।।
कपि आकृति तुम्ह कीन्हि हमारी। करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी।।
मम अपकार कीन्ह तुम्ह भारी। नारि बिरहँ तुम्ह होब दुखारी।।

(1 / 137 / 5–8)

लंका–विजय में वानर जाति का सहयोग भी शाप का ही परिणाम है। साथ ही साथ दंडकारण्य में जहाँ राक्षस राज था, वहाँ इन्हीं वन्य प्राणियों का सहयोग एक शापित पूंजी के रूप में श्रीरामकथा की परिपूर्णता है। श्रीरामकथा पर यदि अब हम विचार करें तब पाएँगे कि जिन प्राणियों को हम प्रज्ञाहीन मानव से असामान्य समझते हैं, श्रीरामचरितमानस के पात्र वहाँ कमतर नजर आते हैं। आज मनुष्य संवेदनाहीन हो गया है, अपनी आँखों के सामने होते अत्याचार को देखते हुए भी विरोध करने से डरता है। वहीं एक पक्षी जो यह जानते हुए कि मैं अगर इस महाबली रावण का विरोध करूँगा, तब मेरा जीवित रहना असंभव है, फिर भी एक अबला नारी की पुकार सुनकर अन्याय और अत्याचार का सामना करने को वह अपना धर्म मानता है। जीवन की सार्थकता समझता है कि मैं राम जी के कार्य में तो काम आ सका। यहाँ यह भी विचारणीय है कि गीधराज जटायु की जानकारी कितनी विचारणीय और सराहनीय है। उन्हें यह भी मालूम है कि यह नारी अयोध्या नरेश दशरथ की पुत्रवधू है। भक्ति और समर्पण की पराकाष्ठा का इससे बड़ा क्या उदाहरण हो सकता है। बिन जाने निर्बल का बल बन जाना हम मनुष्यों के लिए एक सीख है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

गीधराज सुनि आरत बानी। रघुकुलतिलक नारि पहिचानी।।
रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होही। निर्भय चलेसि न जानेहि मोही।।

(3/29/7 एवं 11)

प्रेम रस धार बह निकली जब श्रीराम वन को चले। राम वन गमन नितांत आवश्यक लगता है। चाहे छोटा गाँव हो, बड़े नगर हों या वन में रहने वाले वनवासी, ऋषि, मुनि, पशु, पक्षी, सारा परिमंडल ही भयाक्रांत होकर जीवन जीने के लिए मजबूर हो रहा था। यदि राम वनगमन न होता तो इन सूखे व्याकुल कंठों को प्रेम रसधार कहाँ से मिलती और यही कारण है कि जब–जब प्रेम रस सूखने लगता है, तब तब एक अवतार होता है और सभी भयाक्रांत प्राणियों को इसकी खबर प्रकृति दे देती है। यही कारण है कि अयोध्या में उगे सूरज का प्रकाश चारों दिशाओं में फैल गया था। यहाँ तक कि रावण की लंका में भी भगवान श्रीराम के न जाने कितने भक्त नजर आते हैं। यह ईश्वर के प्राकट्य का प्रभाव है और परिणाम भी। ईश्वर सृष्टि के कण–कण में व्याप्त हैं, तब कहाँ उसको कोई दुर्लभ है। सृष्टि स्वयं जब मिलने को व्याकुल रहती है तब उसकी सहायता के लिए वन्य प्राणियों का समर्पण उसकी एक परिपूर्णता है।

यहाँ यह भी विचारणीय है कि जहाँ चारों तरफ राक्षसवृत्तियों का ही निवास हो, भय और निराशा ने जिस वातावरण को ढक लिया हो, वहाँ पर उन विनाशकारी शक्तियों से सामना करने के लिए किस को संगठित किया जाए और यही प्रेरणादायक नीति है और शिक्षा भी है कि श्रीरामजी ने यह कार्य उन प्राणियों से कर दिखाया जिनके बल को समझा ही नहीं जाता है। चाहे वन के वनवासी हों, वन्य पशु–पक्षी हों सभी को अपनाकर श्रीरामजी ने उनका मान बढ़ाया और उद्धार किया। राजपुत्र होते हुए भी असहाय प्राणियों को सम्मान दिया।

प्रकृति को जड़ कहा जाता है, लेकिन प्रभु श्रीराम लता–वृक्षों से सीता माता का पता पूछ रहे थे। क्या इस प्रसंग को विरही का रूप कहेंगे, नहीं यही तो उनका प्रकृति प्रेम है। हम जिसे विरही का या व्यथा की व्याकुलता में देख रहे हैं, ऐसा कतई नहीं है। यह संवदेना की वे तरंगें हैं जो प्रकृति में फैली हैं और हमें आंतरिक एहसास कराती हैं।

भ्रातृ मिलन के अतिशय प्रेम की पराकाष्ठा के प्रभाव से पाहन भी पसीज गया और चरण चिह्न अंकित हो गए। चित्रकूट में भरत मिलन के शिला पर बने चरण चिह्न आज भी प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। यही है प्रकृति का स्वरूप जो स्वयं अपने में ईश्वर का स्वरूप है। जो सबका मित्र है, सखा है, स्वामी है। इस पुण्य धरा पर अपनी लीला की।

श्रीहनुमानजी की सलाह मानकर सुग्रीव से मित्रता कर श्रीरामजी ने उन्हें अपने कार्य का भागीदार बनाया और उन वन्य प्राणियों का मान बढ़ाया।

नाथ सैल पर कपिपति रहई। सो सुग्रीव दास तव अहई।।
तेहि सन नाथ मयत्री कीजे। दीन जानि तेहि अभय करीजे।।

(4 / 4 / 2–3)

श्रीहनुमान महाराज की बुद्धि वरिष्ठता देखिए, सुग्रीव से मित्रता के पीछे सुग्रीव के भय को समाप्त करवाना ही दास भाव की भावना है और श्री हनुमानजी को यह भी मालूम है कि सुग्रीव को अभय श्रीरामजी के अलावा कोई नहीं कर सकता। जब हमें इसका ज्ञान हो जाए कि यह जीवन ईश्वर का दिया हुआ है, तब उनके लिए समर्पण ही जीवन की सफलता है और यही है उन वानर प्राणियों की समझ का परिणाम कि समस्त वानर–भालू सब राम काज में समर्पित हो गए। दूसरी ओर जगन्नियंता भी जिन्हें अपना मित्र, सखा बना चुके हैं। सुग्रीव से मित्रता के पश्चात् श्रीराम कहते हैं–

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी।। (4 / 7 / 1)

देखा गया है कि जब ईश्वरीय प्रकृति अनुरूप होती है, तब सब कुछ अनुकूल होने लगता है। भय तो तब रहता है, जब तक ईश्वरीय सहारा नहीं मिलता और ईश्वरीय सहारा तब तक नहीं मिलता, जब तक समर्पण नहीं होता। यदि समर्पण हो गया तो फिर भय का साम्राज्य अपने आप समाप्त हो जाता है।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीरामचरितमानस की रचना में विभिन्न चरित्रों का जिस प्रकार वर्णन किया है। वे सम्पूर्ण समाज और मानव के लिए जीवन उपयोगी एवं कल्याणकारी हैं। भगवान श्रीराम ने मर्यादापुरुषोत्तम के रूप में सामाजिक संबंधों यथा भाई–भाई, माता–पिता, सखा–सेवक को आदर्शों की पराकाष्ठा के रूप में चरितार्थ किया है। जो समाज में कमजोर हैं, उनका मान कैसे बढ़े, राजधर्म का पालन कैसे हो, समय और परिस्थितियों को सहर्ष स्वीकार कैसे किया जाए, अन्याय के विरुद्ध संघर्ष कर मानव समाज में सुख का वातावरण कैसे पैदा हो। यही है श्रीराम अवतार की कृपा जो हमें इतने युग बीत जाने के बाद भी प्रेरणादायक है।

श्रीरामकथा (श्रीरामचरितमानस) में वन्य प्राणियों की जहाँ एक ओर सक्रिय भूमिका रही तो वहीं दूसरी ओर श्रीराम जी ने उनको इतना अधिक सम्मान दिया कि उन्हें अपने समान ही बना लिया। बालकाण्ड के वंदना प्रकरण में गोस्वामी तुलसीदास जी उनके सम्बन्ध में यह लिखते हैंः–

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किए आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम से साहिब सीलनिधान।। (1 / 29 क)

चार वेदों का अर्थ ना जानो तो कोई बात नहीं, परन्तु समझदारी, जवाबदारी, वफादारी और ईमानदारी ये चार शब्दों का मर्म जानो तो भी जीवन सार्थक हो जाये।

ADD AVG

दीनबन्धु दीनानाथ भगवान श्रीराम

श्री गोपाल कृष्ण फरलिया एवं श्रीमती दुर्गेश नन्दिनी फरलिया, नई दिल्ली,
फोन: 981675219

मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का प्राकट्य केवल दुष्टों के संहार हेतु ही नहीं हुआ, बल्कि मानवों में सबको समभाव, दीनदुखियों की सहायता करने का पाठ सिखाने, अपने भक्तों को तृप्त करने आदि के लिए हुआ था। इसीलिए उन्हें दीनबन्धु दीनानाथ कहा जाता है। तुलसीकृत श्रीरामचरितमानस में भगवान श्रीरामजी को दीनबन्धु, सरल स्वभाव, सर्वशक्तिमान और सबके स्वामी कहा गया है। बालकाण्ड की निम्नांकित चौपाई में भगवान के इन गुणों का वर्णन किया गया है।

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।।
बुध बरनहिं हरि जस अस जानी। करहिं पुनीत सुफल निज बानी।। (1/13/7–8)

श्रीरामचरितमानस में वर्णित कुछ उन उदाहरणों को यहाँ पर प्रस्तुत किया जा रहा है, जहाँ प्रभु श्रीराम और उनके नाम ने दीनों का उद्धार किया है और अपने भक्तों एवं शरणागतों को आश्रय दिया है।

1) वाल्मीकि उद्धार

वाल्मीकिजी ऐसे कुल में पैदा हुये थे कि जिनसे लोग मिलना उचित नहीं समझते थे। अपने भरण–पोषण के लिए वे लोगों को लूटा करते थे। एक बार कुछ साधुओं की मण्डली जंगल से गुजर रही थी। वाल्मीकि डाकू ने साधु–संतों को लूटने के दृष्टिकोण से पकड़ लिया। साधु सन्तों का स्वभाव होता है कि वे बुरे लोगों को सन्मार्ग पर लाने का प्रयत्न करते हैं, अतः उन साधु सन्तों ने वाल्मीकि डाकू से पूछा कि क्या आपका परिवार भी इस लूटपाट वाले पाप में सम्मिलित होगा। वाल्मीकि ने कहा–अवश्य, क्योंकि मैं अपने परिवार को पालने के लिए ही तो यह पाप कर रहा हूँ। साधुओं ने कहा कि आप अपने परिवार से पूँछ कर बतायें कि क्या परिवार वाले भी इस पाप में भागीदार होंगे।

परिवार वालों ने कहा कि हमारा भरण–पोषण करना तुम्हारा उत्तरदायित्व है, अतः हम इस पाप के भागीदार नहीं हैं, तब वाल्मीकि डाकू की आँखें खुल गईं तथा वह साधु सन्तों के चरणों में गिर गया।

साधुओं ने कहा कि तुम राम राम जपा करो। वाल्मीकि ने कहा कि मैं भगवान का नाम नहीं

ले पाऊँगा। तब साधु सन्तों ने कहा कि तुम मरा–मरा ही प्रेम से लगातार बोलो। मरा–मरा से राम–राम स्वतः हो गया और राम नाम जप के प्रभाव से वे डाकू से महर्षि वाल्मीकि बन गये, जिन्होंने कालान्तर में रामायण की रचना की। श्रीरामचरितमानस के बालकाण्ड के अन्तर्गत गोस्वामी तुलसीदास ने उनके बारे में यह लिखा है–

जान आदिकबि नाम प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू।। (1/19/5)

2) अहल्या उद्धार

श्रीरामचरितमानस में अहल्या उद्धार का बड़ा मार्मिक वर्णन आता है। इन्द्र द्वारा पातिव्रत धर्म से गिरने के बाद अहल्या के पति महर्षि गौतम ने उन्हें शाप देकर पत्थर अर्थात् जड़ बना दिया। सबके द्वारा तिरस्कृत होकर वह पत्थर की एक शिला के रूप में आश्रम के द्वार पर पड़ी रही। बालकाण्ड में इसका वर्णन इस प्रकार से है।

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर।। (1/210)

सबसे तिरस्कृत अहल्या जब प्रभु श्रीराम की चरण धूलि से स्त्री रूप में आई, तब उसने भगवान श्रीराम की स्तुति इस प्रकार की–

मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन रावन रिपु जन सुखदाई।
राजीव बिलोचन भव भय मोचन पाहि पाहि सरनहिं आई।। (1/211/छंद)

3) निषादराज गुह पर कृपा

भगवान श्रीराम विद्या अध्ययन के समय से ही भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों के बच्चों से प्रेमपूर्वक एवं मित्रतापूर्वक व्यवहार रखते थे। उनमें से एक मित्र का नाम निषादराज गुह था। जब प्रभु श्रीराम पिता की आज्ञा से 14 वर्ष के वनवास में गये, तब सर्वप्रथम आदिवासी निषादराज गुह पर कृपा करके प्रेमपूर्वक मिले। निषादराज गुह प्रभु श्रीराम का प्रेम पाकर गद्गद हो गया और उसने निवेदन किया कि वन में आप जिस स्थान पर रहेंगे, वहाँ पर मैं सुन्दर पर्ण कुटी बना दूँगा, मुझे साथ ले चलिए।

जेहिं बन जाइ रहब रघुराई। परनकुटी मैं करबि सुहाई।।
तब मोहि कहँ जसि देब रजाई। सोइ करिहउँ रघुबीर दोहाई।। (2/104/5–6)

रास्ते में जो–जो तीर्थ एवं स्थान पड़े उन सभी के बारे में प्रभु राम ने बड़े प्रेम से निषादराज गुह सहित सभी को उनका महत्त्व बताया तथा त्रिवेणी के दर्शन किये।

भगवान श्रीराम का प्रेम देखकर वहाँ के आदिवासी उनकी सेवा में लग गये। उनका श्रीराम के प्रति इतना प्रेम था कि सब अपना–अपना काम भूलकर उनके दर्शन के लिए दौड़ पड़े। सब लोग

प्रेम में इतने डूब गये कि उनके नेत्रों में जल भर आया और शरीर पुलकित हो गया। श्रीरामचरितमानस में आदिवासियों के इस प्रेम का वर्णन निम्नलिखित दोहे में इस प्रकार से आया है।

एक देखि बट छाँह भलि डासि मृदुल तृन पात।
कहहिं गवाँइअ छिनुकु श्रमु गवनब अबहिं कि प्रात॥ (2 / 114)

प्रभु राम का ही नहीं, माता सीता का भी आदिवासी महिलाओं के प्रति प्रेम उतना ही था। वे माता सीता से प्रेममयी वाणी में बातें कर रही थीं। आदिवासी औरतें भगवान श्रीराम एवं लक्ष्मणजी के बारे में पूँछ रही थीं। तब माता सीता ने लज्जावश अपने मुख को ढक कर अपने देवर लक्ष्मणजी के बारे में बताया तथा इशारे से ही भगवान श्रीराम की ओर देखते हुए कहा कि वे मेरे पति हैं। तब सभी आदिवासी महिलाओं ने माता सीता जी को सदा सुहागिन रहने का आशीर्वाद दिया।

सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नामु लखनु लघु देवर मोरे॥
बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी॥
खंजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सियँ सयननि॥
भईं मुदित सब ग्रामबधूटीं। रंकन्ह राय रासि जनु लुटीं॥
(2 / 117 / 5—8)

यहाँ पर यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि लक्ष्मणजी का स्वभाव कुछ उग्र है। यदि श्रीरामजी की प्रतिष्ठा पर आँच आए तो वे अपने पिता को भी नहीं छोड़ते, पर सीताजी उनको 'सहज स्वभाव' वाला बताते हुए संबोधित कर समाज को यह संदेश देना चाहती हैं कि घर की बात घर में ही रहनी चाहिए। यदि बाहर किसी को अपने परिवार के सदस्यों का परिचय देना पड़े तो सौम्यता ही वर्तनी चाहिए।

इस प्रकार वनवासियों से प्रेमपूर्वक विदा लेते हुए भगवान श्रीराम ब्रह्मर्षि वाल्मीकि जी के आश्रम में पधारे। उनके द्वारा दिये गये फलों को ग्रहण किया तथा उनसे दिशा—निर्देश लिये कि वे कहाँ निवास करें। तुलसीदासजी ने इसका वर्णन इस प्रकार से किया है।

अस जियँ जानि कहिअ सोइ ठाऊँ। सिय सौमित्रि सहित जहँ जाऊँ॥
तहँ रचि रुचिर परन तृन साला। बासु करौं कछु काल कृपाला॥ (2 / 126 / 5—6)

इस प्रकार ब्रह्मर्षि के निर्देशानुसार भगवान श्रीराम ने चित्रकूट में निवास किया। कोल, किरात आदि सभी के साथ प्रेमभाव से रहे।

भरतजी जब सभी को साथ लेकर वन में भगवान श्रीराम से मिलने के लिए चित्रकूट आये, तब भील—किरातों ने निषादराज के नेतृत्व में उनकी भरपूर सेवा की। यह श्रीरामजी की

आदिवासियों/दीनों पर प्रेम और दया करने का प्रभाव दर्शाता है।

4) जटायु उद्धार

भगवान राम पंचवटी में ही रहकर राक्षसों का संहार कर रहे थे। उसी समय स्वर्णमृग की माया के कारण, माता सीता का रावण द्वारा अपहरण कर लिया गया। जब सीताजी की खोज में भगवान श्रीराम वन में भटक रहे थे, तब उन्हें गीधराज जटायु घायल अवस्था में मिले।

जटायु ने बताया कि रावण ने सीताजी का हरण किया है और मेरी यह दशा की है। आपके दर्शनार्थ मैंने अपने शरीर में इन प्राणों को सम्हालकर रखा है। श्रीरामजी ने कहा कि क्या तुम्हारे प्राण अचल कर दूँ। इस पर जटायु ने कहा कि आप स्वयं भगवान मेरे सम्मुख मरते समय खड़े हैं, ऐसा अवसर फिर कहाँ मिलेगा। तत्पश्चात् जटायु नश्वर शरीर त्यागकर परमधाम सिधारे। उनका दाह–संस्कार स्वयं श्रीरामजी ने अपने हाथों से किया।

अबिरल भगति मागि बर गीध गयउ हरिधाम।
तेहि की क्रिया जथोचित निज कर कीन्ही राम।। (3/32)

5) शबरी पर कृपा

जटायु का अंतिम संस्कार करके भगवान श्रीराम आदिवासी भक्तिमती शबरी से उसकी कुटिया पर मिले। शबरी ने प्रेमवश चख–चख कर मीठे बेर भगवान श्रीराम को खिलाये।

कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि।
प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि।। (3/34)

शबरी आदिवासी महिला होने पर भी भगवान श्रीराम ने उसे नवधा भक्ति का उपदेश दिया। भगवान श्रीराम ने जात–पात, स्त्री–पुरुष आदि के भेदभाव को छोड़कर शबरी पर कृपा करके उसे सद्‌गति प्रदान की।

जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि असि नारि।
महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि।। (3/36)

6) सुग्रीव से मित्रता

शबरी को सद्‌गति प्रदान करने के पश्चात् उसके द्वारा दिए गए संकेत के अनुसार भगवान श्रीराम श्रीहनुमानजी के माध्यम से किष्किंधा पर्वत पर जाते हैं और वहाँ पर कपिराज सुग्रीव से मित्रता करते हैं।

तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुनाइ।
पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ।। (4/4)

इस प्रकार से एक वानर के साथ मित्रता भगवान श्रीराम की दयालुता दर्शाती है।

7) विभीषण शरणागति:

जब रावण का भाई विभीषण अपने भाई से अपमानित होकर भगवान श्रीराम की शरण में आता है तब वे सुग्रीव के उसे बंधक बनाने के परामर्श को अस्वीकार कराके भी उसे शरण प्रदान करते हैं। विभीषण कहता है कि प्रभु! अब मुझे कुछ नहीं चाहिए आप केवल अपनी भक्ति प्रदान कीजिए, पर श्रीरामजी की दयालुता देखिए वे अविरल भक्ति तो प्रदान करते ही हैं, साथ ही उसका तिलक करके उसे लंकेश बना देते हैं।

अब कृपाल निज भगति पावनी। देहु सदा सिव मन भावनी॥
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा । मागा तुरत सिंधु कर नीरा॥
जदपि सखा तव इच्छा नाहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं॥
अस कहि राम तिलक तेहि सारा। सुमन बृष्टि नभ भई अपारा॥

(5/49/7–10)

ऐसे दीनबन्धु, दीनानाथ भगवान श्रीराम का जिन्होंने शाप से शिला बनी अहल्या का उद्धार किया, कोल–किरातों/आदिवासियों पर अपना प्रेम लुटाया, पक्षी जटायु को सद्गति प्रदान की, अधम जाति की नारी शबरी को नवधा भक्ति का महत्त्व श्रवण कराके उद्धार किया, कपि सुग्रीव को मित्र बनाया और शत्रु के भाई विभीषण को भी शरण दी, तुलसीदासजी लिखते हैं कि हे सठ मन! सब जंजाल छोड़कर उनका भजन कर।

अस प्रभु दीनबंधु हरि कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ तेहि भजु छाड़ि कपट जंजाल॥ (1/211)

धनवृद्धा बल वृद्धा, आयुर्वृद्धास्तथैव च।
ते सर्वेऽपि ज्ञानवृद्धाश्च, किंकिरा शिष्यकिंकिरा॥

भावार्थ: इसमें संसार धनवृद्ध (बहुत धनवान), बलवृद्ध (बहुत बलवान), आयुवृद्ध (बहुत अधिक आयु) वालों की अपेक्षा ज्ञानवृद्ध (शास्त्रों का ज्ञान) को अधिक महत्त्व दिया गया है, क्योंकि धन, बल, आयु को एक न एक दिन नष्ट होना है, किन्तु ज्ञान कभी नष्ट नहीं होता। यह जन्म–जन्मान्तर तक जीव का साथ देता है। इस कारण ज्ञानवृद्ध का सर्वाधिक महत्त्व है।

जीवन में कुछ संबंध ऐसे होते हैं जो किसी पद या प्रतिष्ठा के मोहताज नहीं होते। वे स्नेह और विश्वास की बुनियाद पर टिके होते हैं।

ADD MAX

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू

पं. राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी, (उत्तर प्रदेश) फोन–9451131195

अखिल ब्रह्माण्ड नायक, अनादि अवधपति, त्रिलोकपति प्रभु श्रीराम सभी के परम प्रकाशक हैं। जिसकी सत्ता से किसी अन्य वस्तु का अस्तित्व कायम रहता है वह प्रकाशक और वह वस्तु जो प्रकाशित होती है, प्रकाश्य कहलाती है। माया के स्वामी ज्ञान और गुणों के धाम प्रभु श्रीरामजी सहज प्रकाश रूप एवं प्रकाशनिधि हैं।

सहज प्रकासरूप भगवाना। नहिं तहँ पुनि बिग्यान बिहाना।। (1/116/6)

विषय इन्द्रियों से, इन्द्रियाँ देवताओं से और देवता जीव से उत्तरोत्तर सचेत हैं। इन्द्रियों में चेतनता उनके देवताओं से आती है। यदि देवता अपना वास उन पर से हटा लें तो वे कुछ काम नहीं कर सकतीं। इसी प्रकार विषय इन्द्रियों से चेतनता पाते हैं और इन्द्रियों के देवता जीव से प्रकाश पाते हैं और उन सभी को अखिल ब्रह्माण्ड नायक सगुण रूप भगवान श्रीराम प्रकाशित करते हैं।

बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।(1/117/5–6)

शरीर के जीवरहित होने पर देवता इन्द्रियों को सचेत नहीं कर सकते। जीव भी बिना प्रभु श्रीराम जी की सत्ता के कुछ नहीं कर सकता है। श्रीमद्भागवत् के सृष्टि रचना का यह प्रसंग दृष्टव्य है।

वर्षपूगसहस्रान्ते तदण्डमुदकेज़यम्।
कालकर्मस्वभावस्थो जीवोऽजीवमजीवयत्।।

(श्रीमद्भागवत 2/5/34)

शास्त्रों के अनुसार आदि काल में एक निर्जीव अण्ड के रूप में एक सहस्र वर्ष तक जल में पड़ा रहा, तदन्तर काल–कर्म स्वभावस्थित सबको अपने स्वरूप में स्थित रखने वाले परमात्मा ने उस निर्जीव अण्ड को सजीव किया। जो सबका परम प्रकाशक परमात्मा है वही प्रभु श्रीराम जी हैं। विषय कारणादि के आदि प्रभु श्रीराम जी हैं और श्रीराम जी का आदि कोई नहीं है, वे अनादि हैं। उपनिषद कहते हैं–

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।

तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥
(कठोपनिषद् 2/2/15, मुण्डकोपनिषद् 2/2/10, श्वेताश्वेतरोपनिषद् 6/14)

अर्थात् उस परमात्मा को सूर्य प्रकाशित नहीं करता, चन्द्र और तारे प्रकाशित नहीं करते, विद्युत भी प्रकाशित नहीं करती, फिर यह अग्नि उसे कैसे प्रकाशित करेगी? यह सम्पूर्ण संसार उस परमात्मा के प्रकाश से ही प्रकाशित होता है। श्रीमद्भगवतगीता में भी यही लिखा है।

न तद्भासयते सूर्यो न शशांको न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥ (गीता 15/6)

दृश्य संसार में सूर्य के समान तेजस्वी, प्रकाशस्वरूप कोई नहीं है। वह सूर्य भी उस परम धाम को प्रकाशित करने में असमर्थ है, फिर सूर्य से प्रकाशित होने वाले चन्द्र और अग्नि उसे प्रकाशित कर ही कैसे सकते हैं। जहाँ जाकर के लौटना नहीं पड़ता वह मेरा परम धाम है। सूर्य, चन्द्र और अग्नि प्रभु का ही तेज है। यह प्रभु से ही प्रकाश पाकर भौतिक जगत को प्रकाशित करते हैं, अतः जो उस परमात्मतत्व से प्रकाश पाते हैं, वह परमात्मस्वरूप परम धाम को कैसे प्रकाशित कर सकते हैं। परमात्म तत्व चेतन है और सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि जड़ प्रकृति हैं। ये सूर्य, चन्द्र और अग्नि क्रमशः नेत्र, मन, वाणी को प्रकाशित करते हैं। ये तीनों नेत्र, मन और वाणी भी जड़ हैं। इसीलिये नेत्रों से उस परमात्मा को देखा नहीं जा सकता, मन से उसका चिन्तन नहीं किया जा सकता है और वाणी से उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।

जड़ तत्व से चेतन परमात्मतत्व की अनुभूति नहीं हो सकती। वह चेतन प्रकाशक तत्व इन सभी प्रकाशित पदार्थों में सदा परिपूर्ण है। उस तत्व को अपनी प्रकाशकता का अभिमान नहीं है। चेतन जीवात्मा भी परमात्मा का ही अंश होने के कारण स्वयं प्रकाशस्वरूप है, अतः उसको भी जड़ पदार्थ, मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ आदि प्रकाशित नहीं कर सकते। मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ आदि जड़ पदार्थों का सदुपयोग भगवान के नाते दूसरों की सेवा में लगाकर जड़ता से सम्बंध विच्छेद कर सकते हैं। यहाँ सूर्य को भगवान या देव की दृष्टि से न देखकर केवल प्रकाश करने वाले पदार्थों की दृष्टि से देखा गया है। तात्पर्य यह है कि सूर्य तेजस तत्वों में श्रेष्ठ है, अतः यहाँ केवल सूर्य की ही बात नहीं, प्रत्युत चन्द्र आदि सभी तेजस तत्वों की बात है। जीव परमात्मा का अंश है। वह जब तक अपने अंशी परमात्मा को प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उसका आवागमन नहीं मिट सकता। जैसे नदियों के जल को अपने अंशी समुद्र से मिलने पर ही स्थिरता मिलती है, ऐसे ही जीव को अपने अंशी परमात्मा से मिलने पर ही वास्तविक स्थायी शांति मिलती है।

ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥ (7/117/2)

परमधाम शब्द परमात्मा का धाम और परमात्मा दोनों का वाचक है। यह परम धाम प्रकाशस्वरूप है। जैसे सूर्य अपने स्थान विशेष पर भी स्थित है और प्रकाश रूप से सब जगह

भी स्थित है। सूर्य और उसका प्रकाश परस्पर अभिन्न हैं। ऐसे ही परमधाम सर्वव्यापी परमात्मा भी परस्पर अभिन्न हैं और वे सर्वत्र समरूप से सूर्य के प्रकाश की तरह विद्यमान हैं।

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम्।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्।।

(श्रीमद्भगवत गीता 15/12)

श्रीकृष्णजी गीता में अर्जुन को समझाते हुए कहते हैं कि–

सूर्य को प्राप्त हुआ जो तेज सम्पूर्ण संसार को प्रकाशित करता है और जो तेज चन्द्रमा तथा अग्नि में है, उस तेज को तू मेरा ही रूप जान।

सम्पूर्ण भौतिक जगत में सूर्य के समान प्रत्यक्ष तेजस पदार्थ और कोई नहीं है। चन्द्र, अग्नि, तारे, विद्युत आदि जितने भी प्रकाशवान पदार्थ हैं, वे सभी सूर्य से ही प्रकाश पाते हैं। भगवान से मिले हुए तेज के कारण जब सूर्य इतना विलक्षण और प्रभावशाली है, तब भगवान कितने विलक्षण और प्रभावशाली होंगे। सूर्य नेत्रों के अधिष्ठाता देवता हैं, अतः नेत्रों में जो प्रकाश देखने की शक्ति है वह भी परम्परा से भगवान से ही प्राप्त है। सूर्य में स्थित प्रकाशिका शक्ति और दाहिका शक्ति दोनों भगवान से प्राप्त हैं। चन्द्रमा में प्रकाश के साथ शीतलता, मधुरता, पोषणता आदि जो गुण हैं, वे सब भगवान के हैं। चन्द्रमा को तारे नक्षत्र आदि का उपलक्षण समझना चाहिए। चन्द्रमा मन का देवता है, अतः मन में जो प्रकाश मनन करने की शक्ति है वह भी प्रभु से प्राप्त है। अग्नि की प्रकाशिका शक्ति और दाहिका शक्ति दोनों परमात्मा से ही प्राप्त हैं। अग्नि वाणी का अधिष्ठाता देवता है, अतः वाणी में जो वाचन करने की शक्ति है, वह प्रभु से ही प्राप्त है। जैसे विभिन्न मिष्टान्नों में जो मिठास है, वह उसकी न होकर शक्कर की होती है, ऐसे ही सूर्य, चन्द्र और अग्नि में जो तेज है, वह उनका अपना न होकर परमात्मा का है। भगवान के प्रकाश से ही सब प्रकाशित हो रहे हैं।

भक्तों की भिन्न–भिन्न मान्यताओं के कारण ब्रह्मलोक, साकेत धाम, गोलोक धाम, देवीद्वीप, शिव लोक आदि सब एक ही परमधाम के भिन्न–भिन्न नाम हैं। यह परम धाम चेतन ज्ञानस्वरूप प्रकाशस्वरूप और परमात्मस्वरूप है और वे परमात्मा प्रभु श्रीराम ही हैं, क्योंकि–

जगत प्रकास्य प्रकासक रामू। मायाधीस ग्यान गुन धामू।।

(1/117/7)

सीखने में गुजारो तो किताब है जिन्दगी, दिखावे में गुजारो तो बर्बाद है जिन्दगी।
तुलना में गुजारो तो पस्त है जिन्दगी, दुःखी रहकर गुजारो तो त्रस्त है जिन्दगी।
खुश रहकर गुजारो तो मस्त है जिन्दगी।

आचारः परमो धर्मः

साभारः कल्याण-अप्रैल 2020

आजकल पूरे विश्व में 'कोरोना' नामक एक नयी बीमारी का आतंक व्याप्त है। कई देश इस बीमारी से अत्यधिक त्रस्त हैं। हजारों-लाखों की संख्या में लोग संक्रमित हो गये हैं। इस बीमारी से प्रतिदिन कितने ही लोगों की मौत भी हो रही है। 'कोरोना' के विषय में मुख्य बात यह है कि इसका फिलहाल कोई इलाज उपलब्ध नहीं है तथा यह बीमारी छूत की है। एक संक्रमित व्यक्ति के सम्पर्क से दूसरे लोगों में इसका संक्रमण तुरन्त होता है। इसी कारण यह बीमारी जोर से फैल गयी है। अपने देश भारत में भी इसका पदार्पण होने के कारण चिन्ता होनी स्वाभाविक है।

अपने प्रधानमंत्री श्रीमोदीजी ने भी देश की जनता को बचाने का सावधानीपूर्वक अथक प्रयास किया, पूरे देश में लॉकडाउन कर दिया तथा देशवासियों को बीमारी से बचने के उपाय सुझाये।

इस बीमारी से बचने के सर्वसम्मत उपाय हैं-किसी को छुआ न जाये, किसी से हाथ नहीं मिलाया जाये, हाथों को बार-बार धोया जाये, किसी का जूठा नहीं खाया जाये। बाहर से आया हुआ व्यक्ति घर के अन्दर हाथ-पैर धोकर ही प्रवेश करे। पाद-त्राण (जूते आदि) घर अथवा कमरे में न लाये जायें, कारण इससे इंफैक्शन फैल सकता है।

भारतीय संस्कृति एवं सनातन-धर्म में अपने ऋषि-महर्षियों ने अपनी ऋतम्भरा प्रज्ञा से ये बातें पहले ही बता दी थीं। इसीलिये जहाँ निषिद्धाचार होता है ऐसे देशों में जाने का भी शास्त्रों में निषेध किया गया है। अपने शास्त्र कहते हैं-**'आचारः परमो धर्माः'**, आचार-विचार हमारा प्रधान धर्म है। आचार का मुख्य अंग है शौचाचार। शौचाचार का तात्पर्य है कि हम स्वयं को निरन्तर पवित्र रखें अर्थात् अपने हाथ धोने के बाद भोजन करें, कोई भी शुभ कार्य पूजा-पाठ आदि हाथ धोकर ही करें। हाथ जूठा होने पर उसे तत्काल धो लें। गले मिलने एवं हाथ मिलाने की परम्परा पाश्चात्य देशों से हम लोगों ने सीखी। अपनी संस्कृति है-दूर से नमस्कार, प्रणाम, जै रामजी, जै गोपाल आदि के द्वारा दूसरों का अभिवादन किया जाये। जूते आदि घर के दरवाजे के बाहर खोले जायें, भीतर नहीं ले जायें। स्पर्शास्पर्श का विचार भी पुरातन समय से हो रहा है, हम बिना कारण एक-दूसरे को छूते नहीं, परन्तु आज की स्थिति एकदम विपरीत है। भारत से अंग्रेज तो चले गये, परन्तु अंग्रेजियत रह गयी। हाथ धोने आदि की परम्परा समाप्त हो गयी है। एक-दूसरे का जूठा खाने से कोई परहेज नहीं रहा। पाश्चात्य देशों की सभ्यता-संस्कृति को हमने आँखें मूँदकर अपना रखा है, इसी कारण 'कोरोना' जैसी महामारी से बचने के लिये देशवासियों को उपाय सुझाये जा रहे हैं कि सब लोग इसका पालन करें, परन्तु यदि हम अपनी संस्कृति के अनुसार आचार-विचार की शिक्षा देश के बच्चों को प्रदान करने की व्यवस्था करें तथा इसे स्वयं भी दृढ़ता से अपनायें तो इस प्रकार की आतंकपूर्ण-भयावह परिस्थितियों के प्रभावों से बच सकेंगे। अपने धर्म के अनुसार संयमित जीवन-यापन करने से लोक-परलोक दोनों सुधरेंगे। प्राणिमात्र के कल्याण के लिये परमात्मा प्रभु से यही प्रार्थना है-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत्॥

श्रीराम के पावन चरणकमलों की महिमा

गौसेवक श्री गोपाल कृष्ण पण्ड्या, ग्राम रानी पिपल्या, जिला–उज्जैन (म0प्र0)
फोन: 9826500263

मारीच–सुबाहु राक्षसों के आतंक से दुखी होकर मुनि विश्वामित्रजी श्री राम–लक्ष्मण को महाराज दशरथ से माँगकर ले आए। अपने आश्रम से जनकपुर की ओर जाते हुए एक निर्जन आश्रम मिला, जिसे देखकर श्रीरामजी के पूँछने पर विश्वामित्रजी ने यह बताया–

गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर।
चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर॥ (1/210)

श्रीराम के पवित्र और शोक नाशक चरणों का स्पर्श पाते ही वह तपोमूर्ति अहल्या प्रकट हो गई। भक्तों को आनंद देने वाले श्री रघुनाथजी को सामने पाकर वह प्रेमवश अधीर हो गई, उसका शरीर पुलकित हो उठा, मुख से वचन कहने में नहीं आते थे। वह बड़भागिनी अहल्या प्रभु के चरणों से लिपट गई और उसके दोनों नेत्रों से प्रेम और आनंद के आंसुओं की धारा बहने लगी।

परसत पद पावन सोक नसावन प्रकट भई तपपुंज सही।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही॥
अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही॥ (1/211/छंद)

मन में धीरज रखकर अहल्या ने प्रभु को पहचाना, प्रभु की स्तुति करते हुए कहा कि हे प्रभु मैं अपवित्र स्त्री हूँ। पर आप अनाथों के नाथ जगत के पति, जगत पिता भक्तों को सुख देने वाले रावण के काल हैं। हे कमल नयन! संसार के बंधन से छुड़ाने वाले! मैं आपकी शरण में हूँ, मेरा उद्धार कीजिए, रक्षा कीजिए, रक्षा कीजिए। मुनि ने जो शाप दिया उसे मैं अत्यन्त अनुग्रह मानती हूँ, क्योंकि इसी से मैंने आपको जीभर के देखा। हे नाथ मुझे अब और कुछ नहीं चाहिए, बस अब मेरा मनरूपी भंवरा आपके चरण–कमल की रज के प्रेमरूपी रस का सदा पान करता रहे। जिन चरणों से परम पवित्र देवनदी गंगा जी प्रकट हुईं, जिन्हें शिवजी ने सिर पर धारण किया और जिन चरणों को ब्रह्माजी पूजते हैं मेरा मन सदा उन्हीं चरणों में रमा रहे। बार–बार भगवान के चरणों में गिरकर वर पाकर गौतम–पत्नी अहल्या आनंद से भरी पति लोक को सिधार जाती है, यथा–

जो अति मन भावा सो बरु पावा गै पति लोक अनंद भरी।। (1/211/छंद)

¼2½ राम-चरण रज सभीत सीताजी :

धनुष भंग के पश्चात् सखियाँ कह रही हैं कि हे सीताजी स्वामी श्रीरामजी के चरण छुओ, किंतु सीताजी अत्यन्त भयभीत हुईं और उनके चरण नहीं छूतीं, क्योंकि गौतमजी की स्त्री अहल्या की गति का स्मरण करके सीताजी श्रीरामजी के चरणों को हाथों से स्पर्श नहीं कर रही हैं। सीताजी की इस अलौकिक प्रीति को जानकर रघुकुल शिरोमणि श्रीरामजी मन में हँसे।

सखीं कहहिं प्रभुपद गहु सीता। करति न चरन परस अति भीता।। (1/265/8)

गौतम तिय गति सुरति करि नहिं परसति पग पानि।
मन बिहसे रघुबंसमनि प्रीति अलौकिक जानि।। (1/265)

3) **श्रीलक्ष्मणजी का श्रीरामचरण प्रेम :** जनकपुरी में गुरुजी की सेवा के पश्चात् श्रीरामजी विश्राम करते हैं, तब लक्ष्मणजी उनके पैर पलोटते हैं, यथा–

pkir pju y[ku mj yk,A lHk; lie ije lp ik,AA ¼1@226@7½

इसी प्रकार लक्ष्मण जी निषादराज की नगरी श्रृंगवेरपुर में भी श्रीरामजी के विश्राम करने पर उनके पैर पलोटते हैं–

सिय सुमंत्रु भ्राता सहित कंद मूल फल खाइ।
सयन कीन्ह रघुबंसमनि पाय पलोटत भाइ।। (2/89)

श्रीरामचन्द्रजी शयन करने लगे और भाई लक्ष्मण उनके पैर दबाने लगे।

4½ अयोध्यावासियों का रामचरण-रज से प्रेम

श्रीरामचरण रज ही सर्वोत्तम औषधि है। राम चरण रज के अलावा कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है, ऐसा विश्वास था अयोध्यावासियों का, अतः श्रीरामजी के वनवास जाते समय वे सभी साथ चल पड़े।

चले साथ अस मंत्रु दृढ़ाई। सुर दुर्लभ सुख सदन बिहाई।
राम चरन पंकज प्रिय जिन्हही। बिषय भोग बस करहिं कि तिन्हही।।
(2/84/7–8)

जिन्हें श्रीराम के चरण कमल प्यारे हैं, उन्हें क्या कभी विषय भोग वश में कर सकते हैं।

5½ निषादराज का श्रीरामचरण प्रेम : श्रीरामजी तमसा नदी पर अयोध्यावासियों को सोता हुआ छोड़कर सीताजी और लक्ष्मण जी के साथ सुमंत्र द्वारा रथ से निषादराज के नगर में पहुँचते हैं और यह समाचार मिलते ही निषादराज श्रीरामजी के चरणों में गिरकर कहते हैं–

नाथ कुसल पद पंकज देखें। भयउँ भागभाजन जन लेखें।।
देव धरनि धनु धामु तुम्हारा । मैं जनु नीचु सहित परिवारा।। (2/88/5–6)

निषादराज कहते हैं कि हे नाथ आपके चरण–कमलों की रज पाकर मैं कुशल से हूँ। आपके चरणारविन्दों के दर्शन कर आज मैं भाग्यवान पुरुषों की गिनती में आ गया हूँ। हे देव! यह धरा, धन और घर सब आपका है, मैं परिवार सहित आपका एक नीच सेवक हूँ।

6½ केवट का प्रभुचरण रज प्रेम :

मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना। (2/100/3)

श्रीरामजी ने केवट से नाव मांगी, पर वह लाया नहीं और कहता है कि मैंने तुम्हारा मरम (भेद) जान लिया है। तुम्हारे चरणकमलों की धूल के लिए सब लोग कहते हैं कि यह मनुष्य बना देने वाली कोई जड़ी–बूटी है।

छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई।।
तरनिउ मुनि घरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव उड़ाई।।

(2/100/5–6)

केवट कहता है कि हे नाथ! आपके चरणकमलों की रज से पत्थर की शिला सुन्दर नारी बन गई, पर मेरी नाव तो लकड़ी की है, लकड़ी पत्थर से कठोर नहीं होती और यदि मेरी नाव स्त्री हो जायेगी तो मैं लुट जाऊँगा। मेरी रोजी–रोटी छिन जायेगी। उसने कहा कि हे प्रभु यदि आप पार जाना चाहते हैं तो पहले मुझे चरणकमल पखारने दीजिए। हे नाथ! मैं चरणकमल धोकर आप लोगों को नाव पर चढ़ा लूँगा। मैं आपसे कुछ उतराई भी नहीं चाहता हूँ। हे राम! मुझे आपकी दुहाई और दशरथ जी की सौगंध है, मैं सच कहता हूँ कि लखनलाल भले ही मुझे तीर मारें, पर जब तक मैं पैर न पखार लूँ, तब तक हे अनाथों के नाथ! मैं आपको पार नहीं उतारूँगा।

पद कमल धोइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं। (2/100/छंद)

केवट के प्रेम में लपेटे अटपटे ऐसे बचन सुनकर करुणानिधान रामजी जानकी और लखन की ओर देखकर हँसे। श्रीरामजी के हँसने का रहस्य कुछ विद्वान इस प्रकार से बताते हैं कि बचपन में लखनलाल की आदत थी कि जब तक राम के पैर का अँगूठा न मिले तब तक सोते नहीं थे। रामजी का अँगूठा मुँह में आते ही लखनलाल सो जाते थे। सीताजी की ओर देखकर इसलिए हँसे कि आपके पिताजी ने केवल मेरे पांव के अँगूठा मात्र को ही धोया है, पर आप दोनों के सामने ये मेरे दोनों चरण धोयेगा। जिनका नाम लेने मात्र से मानव भवसागर पार हो जाता है, वही केवट से गंगा पार जाने के लिए निहोरा कर रहे हैं। केवट ने श्रीरामजी के चरणकमल धोकर परिवार सहित वह जलपान किया तथा इससे अपने पितरों को भवपार कराके तब उसने श्रीरामजी को गंगा पार कराया, यथा–

पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार।
पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार।। (2/101)

6½ शबरी का श्रीरामचरण कमल प्रेम :

जो लोग राम–राम कहकर जम्हाई लेते हैं, उनके भी पापों के समूह नष्ट हो जाते हैं, फिर जो रामचरण रज ही पा ले, उसके भाग्य का क्या कहना। रामचरण रज पाकर शबरी की भी कुछ ऐसी ही दशा हुई, यथा–

प्रेम मगन मुख बचन न आवा। पुनि पुनि पद सरोज सिर नावा।।
सादर जल लै चरन पखारे। पुनि सुंदर आसन बैठारे।। (3/34/9–10)

शबरी ने दोनों भाइयों के चरण धोये। उसके भाग्य की कोई तुलना ही नहीं हो सकती। उसने बार–बार प्रभु श्रीराम के चरणों में सिर नवाकर उनकी महिमा गाई। श्रीरामचरण रज की महिमा ब्रह्मा, शारदा, शेषनाग और वेदों द्वारा भी वर्णन नहीं हो सकती तो भला हम क्या वर्णन करें।

7½ विभीषणजी की श्रीरामचरण-दर्शनाभिलाषा

लंका–दहन के पश्चात् विभीषणजी ने भाई रावण को बहुत प्रकार से समझाते हुए कहा कि सीताजी को वापिस करने में ही आपका कल्याण निहित है, पर यह सुनकर उसने विभीषण को लात मार कर भगा दिया। इस अपमान से त्रसित होकर उसने श्रीरामजी की शरण में जाने का निश्चय किया और जाते हुए मार्ग में श्रीरामजी के चरण–कमलों के दर्शनों की अभिलाषा इस प्रकार से कीः–

देखिहउँ जाइ चरन जलजाता। अरुन मृदुल सेवक सुखदाता।।
जे पद परसि तरी रिषिनारी। दंडक कानन पावनकारी।।
जे पद जनकसुताँ उर लाए। कपट कुरंग संग धर धाए।।
हर उर सर सरोज पद जेई। अहोभाग्य मैं देखिहउँ तेई।।
जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरतु रहे मन लाइ।
ते पद आजु बिलोकिहउँ इन्ह नयनन्हि अब जाइ।।

(5/42/5–8 तथा 5/42)

मानव जीवन का परम लक्ष्य ईश्वर की भक्ति या मोक्ष प्राप्त करना है। कलियुग में इसका एकमात्र यही उपाय है, यथा –

राम चरन रति जो चह अथवा पद निर्बान।
भाव सहित सो यह कथा करउ श्रवन पुट पान।। (7/128)

जो श्रीरामजी के चरणों में प्रेम चाहते हैं या मोक्ष चाहते हैं वे यह कथा (श्रीरामचरितमानस) भाव सहित अपने श्रवणपुट से पान करें अर्थात् निरन्तर सुनें।

जिसको भगवान की कृपा पर भरोसा है और उसके न्याय पर विश्वास है, उसको संसार की कोई भी स्थिति विचलित नहीं कर सकती।

अवध में मन्दिर बने विशाल

पं. राजेश तिवारी 'मक्खन', झाँसी, (उत्तर प्रदेश) फोन-9451131195

अवध में मन्दिर बने विशाल

रामलला की जन्मभूमि लख, नैना हुए निहाल।
यहाँ त्रिलोकीनाथ विराजें, शोभित सुन्दर भाल।।
अवध घुसे थे जब आतंकी जनता थी बेहाल।
कहें काल्पनिक रघुनन्दन को, घटिया उनके हाल।।
जन समूह प्रमुदित मन गाते, यश गाथा खुशहाल।
बनहै भव्य मनोहर मन्दिर, होंगे भक्त निहाल।।
जय श्रीराम कहत नर नारी, नाचत ले करताल।
चरण शरण में ले लो प्रभु जी, बहुत विकट कलिकाल।।
'मक्खन' मन में मुदित मग्न हो, बजा रहे खरताल।
अवध में मन्दिर बने विशाल।।

एक-एक वृक्ष लगाओ

एक–एक वृक्ष लगाओ
वृक्ष हमें देते हैं जीवन, ये जीवन सफल बनाओ।
तीरथ व्रत अरु यज्ञ के पहले, एक एक वृक्ष लगाओ।।
वृक्ष धरा के हैं भूषण, ये करते दूर प्रदूषण।
वसुधा का श्रृंगार करो तुम, पहना पादप भूषण।।
देते प्राण वायु जो तुम को, दूषित को हर लेते।
अर्थ धर्म अरु काम मोक्ष, ये चार पदारथ देते।।
इनसे सीता पता पूछते, राम ने कहा सुनाओ, एक–एक वृक्ष लगाओ।।1।।

पर उपकारी पेड़ सभी फल, फूल मूल सब देते।
जिसके बदले में तुमसे ये, कहो कहाँ कुछ लेते।।
औषधि दवा जड़ी बूटी सब, तुमको प्राप्त कराते।
वर्षा के हित बने सहायक, ग्रीष्म की छाह सुहाते।।

सब तरु संत विटप बन रहते, शिक्षा कुछ अपनाओ।
एक–एक पेड़ लगाओ।।2।।

दाँतुन से ले दाह कर्म तक, इनका साथ रहा है।
कथा भागवत में देखो तो, सुन्दर श्याम कहा है।।
फूल फरैं परहेतु विटप ये, जीवन धन्य रहा है।
जीवन वन से वन से जीवन, कैसा सत्य कहा है।।
केवल माया में भरमाया, प्राकृतिक प्रेम बढ़ाओ, एक–एक पेड़ लगाओ।।3।।

ये उपकारी प्राणी हैं सब, इनको अब ना काटो।
जो हैं इन्हें काटने वाले, उनको भी अब डाटो।।
मोहन बेनु बजावत तरु तर, दृश्य जरा तुम झाँको।
प्रभु तरु तर कपि डार के ऊपर, रामायन को आँको।।
कार्बन से ऑक्सीजन देते, सबको यह समझाओ, एक–एक पेड़ लगाओ।।4।।

तुलसी पीपल शमी आँवला, पूजें सब नर नारी।
खड़ी आज अति विकट समस्या, पर्यावरणीय भारी।।
अंधाधुंध कटाई करते, क्यों न वृक्ष लगाते।
अपने पाउन आप कुल्हाड़ी, क्योंकर आप चलाते।।
रोमावली ये माँ वसुधा की, इनका दर्द मिटाओ, एक–एक पेड़ लगाओ।।5।।

जिन पर कोयल बैठ कूकती, पपिहा पिऊ पिऊ करता।
ऐसी पावन देख प्रकृति क्या, तेरा मन नहीं भरता।।
आश्रम की शोभा है इनसे, खग मृग आश्रय दाता।
इन्हें सृजन करके अपने को, माने धन्य विधाता।।
दस पुत्री सम एक वृक्ष है, शास्त्रन सार सुनाओ, एक एक वृक्ष लगाओ।।6।।

शोक समाचार

हमें अत्यंत दुख के साथ सूचित करना पड़ रहा है कि समिति के कोषाध्यक्ष श्री जे. के. गुप्ता की धर्मपत्नी रविवार पौष कृष्ण चतुर्थी सम्वत् २०७७ तदनुसार ०३ जनवरी सन् २०२१ को चिर निद्रा में लीन हो गईं। इस समिति की ओर से हम उनकी आत्मा की शांति के लिए तथा उनके परिजनों, संबंधियों, मित्रों आदि सभी को इस दुख की घड़ी में धैर्य प्रदान करने हेतु परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं।

परमात्मा की प्राप्ति (अनुभूति) से ही सर्व शोक शमन संभव

डॉ. रविन्द्र कुमार शर्मा, समिति के सचिव

संसार में पूर्ण केवल ईश्वर ही है। वे ही जगदाधार, जगतपति, रमापति और सभी जीवों के मूल में व्याप्त हैं। सभी जीव उन्हीं पूर्ण ब्रह्म परमात्मा के अंश हैं। इसी से सभी जीवों में चेतना है और वे निर्मल और सहज ही सुखराशि हैं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।। (7/117/2)

सहज ही सुखराशि होने पर भी माया के कवच के कारण उस परमात्मा से बिछुड़ जाने पर जीव सांसारिक दुख और सबसे बड़ा आवागमन (जन्म–मृत्यु) का दुख भोग रहा है। जिस प्रकार नदियाँ सदैव अपने मूल समुद्र की ओर तब तक बहती रहती हैं, जब तक वे समुद्र में मिलकर अपने को उसमें आत्मसात् नहीं कर लेतीं। इसी प्रकार जीव भी निरंतर आवागमन के चक्र में तब तक घूमता रहता है जब तक वह अपने मूल परमात्मा की प्राप्ति (अनुभूति) नहीं कर लेता है।

संसार में सभी कामधेनु की प्राप्ति चाहते हैं, पर यदि व्यक्ति पूर्ण को पा लेता है जिसका अभिप्राय यह है कि कम–ज्यादा, घटने–बढ़ने और खो जाने का भय नहीं होगा, वहाँ फिर ईर्ष्यावृत्ति समाप्त हो जाती है। विश्वामित्रजी एवं वसिष्ठजी का संघर्ष भी इसी लेन–देन को लेकर ही शुरू हुआ था। विश्वामित्र ने कामधेनु की पुत्री नन्दिनी को मांगा और वसिष्ठ ने नहीं दी। विश्वामित्रजी ने समस्त अच्छे कार्यों को किया, परन्तु उनके मूल में विवेक और लोकमंगल की भावना नहीं थी। जब वे त्रिशंकु को स्वर्ग भेज रहे थे अथवा उनके लिए स्वर्ग का निर्माण कर रहे थे, तब उनका हृदय त्रिशंकु का उपकार करना उतना नहीं था, जितना वसिष्ठ को नीचा दिखाना था। जब हमारे कर्म के मूल में ईर्ष्या होती है, तब उसका परिणाम वह नहीं होता, जो उस सत्कर्म का होना चाहिए। गोस्वामीजी के अनुसार विश्वामित्र जब तक ब्रह्मर्षि पद प्राप्त करने के लिए तपस्या करते रहे जब तक त्रिशंकु के लिए स्वर्ग बनाते रहे, महिमामंडित नहीं हुए, जैसा होना चाहिए बल्कि इसके विपरीत वे कर्मनाशा के जन्मदाता बन गये। जब विश्वामित्रजी में यज्ञवृत्ति का जन्म हुआ तब वे ईर्ष्या त्यागकर यज्ञ करने लगे, तब उनकी वृत्ति सही दिशा में मुड़ गयी और उनका सत्कर्म सार्थक हो गया। वे भगवान को खोजने लगे। विश्वामित्र नगर त्यागकर वन में रहने लगे तो भगवान नगर में आ गये। विश्वामित्र की धारणा थी कि 'ब्राह्मण' श्रेष्ठ है और वे क्षत्रिय से ब्राह्मण बनने के लिए तपस्या कर रहे थे, तो भगवान

ने जन्म लिया क्षत्रिय कुल में। मानो भगवान का यह संकेत है कि मुझे पाना है तो तुम्हें अपनी 'श्रेष्ठता का अभिमान' छोड़कर नीचे उतरना होगा। जब विश्वामित्रजी ने कहा 'अनुज समेत देहु रघुनाथा' तब स्थिति बदल गई और वसिष्ठजी ने उस समय यह नहीं कहा कि राम–लक्ष्मण को नहीं ले जाने दूँगा, बल्कि दशरथजी को इस प्रकार से समझाते हैं –

तब बसिष्ट बहुबिधि समुझावा। नृप संदेह नास कहँ पावा।। (1/208/8)

इस प्रसंग में यह विचारणीय है कि वसिष्ठ जी और विश्वामित्रजी एक दूसरे के कट्टर शत्रु थे, क्योंकि नन्दिनी न देने पर विश्वामित्रजी ने वसिष्ठजी के एक सौ पुत्रों का वध कर दिया था, फिर भी उन्होंने श्रीराम–लक्ष्मण को देने के लिए राजा दशरथ को समझाया। इसका प्रमुख कारण जनहित/लोकहित था। मारीच और सुबाहु का आतंक चरम सीमा पर था। वसिष्ठजी जानते थे कि केवल श्रीराम–लक्ष्मण ही उस आतंक का अंत कर सकते हैं, अतः उन्होंने श्रीराम–लक्ष्मण को भेजने के लिए महाराज दशरथ को प्रेरित किया। इससे विश्व के राजनेताओं/प्रशासकों को यह संदेश जाता है कि जनकल्याणकारी कार्यों के लिए आपसी वैर–भाव, मतभेद आदि भुलाकर मिलकर (एकजुट होकर) कार्य करना चाहिए।

यहाँ एक प्रश्न यह भी उठता है कि सांसारिक वस्तु की प्राप्ति और भगवान की प्राप्ति में क्या अन्तर है? इसका उत्तर है कि बँटवारे में जिसे अधिक मिला वह लाभ में रहेगा और कम मिलने पर घाटे में, परन्तु भगवान जिनको मिलते हैं उन्हें पूरा ही मिलते हैं। भगवान के बँटवारे में उनके पास भी पूरे भगवान रहेंगे, हमारे पास भी पूरे भगवान रहेंगे। यहाँ लेन–देन में अपूर्णता का भय नहीं है इसलिए फिर ईर्ष्या भी नहीं रहेगी। वस्तुतः इस ईर्ष्या से छुटकारा तो तभी मिल सकता है, जब व्यक्ति पूर्ण को पा ले कि जिसके बाद कुछ भी पाना शेष नहीं रह जाता है।

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।। यजुर्वेद

ईर्ष्या–द्वेष, काम, क्रोध, लोभादि मानसरोग (मन के रोग) हैं जो केवल ईश्वर की प्राप्ति (अनुभूति) से ही दूर किए जा सकते हैं। इन रोगों की औषधि केवल ईश्वर की भक्ति ही है। इस संदर्भ में काकभुशुंडिजी श्रीरामकथा सुनाते हुए गरुड़जी से कहते हैं –

राम कृपाँ नासहिं सब रोगा। जौं एहि भाँति बनै संजोगा।।
सदगुर बैद बचन बिस्वासा। संजम यह न बिषय कै आसा।।
रघुपति भगति सजीवन मूरी। अनूपान श्रद्धा मति पूरी।।
एहि बिधि भलेहिं सो रोग नसाहीं। नाहिं त जतन कोटि नहिं जाहीं।। (7/122/5–8)

यही सत्य विभीषणजी भगवान श्रीराम की शरण में आने के समय कहते हैं कि हे प्रभु! जीव के हृदय में लोभ, मोह, मत्सर (ईर्ष्या) आदि दुष्ट (रोग) तभी तक वास करते हैं, जब तक उसके

हृदय (मन) में धनुष–बाण धारण किए हुए आपका निवास नहीं होता।

तब लगि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मद माना।
जब लगि उर न बसत रघुनाथा। धरें चाप सायक कटि भाथा।। (5/47/1–2)

निष्कर्ष यह है कि जीव जब तक ईश्वर की प्राप्ति नहीं कर लेता, तब तक वह सभी प्रकार के शोक से मुक्त नहीं हो सकता और ईश्वर को प्राप्त करने के लिए निर्मल मन की आवश्यकता है। इसकी घोषणा स्वयं भगवान इस प्रकार से करते हैं–

निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।। (5/44/5)

अब प्रश्न यह है कि निर्मल मन कैसे बने। युग धर्म के अनुसार इसके लिए अलग–अलग साधन हैं। सतयुग में ध्यान से, त्रेता में यज्ञ कर्म, द्वापर में भगवान की पूजा से यह संभव था, किंतु कलियुग में केवल भगवन्नाम/भगवत्कथा ही साधनस्वरूप है।

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा।।
नहिं कलि करम न भगति बिबेकू। राम नाम अवलंवन एकू।।
(7/103/4 तथा 1/27/7)

श्रीरामचरितमानस के समापन पर गोस्वामी तुलसीदास लिखते हैं कि इस कलिकाल में योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत, पूजा आदि कोई भी साधन संभव नहीं है, क्योंकि न तो इन साधनों की सम्यक् जानकारी उपलब्ध है और न इन्हें अपनाने हेतु किसी के पास समय है।

एहिं कलिकाल न साधन दूजा। जोग जग्य जप तप ब्रत पूजा।।
रामहिं सुमिरिअ गाइअ रामहि। संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।। (7/130/5–6)

मानस के अंतिम छन्द के रूप में गोस्वामी तुलसीदासजी लिखते हैं कि इस श्रीरामचरित को जो लोग कहेंगे, सुनेंगे और इसका गायन करेंगे वे बिना श्रम के ही मन के मैल तथा कलिकाल के मल को धोकर श्रीरामधाम को प्राप्त करेंगे।

रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं।
कलि मल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं।। (7/130/छंद)

इस प्रकार से सर्व शोक शमन हेतु श्रीरामकथा ही जीव को एकमात्र आधार (आश्रय) है।

''खुशी उनको नहीं मिलती जो अपनी शर्तों पर जिन्दगी जिया करते हैं।
खुशी उनको मिलती है, जो दूसरों की खुशी के लिये अपनी शर्तें बदल लिया करते हैं।''

श्रीरामचरितमानस में श्रीमद्भगवद्गीता की झलकियाँ

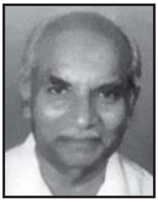

डॉ. वी.एस. बंसल, जोधपुर एवं श्री सुभाष मित्तल समिति के कार्यकारी सदस्य

विद्यार्थी की जब परीक्षा निकट आती है, तब वह अपने पाठ्यक्रम की सभी पुस्तकों के सारांश पर विशेष ध्यान देता है। इसी प्रकार जब मनुष्य विचार करता है अपने आत्म कल्याण का तब वह भी वही प्रक्रिया अपनाता है अर्थात् विभिन्न शास्त्रों में अपने आत्म कल्याण का मार्ग खोजता है। ऐसे प्राणी को श्रीरामचरितमानस सर्वोत्तम ग्रन्थ है। यह ईश्वरीय प्रेरणा से गोस्वामी तुलसीदास ने सभी शास्त्रों का सार संगृहीत करते हुए अपने अन्तःकरण के सुख के लिए लिखा है। बालकाण्ड के प्रारंभ में मंगलाचरण के सातवें श्लोक में वे इसकी इस प्रकार से घोषणा करते हैं–''अनेक पुराण, वेद और शास्त्र से सम्मत तथा रामायण में जो वर्णित है और कुछ अन्यत्र से भी उपलब्ध श्रीरघुनाथ जी की कथा को तुलसीदास अपने अन्तःकरण के सुख के लिए अत्यंत मनोहर भाषा रचना में विस्तृत करता है।'' इस लेख में श्रीमद्भगवद्गीता (गीता) के कुछ श्लोकों को उद्धृत करके उनके समकक्ष श्रीरामचरितमानस (मानस) की चौपाइयों-दोहों आदि को दर्शाया गया है ताकि हमें यह विश्वास हो जाए कि जब हम श्रीरामचरितमानस का पाठ करते हैं तब गीता का भी पाठ स्वतः हो जाता है और भक्ति-ज्ञान-वैराग्य के उपदेश जो जो गीता में विस्तार से दिए गए हैं वे हमें 'सार-स्वरूप' श्रीरामचरितमानस में मिल जाते हैं।

गीता के दूसरे अध्याय से अठारहवें अध्याय तक के कुछ चयनित श्लोकों तथा उनके समकक्ष श्रीरामचरितमानस की चौपाइयों, दोहों को प्रस्तुत करते हुए श्रीरामचरितमानस में श्रीमद्भगवद्गीता की कुछ झलकियों को दर्शाया गया है, यथाः–

(1) **वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।**
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।। (गीता 2/22)

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों को प्राप्त होता है।

जोइ तनु धरउँ तजउँ पुनि अनायास हरिजान।
जिमि नूतन पट पहिरइ नर परिहरइ पुरान।। (मानस 7/109ग)

काकभुशुंडिजी गरुड़जी को अपने पूर्व जन्मों का वृत्तांत सुनाते हुए कहते हैं कि शिवजी की कृपा से वे एक शरीर को छोड़कर दूसरा शरीर ठीक उसी तरह धारण करते रहे, जैसे कोई मनुष्य पुराना वस्त्र त्याग कर नया वस्त्र धारण करता है।

(2) **सुख दुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।**
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि।। (गीता 2/38)

जय–पराजय, हानि–लाभ और सुख–दुख समान समझ कर उसके उपरान्त युद्ध के लिए तैयार हो। इस प्रकार युद्ध करने से तू पाप को नहीं प्राप्त होगा।

सब के प्रिय सब के हितकारी। दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी। (मानस 2/130/3)

महर्षि वाल्मीकि ने श्रीरामजी को उनके निवास के लिए 14 स्थानों का वर्णन किया है, उनमें से एक स्थान उन भक्तों के मन में है जो सुख–दुख और प्रशंसा–भर्त्सना आदि द्वन्दों को समान समझकर समभाव रहते हैं।

¼3½ कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूमा ते संङ्गोऽस्त्वकर्मणि।। (गीता 2/47)

तेरा कर्म करने मात्र में ही अधिकार होवे फल में कभी भी नहीं और तू कर्मों के फल की वासना वाला भी मत हो तथा तेरी कर्म न करने में भी प्रीति न होवे।

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फल चाखा।। (मानस 2/219/4)

ईश्वर ने विश्व में कर्म को ही प्रधान कर रखा है। जो जैसा करता है, वह वैसा ही फल भोगता है।

¼4½ काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः।
महाशनो महापाप्मा विद्धयेनमिह वैरिणम्।। (गीता 3/37)

रजोगुण से उत्पन्न हुआ यह काम ही क्रोध है और यह ही महा अशन अर्थात् अग्नि के समान भोगों से न तृप्त होने वाला पापी है, इस विषय में इसको ही तू वैरी जान।

तात तीनि अति प्रबल खल काम क्रोध अरु लोभ।
मुनि बिग्यान धाम मन करहिं निमिष महुँ क्षोभ।।

(मानस 3/38क)

सीता हरण के पश्चात् विरह लीला करते हुए श्रीराम जी भाई लक्ष्मण से कहते हैं कि हे तात! काम–क्रोध–लोभ मनुष्य के तीन ऐसे प्रबल शत्रु हैं कि विज्ञानधाम मुनियों के मन में भी ये क्षणमात्र में ही क्षोभ पैदा कर देते हैं।

(5) इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः।। (गीता 3/42)

इन्द्रियों से परे अर्थात् बलवान एवं सूक्ष्म मन है, मन से परे बुद्धि है और बुद्धि से परे आत्मा है।

बिषय करन सुर जीव समेता। सकल एक तें एक सचेता।।
सब कर परम प्रकासक जोई। राम अनादि अवधपति सोई।।
ईस्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी।।
(मानस 1/117/5–6 तथा 7/117/2)

इंद्रियों के विषय, इंद्रियाँ, इंद्रियों के देवता (जो इंद्रियों को नियंत्रित करते हैं अर्थात् मन में अनेक रूप) और जीव, ये सभी एक से एक परे अर्थात् बलवान और सूक्ष्म हैं। इन सबको प्रकाशित करने वाला अनादि परमात्मा है और वही अवधिपति राम हैं। जीव ईश्वर का अंश होने के कारण अविनाशी, चेतन और सहज ही सुखराशि है।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।। (गीता 4/7–8)

हे भारत! जब–जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब–तब ही मैं अपने स्वरूप को रचता हूँ अर्थात् प्रकट होता हूँ। साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए और दूषित कर्म करने वालों का नाश करने के लिए तथा धर्म स्थापन हेतु युग–युग में प्रकट होता हूँ।

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी।
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा।।
(मानस 1/121/6 तथा 8)

जब जब धर्म का ह्रास होता है और अभिमानी–अधम असुरों की वृद्धि होती है, तब–तब कृपानिधि ईश्वर आवश्यकतानुसार विभिन्न शरीर धारण करके सज्जनों का कष्ट दूर करते हैं।

(7) **विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।**
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।। (गीता 5/18)

ज्ञानीजन विद्या और विनययुक्त ब्राह्मण में तथा गौ, हाथी, कुत्ते और चाण्डाल में भी समभाव से देखने वाले होते हैं।

सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।। (मानस 1/8/2)

उमा जे राम चरन रत बिगत काम मद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं विरोध।। (7/112ख)

जिस प्रकार ज्ञानी जन सभी प्राणियों में एक ही आत्मा का दर्शन करते हैं, उसी प्रकार भक्त सभी जीवधारियों में अपने प्रभु का दर्शन करता है। इसी कारण गोस्वामी तुलसीदास ने वंदना प्रकरण में चराचर सम्पूर्ण जगत को सीयराममय समझकर प्रणाम किया है।

¼8½ **उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।**
आत्मैव ह्यात्मनो बंधुरात्मैव रिपुरात्मनः।। (गीता 6/5)

अपने द्वारा स्वयं अपना संसार समुद्र से उद्धार करे और अपने आपको अधोगति में न पहुँचावे, क्योंकि यह जीवात्मा ही अपना मित्र है और यही अपना शत्रु है अर्थात् और कोई दूसरा शत्रु या मित्र नहीं है।

नर तनु भव बारिधि कहुँ बेरो। सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो।।
करनधार सदगुर दृढ़ नावा। दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।।
जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ।
सो कृत निंदक मंदगति आत्माहन गति जाइ।।
(मानस 7/44/7–8 तथा 7/44)

श्रीरामजी अयोध्यावासियों को परमार्थ का उपदेश देते हुए समझाते हैं कि दुर्लभ मानव शरीर को प्राप्त करके भी जो संसार सागर से अपना उद्धार न कर सके वह मंदमति निंदनीय है और आत्महत्या की गति को प्राप्त होता है, इस प्रकार से गीता के सिद्धांत के अनुसार जीवात्मा ही अपना मित्र है और वही अपना शत्रु भी है, यदि देव दुर्लभ मानव तन प्राप्त करके भी अपना उद्धार न कर सके।

¼9½ **भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।**
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा।।
अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं इदम् धार्यते जगत्।। (गीता 7/4–5)

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश तथा मन, बुद्धि एवं अहंकार भी ऐसे यह आठ प्रकार से विभक्त हुई मेरी प्रकृति है। यह आठ प्रकार के भेदवाली तो अपरा अर्थात् मेरी जड़ प्रकृति है और हे महाबाहो! इससे दूसरी मेरी जीव रूप परा अर्थात् चेतन प्रकृति जान कि जिससे यह संपूर्ण जगत धारण किया जाता है।

छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।।

गो गोचर जहँ लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई।।
तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। बिद्या अपर अबिद्या दोऊ।।
एक दुष्ट अतिसय दुखरूपा। जा बस जीव परा भवकूपा।।
एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।।

(मानस 4/11/4 तथा 3/15/3–6)

बालि वध के पश्चात् उसकी पत्नी को विकल देखकर श्रीरामजी ने उसे ज्ञान–उपदेश करते हुए कहा कि यह अधम शरीर तो पंचमहाभूत–पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु से बना है। इसी प्रकार ज्ञानोपदेश करते हुए पंचवटी में भाई लक्ष्मण को समझाते हैं कि माया, विद्या और अविद्या के रूप में होती है और ईश्वरीय प्रेरणा से यही सृष्टि निर्माण करती है।

¼10½ चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ।।
तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः।। (गीता 7/16–17)

हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! उत्तम कर्म वाले अर्थार्थी (सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति हेतु भजने वाला), आर्त्त (संकट निवारण के लिए भजने वाला), जिज्ञासु (ईश्वर को यथार्थरूप से जानने की इच्छा से भजने वाला) और ज्ञानी अर्थात् निष्काम भाव से भजने वाला ऐसे चार प्रकार के भक्तजन मेरे को भजते हैं। इनमें से नित्य मेरे में एकीभाव से स्थित हुआ अनन्य प्रेम भक्ति वाला ज्ञानी भक्त अति उत्तम है, क्योंकि मेरे को तत्व से जानने वाले ज्ञानी को मैं अत्यंत प्रिय हूँ और वह ज्ञानी मेरे को अत्यन्त प्रिय है।

राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारिउ अनघ उदारा।
चहू चतुर कहुँ नाम अधारा। ग्यानी प्रभुहि बिसेषि पिआरा।।

(मानस 1/22/6–7)

गोस्वामी तुलसीदास जी ''नाम वंदना प्रकरण'' में लिखते हैं कि जगत में चार प्रकार के (अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु और ज्ञानी) राम भक्त हैं और चारों ही पुण्यात्मा, पापरहित और उदार हैं। चारों ही चतुर भक्तों को नाम का ही आधार है। इनमें ज्ञानी भक्त प्रभु को विशेष रूप से प्रिय हैं।

¼11½ अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः।। (गीता 8/5)

जो अन्तकाल में मेरे को (ईश्वर को) ही स्मरण करता हुआ शरीर को त्यागकर जाता है, वह

मेरे स्वरूप को ही प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

जाकर नाम मरत मुख आवा। अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा।
सो मम लोचन गोचर आगें। राखौं देह नाथ केहि खाँगें।।

(मानस 3–31/6–7)

मरणासन्न जटायु ने जब श्रीराम जी से कहा कि आपके दर्शनार्थ और आपको जानकी हरण के बारे में सूचना देने के लिए ही प्राण सम्हालकर रखे थे, अब ये जाना चाहते हैं, तब श्रीराम जी ने कहा कि यदि तुम्हारी इच्छा हो तो इन्हें अचल कर दूँ अर्थात् तुम्हें जीवित ही रखूँ, तब जटायु कहते हैं कि मरते समय यदि किसी पापी के मुख में जिसका नाम आ जाए, वह मुक्त हो जाता है और जब वह स्वयं मेरे सम्मुख खड़ा है, तब इन प्राणों को शरीर में रखने का कोई प्रयोजन नहीं है।

¼12½ समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु माम् भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्।। (गीता 9/29)

मैं सब भूतों में समभाव से व्यापक हूँ। न कोई मेरा अप्रिय है और न प्रिय है, जो भक्त मेरे को प्रेम से भजते हैं वे मेरे में और मैं भी उनमें प्रत्यक्ष प्रकट हूँ अर्थात् उनके अन्तःकरण में प्रत्यक्ष रूप से प्रकट हूँ।

जद्यपि सम नहिं राग न रोषू। गहहिं न पाप पूनु गुन दोषू।।
करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा।।
तदपि करहिं सम बिषम बिहारा। भगत अभगत हृदय अनुसारा।।

(मानस 2/219/3–5)

श्रीराम जी को मनाने चित्रकूट जाते समय भरतजी का प्रेमभाव देखकर इन्द्र कुछ कुटिल चाल की योजना बनाता है, तब उनके गुरु बृहस्पति समझाते हैं कि भगवान सबको समान रूप से देखते हैं, सभी अपने कर्मानुसार फल प्राप्त करते हैं, किंतु भक्त–अभक्त में भगवान अवश्य भेद करते हैं अर्थात् जो उनके भक्त हैं उन पर विशेष प्रेमभाव रखते हैं।

¼13½ तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः।। (गीता 12/19)

अपने भक्तों के लक्षण बताते हुए श्रीकृष्ण जी अर्जुन से कहते हैं कि जो निंदा–स्तुति को समान समझने वाला और मननशील (ईश्वर स्वरूप का चिंतन करने वाला) एवं जिस किसी प्रकार से भी शरीर का निर्वाह होने में सदा ही संतुष्ट है तथा रहने के स्थान में ममता से रहित है, वह स्थिर बुद्धिवाला भक्त मुझे प्रिय है।

निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज।
ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज।।
सरल सुभाव न मन कुटिलाई। जथा लाभ संतोष सदाई।
अनारंभ अनिकेत अमानी। अनघ अरोष दच्छ बिग्यानी।।

(मानस 7/38 तथा 7/46/2 एवं 6)

संत और भक्तों के लक्षण बताते हुए श्रीरामजी कहते हैं कि वे अपनी निंदा और स्तुति को समान समझते हैं। वे प्रारब्धवश जो कुछ प्राप्त हो जाए उसी में संतोष कर लेते हैं। वे अनिकेत होते हैं अर्थात् वे अपने रहने के स्थान (भवन) में ममता से रहित होते हैं, आदि आदि।

¼14½ ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।।
अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुण प्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।। (गीता 15/1–2)

आदि पुरुष परमेश्वर रूप मूल वाले और ब्रह्मारूप मुख्य शाखा वाले जिस संसार रूप पीपल के वृक्ष को अविनाशी कहते हैं तथा जिसके वेद पत्ते कहे गए हैं, उस संसार रूप वृक्ष को जो मूल सहित तत्व से जानता है वही वेद के तात्पर्य को जानने वाला है। उस संसार वृक्ष की तीनों गुणरूप जल के द्वारा बढ़ी हुई एवं विषय भोग रूप कोंपलों वाली देव, मनुष्य, तिर्यक् आदि योनिरूप शाखाएँ नीचे और ऊपर सर्वत्र फैली हुई हैं तथा मनुष्य लोक में कर्मों के अनुसार बाँधने वाली अहंता, ममता और वासना रूप जड़ें भी नीचे और ऊपर सभी लोकों में व्याप्त हो रही हैं।

अब्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने।।
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे।। (मानस 7/13/छंद)

श्रीराम जी के राज्याभिषेक के समय भाटों (प्रशंसकों) के रूप में चारों वेद प्रार्थना करते हैं, उस प्रार्थना का एक अंश इस प्रकार से है –

वेद–शास्त्रों ने कहा है कि जिसका मूल अव्यक्त (प्रकृति) है, जो प्रवाहरूप से अनादि है, जिसके चार त्वचाएँ, छः तने, पच्चीस शाखाएँ और अनेकों पत्ते तथा बहुत से फूल हैं, जिसमें कड़वे और मीठे दो प्रकार के फल लगे हैं, जिस पर एक ही बेल है, जो उसी के आश्रित रहती हो, जिसमें नित्य नए पत्ते एवं फूल निकलते रहते हैं, ऐसे संसार वृक्ष स्वरूप (विश्व रूप में प्रकट) आपको हम नमस्कार करते हैं।

¼15½ f=fo/ka ujdL;sna }kja uk'kuekReu%A
dke% ØksèkLrFkk yksHkLrLeknsrR=;a R;tsr~AA (गीता 16/21)

काम, क्रोध तथा लोभ ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा का नाश करने वाले हैं अर्थात् आत्मा को अधोगति में ले जाने वाले हैं, अतः इन तीनों को त्याग देना चाहिए।

काम क्रोध मद लोभ सब नाथ नरक के पंथ।
सब परिहरि रघुबीरहि भजहु भजहिं जेहि संत॥

(मानस 5/38)

विभीषण जी अपने भाई रावण को समझाते हुए कहते हैं कि काम, क्रोध, अभिमान और लोभ ये सभी नरक के मार्ग हैं, अतः इन सबका त्याग करते हुए, जिनका भजन सभी संत जन करते हैं उन श्रीरघुनाथजी का भजन कीजिए।

¼16½ सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥ (गीता 18/66)

सर्व धर्मों अर्थात् सम्पूर्ण कर्मों के आश्रय को त्यागकर केवल एक मुझ सच्चिदानन्द वासुदेव परमात्मा की ही अनन्य शरण में आ जा, मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर।

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू।
सनमुख होइ जीव मोहि जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥ (मानस 5/44/1–2)

जिस समय विभीषण श्रीरामजी की शरण में आते हैं और सुग्रीव उन्हें बंदी बनाने का परामर्श देते हैं, तब श्रीरामजी अपने स्वभाव को बताते हुए कहते हैं कि यदि किसी को करोड़ों ब्राह्मणों के वध का भी पाप लगा हो और यदि वह भी मेरी शरण में आता है तो मैं उसका भी त्याग नहीं करता हूँ। वे आगे कहते हैं कि एक तथ्य और है कि जो मेरे सम्मुख आता है अर्थात् मेरी शरण में आता है उसके करोड़ों जन्मों के पाप उसी समय नष्ट हो जाते हैं।

वेद पढ़ना आसान हो सकता है, लेकिन
जिस दिन आपने किसी की ''वेदना''
को पढ़ लिया तो समझो जीवन सफल हो गया।

किसी महापुरुष ने सच ही कहा था कि जब 'किताबें' सड़क किनारे रखकर बिकेंगी और 'जूते' काँच के शोरूम में, तब समझ जाना कि लोगों को ज्ञान की नहीं, जूते की जरूरत है।

रामचरित चिंतामनि चारू

श्रीमती रीता कश्यप, दिल्ली–92 फोन–9958622992

श्रीरामचरितमानस हमारी भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। यही कारण है कि रामकथा हमारे हृदय में इतनी गहरी बसी है कि राम का नाम लेते ही हमारा रोम–रोम पुलकित हो उठता है। भले ही रामकथा को सर्वप्रथम संस्कृत के महाकवि महर्षि वाल्मीकि ने काव्यबद्ध किया था, लेकिन इसे जनमानस तक पहुँचाने, इसे सरल और सहज बनाने और राम के जीवन को आदर्श के रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय हिन्दी के महाकवि संतशिरोमणि तुलसीदास को ही जाता है। रामकथा ही एकमात्र ऐसी कथा है जिसे हर कथा का मूल कहा जा सकता है। इसमें जीवन के हर पहलू, हर परिस्थिति, हर समस्या का समाधान पाया जा सकता है, जिससे अपना जीवन आदर्श बन सकता है। इससे पारिवारिक मूल्यों का सबक सीखा जा सकता है। इस कथा को नीलगिरि पर्वत पर काकभुशुंडि जी गरुड़ जी को इस प्रकार से सुनाते हैं–

राम चरित बिचित्र बिधि नाना। प्रेम सहित कर सादर गाना।। (7/57/6)

इतना ही नहीं हमारे अधिकांश त्योहार भी श्रीराम के जीवन से जुड़े हैं। रामनवमी, श्रीराम का जन्म दिवस घरों और मन्दिरों में बड़ी ही श्रद्धा और भक्ति भाव से मनाया जाता है। युगों–युगों से श्रीराम की रावण पर विजय का प्रतीक दशहरा मनाकर हम अच्छाई की बुराई पर विजय के रूप में रावण, कुंभकरण और मेघनाद के पुतले सार्वजनिक रूप से जलाकर श्रीराम के प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति को और सुदृढ़ करते हैं और बुराइयों से दूर रहने का अपने आप से प्रण लेते हैं। हमारा सबसे बड़ा त्योहार दीपावली है, जो हम भगवान श्रीराम के 14 वर्षों के वनवास के बाद अयोध्या लौटने की खुशी में मनाते हैं। मात्र त्योहार मनाकर श्रीराम कथा सुनकर या पढ़कर ही नहीं, बल्कि श्रीराम के जीवन चरित्र को रामलीला के रूप में जनमानस तक पहुँचाने का काम प्रति वर्ष किया जाता है। इस लेख में कुछ प्रसिद्ध देशी–विदेशी रामलीलाओं के बारे में प्रकाश डाला गया है। इस कलियुग में योग, यज्ञ, जप, तप, व्रत, पूजा आदि कोई भी साधन आत्मकल्याण हेतु संभव नहीं है, क्योंकि न आजकल किसी के पास उतना समय है और न सम्यक् ज्ञान। युग धर्म के अनुसार कलियुग में केवल हरिनाम ही साधन योग्य है। इस युग में भगवान के गुणगान से ही मानव भवसागर की थाह पा सकता है अर्थात् भवसागर पार जा सकता है। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

कलिजुग केवल हरि गुन गाहा। गावत नर पावहिं भव थाहा।। (7/103/4)

रामलीला अर्थात् श्रीराम की लीला श्रीराम के जीवन की घटनाओं का नाट्य रूप में चित्रण। इसमें श्रीराम के जन्म, गुरुकुल में जाकर शिक्षा–ग्रहण करना, ताड़का–वध, सीता–स्वयंवर, राम के राजतिलक की तैयारियाँ, कैकेयी का दो वरदान माँगना, श्रीराम का सीता और लक्ष्मण के साथ 14 वर्षों के लिए वनवास जाना, शूर्पणखा प्रसंग, सीता हरण, हनुमानजी से भेंट, बालि–वध, सुग्रीव का किष्किंधा नरेश बनना, हनुमान द्वारा माता सीता की खोज, लंका–दहन, रामसेतु की रचना, वानर सेना का सागर पार उतरना, राम–रावण युद्ध और श्रीराम का सीता से पुनः मिलन आदि प्रसंगों को बड़े ही रोचक और श्रद्धा भाव से मंचित किया जाता है। अपने देश भारत में ही नहीं, विदेशों में भी रामलीला का चलन है, जहाँ वर्षभर रामलीला के पात्रों का चयन, उनके संवाद, उनकी वेशभूषा आदि की तैयारी चलती रहती है। रामलीला शारदीय नवरात्रों से दशहरे तक 10 दिनों के लिए मंचित की जाती है। इन दिनों जगह–जगह स्टेज बनाकर, पंडाल लगाकर, मेले सजा कर उत्सव का सा माहौल तैयार किया जाता है। अधिकतर रामलीला का मंचन तुलसी रामायण अर्थात् श्रीरामचरितमानस पर ही दोहे और चौपाइयों के साथ किया जाता है, लेकिन कहीं–कहीं यह स्थानीय भाषाओं में नाटकों के रूप में संवादों द्वारा भी मंचन किया जाता है। सैकड़ों वर्षों से हो रहे इस मंचन में हर वर्ष एक नया उत्साह और श्रद्धा भाव देखने को मिलता है।

वास्तव में रामलीला लोक नाटक का ही एक रूप है। इसका प्रारंभ मूलतः उत्तर भारत में हुआ था। इसके प्रमाण हमें 11वीं शताब्दी से मिलते हैं। पहले यह वाल्मीकीय रामायण पर आधारित होती थी। बाद में यह तुलसीदास द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस पर आधारित होने लगी। सोहलवीं सदी में सबसे पहले तुलसीदास के शिष्यों ने इसका मंचन किया था। कहा जाता है कि उस समय के काशी के राजा ने तुलसीदास की रचना श्रीरामचरितमानस के पूरे होने पर रामनगर में रामलीला करवाने का संकल्प किया था। तभी से देशभर के बड़े–बड़े शहरों में इसका प्रचलन शुरू हुआ।

रामलीला के कई रूप हैं। मूक अभिनय वाली रामलीला में सूत्रधार पर्दे के पीछे से चौपाइयाँ और दोहे गाता है और मंच पर उपस्थित कलाकार उन्हें अपने अभिनय द्वारा दर्शाते हैं। प्रयागराज (पुराना नाम इलाहाबाद) और ग्वालियर जैसे शहरों में ऐसी रामलीला के मंचन का प्रचलन है। कई शहरों में संगीतबद्ध यानी गायन शैली में भी रामलीला का मंचन होता है। उत्तराखंड के अल्मोड़ा और कुमायूँ को इस शैली का विकास माना जाता है, इसमें संवाद क्षेत्रीय भाषा में न होकर ब्रज और खड़ी बोली में होते हैं। दिल्ली में होने वाली लवकुश मंडली की रामलीला और चाँदनी चौक की रामलीला विश्व प्रसिद्ध है।

हमारे देश में होने वाली कई रामलीलाएँ विश्वभर में प्रसिद्ध हैं। ऐसी ही विश्व भर में प्रसिद्ध

वाराणसी से 20 किलोमीटर दूर रामनगर की रामलीला अपना ऐतिहासिक महत्त्व भी रखती है। यह रामलीला 10 दिन तक न होकर 31 दिन तक चलती है। चित्रकूट की रामलीला फरवरी के महीने में मंचित की जाती है और इसकी विशेषता यह है कि यह मात्र 3 दिनों के लिए होती है और इसमें मात्र राम और भरत मिलाप का प्रसंग ही मंचित किया जाता है। आगरा में रामलीला की अलग परंपरा है। लगभग 120 सालों से चली आ रही यह रामलीला बहुत ही प्रसिद्ध है, इसमें सीता स्वयंवर एक उत्सव के रूप में मनाया जाता है, जिसमें राम की बारात पूरे शहर में धूमधाम से निकलती है। राम–भरत मिलाप का प्रकरण भी बड़ी ही श्रद्धा और भाव भीने ढंग से मंचित किया जाता है।

भारत में ही नहीं दुनिया भर के कई देशों में रामलीला का चलन है। बाली, जावा, श्रीलंका, नेपाल, म्यांमार, थाईलैण्ड, लाओस, फिजी, दक्षिण अफ्रीका, कनाडा, सूरीनाम, मॉरीशस, कम्बोडिया, इंडोनेशिया, मलेशिया और सिंगापुर आदि कई देशों में रामलीला का मंचन बड़े ही सुंदर और मोहक ढंग से किया जाता है। थाईलैंड में होने वाली रामलीला बहुत ही प्रसिद्ध है। वहाँ इसे राम केयन यानी राम कीर्ति के नाम से जाना जाता है। यह केयन शारदीय नवरात्रों में ही नहीं, बल्कि वर्ष भर किन्हीं विशेष अवसरों जैसे विवाह, जन्मदिन आदि के मौकों पर पारिश्रमिक देकर भी करवाई जा सकती है। कंबोडिया में होने वाली रामलीला में वहाँ की राजकुमारी सीता का अभिनय करती है। इंडोनेशिया में रामलीला को रामायण ककविन अर्थात् काव्य कहा जाता है। यहाँ भी वर्ष भर इसका मंचन होता रहता है। इसके विषय में इंडोनेशिया के प्रथम राष्ट्रपति का कथन बहुत ही प्रसिद्ध है "इस्लाम हमारा धर्म है और रामायण हमारी संस्कृति" ये शब्द उन्होंने एक पाकिस्तानी प्रतिनिधिमंडल के सामने कहे थे। मुस्लिम बाहुल्य आबादी वाले देश इंडोनेशिया में पूरे भक्ति, भाव और श्रद्धा से रामकथा का मंचन किया जाना रामकथा के महत्त्व और कीर्ति को और भी बढ़ा देता है।

भारत में यूँ तो रामलीला शारदीय नवरात्रों में जगह–जगह, हर शहर, हर गली–मोहल्ले, हर कस्बों में होती है, लेकिन उत्तर प्रदेश के जसवंत नगर की रामलीला बड़ी ही अद्भुत है। सौ वर्षों से चली आ रही यह एक चलती–फिरती रामलीला है। इसमें पुरुष पात्र ही नारी पात्रों का भी अभिनय करते हैं। इसमें सूत्रधार चलते हुए ही माइक पर रामकथा कहता, दोहे–चौपाइयाँ गाता हुआ आगे बढ़ता है। पात्र उसी के अनुरूप अभिनय करते हुए चलते हैं। सड़क के दोनों तरफ दर्शक खड़े होकर इस रामलीला का आनंद उठाते हैं। इस रामलीला के लिए न तो कोई मंच तैयार होता है, न ही पंडाल सजाया जाता है और न ही किसी खुले मैदान में बैठकर इसका आनंद लेते हैं। यह तो एक चलती–फिरती रामलीला है, जो शहर की बड़ी सड़कों पर गाते–बजाते अभिनय करते हुए गुजरती है और लोग उसका आनंद उठाते हैं। इस रामलीला की एक और भी दिलचस्प बात यह है कि वहाँ 10 दिनों की रामलीला के बाद दशहरे के दिन रावण

को जलाया नहीं जाता।

रामकथा के प्रति हमारी रुचि, हमारी श्रद्धा इतनी प्रभावी है कि रामायण पर आधारित बहुत सी हिन्दी फिल्में जैसे रामराज्य, लंका–दहन, संपूर्ण रामायण, लवकुश, भरत मिलाप, बाल रामायण आदि बन चुकी हैं। टेलीविजन पर लगभग डेढ़ वर्ष तक प्रसारित होने वाले रामानंद सागर का सीरियल 'रामायण' भला कौन भूल सकता है। हिन्दी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, मराठी, गुजराती, पंजाबी, कश्मीरी, मलयालम, तमिल आदि कई भारतीय भाषाओं में भी रामायण कथा की रचना और अनुवाद हुए हैं जो रामकथा के प्रति जनमानस के विश्वास, रुचि और श्रद्धाभाव का प्रतीक है। राम कथा के महत्त्व का वर्णन संस्कृत के महाकवि कालिदास ने अपने महाकाव्य रघुवंशम् में कुछ इस प्रकार किया है–

यावत् स्थास्यन्ति गिरयाः सरिताश्च महितले।
तावत् रामायणी कथा लोकेषु प्रचलिश्यन्ति॥

अब प्रश्न यह उठता है कि हम जितने उत्साह और श्रद्धा भाव से राम के जीवन का गुणगान करते हैं, उनके जीवन की घटनाओं से जुड़े त्योहार मनाते हैं, क्या उतनी ही निष्ठा से हम उनके आदर्शों को जीवन में अपनाते हैं? श्रीराम गुणगान, श्रीराम चरित्रों का मंचन (रामलीला) आदि का यही आशय है कि हम श्रीरामजी के आदर्शों को अपने जीवन में उतारें। श्रीरामचरित चिंतामणि की तरह सभी प्रकार की चिंताओं से मुक्त करके हमें आत्मकल्याण की ओर अग्रसर करते हैं। श्रीरामचरितमानस के अनुसार–

रामचरित चिंतामनि चारू। संत सुमति तिय सुभग सिंगारू॥ (1/32/1)

आज के युग में जहाँ बूढ़े माता–पिता की बात मानना या सुनना तो दूर उन्हें वृद्धाश्रम में भेज दिया जाता है या स्वयं दूसरे शहरों या देशों में जाकर माता–पिता को बुढ़ापे में अकेले और असहाय छोड़ दिया जाता है, जमीन–जायदाद के लिए भाई–भाई का दुश्मन हो रहा है, तलाक के मामले समाज में आम हो चले हैं, लिविंग रिलेशनशिप का चलन बढ़ने लगा है, राजनेता सेवा भाव से दूर भ्रष्टाचार की दलदल में धंसते जा रहे हैं; यह सब देखते हुए लगता तो नहीं कि हम भगवान श्रीराम की पावन भूमि भारत के निवासी हैं। हर गली, हर मोहल्ले में मन्दिर बनाने उसमें भगवान राम, माता सीता और हनुमान की मूर्तियाँ स्थापित करना तो ठीक है, पर यदि हम वास्तव में अपना कल्याण चाहते हैं तो हमें श्रीराम तथा उनके चरित्र को अपने हृदय, अपने मन, वचन और कर्म में स्थापित करना चाहिए। यही भगवान श्रीराम के प्रति हमारी सच्ची पूजा और सच्ची श्रद्धा होगी।

मौन से अनेक दोषों का शमन होता है

कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु

श्रीमती कुसुम पटैरया, समिति की आजीवन सदस्य

सीताजी की खोज के लिए श्रीरामजी हनुमानजी को अपनी मुद्रिका देकर भेजते हैं। इसके पहले सभी वानर यात्रा के लिए तैयार थे। चार टुकड़ियाँ बना दी गई थीं, किन्तु सबसे पीछे हनुमानजी ने श्रीरामजी को प्रणाम किया। उस समय श्रीरामजी ने उनको मुद्रिका दी, क्योंकि उन्होंने समझा कि काम तो इन्हीं को करना है। उन्होंने श्री हनुमानजी को मुद्रिका देते हुए कहा कि तुम सीताजी को मेरा विरह और बल बताकर शीघ्र आ जाना –

पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा।।
परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी।।
बहु प्रकार सीतहि सुमझाएहु। कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु।।

(4/23/9–11)

अब हनुमानजी अपनी टुकड़ी के साथ में जाते हैं। इसका नेतृत्व तो जाम्बवंतजी के मार्गदर्शन में अंगद कर रहे थे। एक बार मार्ग के सघन वन में सबको बहुत प्यास लगी। तब हनुमानजी ने एक शिखर के ऊपर चढ़कर देखा कि एक गुफा में से कुछ पक्षी निकल रहे हैं। उन्होंने विचार किया कि वहाँ जल अवश्य होगा। वे सबको उस गुफा में ले जाते हैं। वहाँ पर एक तपस्विनी तपस्या कर रही थीं। उनकी आज्ञा से सबने जलपान किया, मधुर फल खाए और तपस्विनी के अनुसार सबने अपने नयन मूँद लिए और जब नेत्र खोले तो वे समुद्र के किनारे पहुँच गए। वहाँ पर सम्पाती ने देखा कि बहुत से बंदर हैं, आज तो एक साथ भोजन मिल गया। इस वचन को सुनकर अंगद जी कहते हैं– **'धन्य जटायू सम कोउ नाहीं।'** जटायु की बात सुनकर सम्पाती ने अपनी पूरी कथा बताई और कहा कि तुम सीताजी को निश्चित रूप से खोज लोगे, किन्तु जो इस सौ योजन सागर को लाँघ कर जाएगा, वही सीताजी तक पहुँच सकता है। मैं देख रहा हूँ कि सीताजी लंका में अशोक वृक्ष के नीचे चिंतामग्न बैठी हुई हैं। तब वानरों ने अपना–अपना बल बताया, पर कोई भी समुद्र पार जाने में समर्थ नहीं हुआ। हनुमानजी हमेशा राम नाम में मस्त रहते हैं। उन्हें कोई सुध नहीं रहती है, कोई उन्हें सुधि दिलाए तो आती है, अन्यथा वे तो राम नाम में ही मस्त रहते हैं। तब जाम्बवंतजी उन्हें रामकाज का स्मरण कराते हैं। तत्पश्चात् श्रीहनुमानजी समुद्र पार कर लंका में जाते हैं और घर–घर सीताजी की खोज करते हैं– **'मंदिर मंदिर प्रति कर सोधा'**, लेकिन वहाँ सीताजी नहीं दिखाई दीं। फिर वे रावण के महल में ढूंढ़ते हैं, वहाँ भी सीताजी नहीं मिलती हैं। वे सोचते हैं अब क्या किया जाए? उसी समय उनको राम नाम अंकित

एक भवन दिखाई दिया और वे विचार करते हैं –

लंका निसिचर निकर निवासा। इहाँ कहाँ सज्जन कर बासा।।
मन महुँ तरक करैं कपि लागा। तेहीं समय बिभीषनु जागा।।
राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा।।
एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी। साधु ते होइ न कारज हानी।।

(5/6/1–4)

विभीषणजी से संवाद हुआ, सत्संग हुआ और विभीषण से सीता माता का पता ज्ञात कर वे पुनः वही मच्छर के समान रूप रख कर अशोक वाटिका में गए और तब सीताजी के दर्शन हुए। इसका आशय यह है कि भक्ति स्वरूपा सीताजी का पता संत स्वरूप विभीषण ही बता सके। स्वयं श्रीरामजी ने लक्ष्मणजी को संत की महिमा समझाते हुए कहा है –

भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइँ अनुकूला।।

(3/16/4)

हनुमान को अशोक वृक्ष के नीचे सीताजी के दर्शन हुए, किन्तु उसी समय वहाँ रावण आ गया। वह सीताजी को त्रास देने लगा और बाद में यह कह कर चला गया कि यदि एक महीने के अन्दर मेरी बात नहीं मानी तो तलवार से तुम्हारी गर्दन काट दूँगा। हनुमान जी बहुत दुखी थे, रावण के जाने के बाद राक्षसियों की सरगना त्रिजटा ने सबको अपना एक स्वप्न सुनाया–**सपने बानर लंका जारी। जातुधान सेना सब मारी।।**

खर आरूढ़ नगन दससीसा। मुंडित सिर खंडित भुज बीसा।।
एहि बिधि सो दच्छिन दिसि जाई। लंका मनहुँ बिभीषन पाई।।

(5/11/4–5)

यह सपना सुनकर हनुमानजी को लगा कि उन्हें अब लंका जलाकर रावण को भी अपना अर्थात् अपने स्वामी का बल दिखाना है। श्रीरामजी ने कहा था – **'कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु'**, अर्थात् तीन बातें कही थीं कि मैं विरह में कितना तप रहा हूँ, सीताजी को ये बताना और अपना बल अर्थात् मेरा और मेरी सेना का बल बताना और शीघ्र आना। अब हनुमानजी की समझ में आया कि सीताजी को तो श्रीरामजी का बल पहले से ही पता था, इस स्वप्न का अर्थ है कि मुझे अब रावण को अपने दल का बल बताना होगा। अब हनुमानजी विचार करने लगे कि यह कैसे संभव होगा? भगवान का भक्त कभी चिंता नहीं करता है। वह तो सदैव प्रभु की शरण में रहता है और फिर प्रभु जैसी प्रेरणा देते हैं उसी के अनुसार कार्य करता है। भक्त को कभी यह चिंता नहीं होती कि यह काम कैसे होगा। भक्त हनुमान को यह चिन्ता अवश्य थी कि मैं विरह कैसे बताऊँगा, लेकिन उसका भी समाधान श्रीरामजी की कृपा से निकल आया। सबसे पहले तो

समस्या यह थी कि सीताजी से कैसे मिलें, क्योंकि अभी–अभी रावण आया था। रावण ने अपना उग्र रूप दिखाया। रावण माया जानता था वह कोई भी रूप धारण कर लेता था, यहाँ तक कि श्रीरामजी का भी रूप धारण कर लेता था, पर सीताजी समझ जाती थीं कि यह तो रावण है। अब हनुमानजी ने सोचा कि मैं माता के पास जाऊँगा, मुद्रिका तो मेरे हाथ में है, पर अकेले मुद्रिका से काम नहीं चलेगा। तब उन्हें याद आया कि सीताजी श्रीरामजी को क्या कहती थीं और श्रीरामजी सीताजी को क्या कहते थे। पति–पत्नी का आपसी वार्तालाप हेतु अपना एक निजी नाम होता है। सीताजी श्रीरामजी को 'करुणानिधान' कहती थीं और श्रीरामजी सीताजी को 'जानकी' कहते थे। इसका प्रमाण बालकाण्ड में मिलता है जब पहली बार पुष्प वाटिका में श्रीरामजी सीताजी को देखते हैं। तब वे लक्ष्मणजी से कहते हैं कि ये वही जानकी हैं, जिनके लिए धनुष यज्ञ हो रहा है। श्रीरामजी सीताजी को देखकर मोहित हो गए और सीताजी भी श्रीरामजी को देखकर मोहित हो गईं। जब सीताजी जाने लगीं तब श्रीरामजी ने उनके स्वरूप को इस प्रकार अपने चित्त में धारण किया –

प्रभु जब जात जानकी जानी। सुख सनेह सोभा गुन खानी।।
परम प्रेममय मृदु मसि कीन्हीं। चारु चित्त भीतीं लिखि लीन्हीं।।

(1 / 235 / 2–3)

इसके बाद सीताजी गौरी पूजन के लिए जाती हैं, तो वे प्रार्थना करती हैं कि मेरे मन में जो है आप जानती ही हैं। मनवांछित वर दीजिए। तब गौरीजी प्रसन्न होकर वरदान देती हैं और कहती हैं कि तुम्हारे मन में जो है वह 'करुणानिधान' तुम्हें मिलेंगे –

मनु जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।

(1 / 236 / छंद)

इस प्रकार से हनुमानजी को पता था कि श्रीरामजी सीताजी को 'जानकी' कहते हैं और सीताजी श्रीरामजी को 'करुणानिधान' कहती हैं, इसलिए उन्होंने सबसे पहले मुद्रिका डाली और फिर जब सीताजी ने संदेह किया, तब अपना परिचय इस प्रकार से दिया –

राम दूत मैं मातु जानकी। सत्य सपथ करुनानिधान की।।
यह मुद्रिका मातु मैं आनी। दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी।।
नर बानरहि संग कहु कैसें। कही कथा भइ संगति जैसें।।

(5 / 13 / 9–11)

हनुमानजी सीता माता के समीप आते हैं। सीताजी को फिर संदेह हो जाता है, तब वे आगे की कथा कहते हैं। पहले वे सीताहरण होने तक की कथा कह चुके थे। यह कथा सीताजी को

पता थी। उसके बाद नर–वानरों का कैसे–कैसे संग हुआ? वह कथा प्रेमपूर्वक सुनाई। यह कथा सुनने के बाद सीताजी को विश्वास हो गया कि निश्चित रूप से यह श्रीरामजी का ही सेवक है–

कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास।
जाना मन क्रम बचन यह कृपासिंधु कर दास॥ (5/13)

अब सीताजी को भरोसा तो हो गया, परन्तु अपनी व्यथा सुनाते हुए कहती हैं कि यह बताइए कि मेरे भगवान श्रीरामजी कैसे हैं? उन्होंने अब तक मेरी खबर क्यों नहीं ली। तब हनुमान जी बताते हैं कि हे माता उन्हें पता नहीं था कि आप यहाँ पर हो, अन्यथा इतनी देर नहीं करते –

जौं रघुबीर होति सुधि पाई। करते नहिं बिलंबु रघुराई॥ (5/16/1)

इस प्रकार से हनुमानजी सीताजी का विश्वास प्राप्त कर लेते हैं। पर अब हनुमानजी के सामने समस्या यह थी कि श्रीरामजी का विरह संदेश कैसे सुनाएँ। श्रीरामजी ने कहा था **'कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु।'** अब विरह वर्णन का क्रम आया, तो बेचारे हनुमानजी तो बाल ब्रह्मचारी हैं, पति–पत्नी की विरह की बात कैसे बताएँ। वे असमंजस में पड़ गए, पर उसी समय उनके मुख से स्वयं श्रीरामजी ने विरह–व्यथा का वर्णन इस प्रकार से कहलवा दिया –

रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर।
अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर॥

(5/14)

कहेउ राम बियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए बिपरीता॥
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥

(5/15/1 एवं 6)

इस प्रकार से जब वे श्रीरामजी का संदेश सुनाने के लिए गद्‌गद हो जाते हैं, तब स्वयं श्रीरामजी ही उनकी वाणी से बोल रहे हैं, ऐसा उपर्युक्त चौपाई से सुस्पष्ट है। श्री हनुमानजी के मुख से स्वयं श्रीरामजी द्वारा कही उनकी विरह वेदना सुनकर सीताजी प्रेम में मग्न हो जाती हैं। उन्हें अपने तन तक की सुधि नहीं रहती। तब हनुमानजी उनसे कहते हैं –

कह कपि हृदयँ धीर धरु माता। सुमिरु राम सेवक सुखदाता॥

(5/15/9)

अर्थात् पहले हनुमानजी के मुख से श्रीरामजी बोल रहे थे, क्योंकि श्री हनुमानजी तो 'गद्‌गद' अवस्था में थे। अब वे धैर्य दिलाते हुए स्वयं बोल रहे हैं जैसा कि उपर्युक्त चौपाई से स्पष्ट है। इस प्रकार से श्रीरामजी ने हनुमानजी से विरह वेदना का भी कार्य सम्पन्न करा दिया। अब हनुमानजी विचार करते हैं 'सपने बानर लंका जारी' इसको कैसे करें। तब उन्होंने विचार किया

कि मैं अपनी भूख का अभिनय करूँ कि मुझे भूख लगी है। उन्होंने कहा –

सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा।।

(5 / 17 / 7)

इसके पहले हनुमानजी अपना विशाल रूप सीताजी को दिखा चुके थे –

कनक भूधराकार सरीरा। समर भयंकर अतिबल बीरा।।

(5 / 16 / 8)

इस प्रकार से सीताजी को श्री हनुमानजी के बल–बुद्धि पर भरोसा हो गया और उन्होंने कहा कि श्रीरामजी को हृदय में धारण करके फल खाओ। फल खाने कहाँ थे, यह तो एक बहाना था। उन्होंने कुछ खाए, कुछ पेड़ तोड़े, इस प्रकार उपवन उजाड़ दिया। रावण तक बात पहुँची। उन्होंने अपने पुत्र अक्षय कुमार को भेजा, वह मारा गया। तब फिर रावण ने मेघनाद को कहा कि वह कोई विशेष वानर है, तुम मारना नहीं, बाँधकर ले आना। जब मेघनाद भी हारने की स्थिति में आ गया, तब उसने ब्रह्मास्त्र छोड़ा। हनुमानजी ने सोचा कि यह अच्छा मौका है, ब्रह्मास्त्र का भी सम्मान हो जाएगा और मैं बाँधा जाऊँगा, रावण के दरबार में स्वतः ये लोग ले जाएँगे और यही हुआ। रावण के दरबार में पहुँचकर हनुमानजी उसे उपदेश देते हैं। इससे रावण क्रोधित हो जाता है और हनुमानजी को जान से मारने की बात करता है। उसी समय विभीषण आ जाते हैं और कहते हैं कि – **'नीति बिरोध न मारिअ दूता'**, और सुझाव देते हैं –

आन दंड कछु करिअ गोसाँई। सबहीं कहा मंत्र भल भाई।।

(5 / 24 / 8)

तब रावण कहता है –

कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ।
तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ।।

¼5@24½

हनुमानजी मन ही मन सोचने लगे कि सरस्वती जी ने मेरी सहायता कर दी। सरस्वतीजी इसकी जीभ पर बैठ गईं और मेरा काम बन गया। अब मैं अपना बल इन्हें दिखाऊँगा और वही हुआ। जब पूँछ में आग लगाई गई तो तब –

निबुकि चढ़ेउ कपि कनक अटारीं। भईं सभीत निसाचर नारीं।।
उलटि पलटि लंका सब जारी। कूदि परा पुनि सिंधु मझारी।।

(5 / 25 / 9 तथा 5 / 26 / 8)

इस प्रकार लंका–दहन के बाद वे पुनः सीताजी के पास जाते हैं तथा उनको इस प्रकार से

धैर्य धारण कराते हुए समझाते हैं –

जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह।
चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह।। (5/27)

तत्पश्चात् उनसे चूड़ामणि लेकर प्रस्थान करते हैं। हनुमानजी ने श्रीरामजी की आज्ञा के अनुसार सीताजी को समझाया, अपने दल का बल सीताजी को तो बताया ही और लंका–दहन करके रावण को भी बता दिया। अब प्रश्न रहा कि तुम जल्दी आना। इसका भी उन्होंने पालन किया। सामान्यतः यह होता है कि जब कोई व्यक्ति कोई विशेष कार्य करके लौटता है तो अपने साथियों से विस्तार से उसकी चर्चा करता है, पर हनुमानजी ने कोई चर्चा नहीं की –

मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा। कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा।।
(5/28/4)

उनके मुख पर प्रसन्नता थी, मुख पर तेज था, इसको देखकर सभी वानर समझ गए कि इन्होंने श्रीरामजी का काम कर लिया है और सभी तुरंत चल दिए तथा जाकर एक बगीचा, जिसमें बहुत मधुर फल थे, जो इसके लिए सुरक्षित था कि जो सीताजी की खबर लेकर आएँगे, वही इसके फल खा सकेंगे, अतः सभी वानर–भालू उस बगीचे में फल खाने लगे। व्यवस्था यह थी कि जो रखवाले थे उनको पता नहीं कि ये बाग किस हेतु सुरक्षित है। रक्षकों के मना करने पर भी जब अंगदजी की आज्ञानुसार वानर–भालू नहीं माने, तब रक्षकों ने बल प्रयोग करना चाहा, किन्तु उनकी ही पिटाई कर दी गई –

रखवारे जब बरजन लागे। मुष्टि प्रहार हनत सब भागे।। (5/28/8)

जब रखवाले सुग्रीव के पास जाते हैं, तो सुग्रीव समझ गए कि निश्चित रूप से इन्होंने सीताजी की खोज कर ली है क्योंकि –

जौं न होति सीता सुधि पाई। मधुबन के फल सकहिं कि खाई।। (5/29/1)

इस प्रकार से श्रीहनुमानजी ने श्रीरामजी की आज्ञा का शत–प्रतिशत पालन किया। उन्होंने परोक्ष रूप से सीताजी को श्रीरामजी की विरह–वेदना बताई। सीताजी को तथा रावण को अपना बल अर्थात् अपने स्वामी और उनके दल का बल दिखाया तथा सीताजी को धैर्य दिलाते हुए समझाकर बड़ी शीघ्रता से आकर संदेश श्रीराम तक पहुँचाया –

बहु प्रकार सीतहि समझाएहु। कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आएहु।। (4/23/11)

इन्सान तो हर घर में पैदा होते हैं
बस इंसानियत कहीं-कहीं जन्म लेती है।

श्रीरामचरितमानस राष्ट्रीय समिति (पंजीकृत)

स्थानीय कार्यालय, ए-447, सेक्टर-47, नोएडा-201 301
दूरभाष : 0120-4305457, 9811056467

वित्तीय वर्ष 2019-2020 का आय/व्यय विवरण (राशि भारतीय रुपयों में)

क्र०सं०	आय विवरण	रुपए
1-	o"kZ d s iFke fnu dh fLFkfr	
	¼d½ fe;knh tek [kkrk	3]97]000-00
	¼[k½ cSd e s cpr [kkrk	34281-53
	¼x½ udn jkf'k	53407-00
2-	Lekfjdk e s foKkiu l s ikIr jkf'k	66]00000
3-	nku@vkjrh@eku l ikB rFkk lnL;rk 'kqYd l s ikIr jkf'k	3]04]268-00
4-	vU; ikfIr;k] cSd C;kt vkfn	26742-00
5-	vk;dj okilh vkofnr	&
6-	ifrHkfr okilh	5]000-00
	dqy ;kx	8]86]698-53

क्र०सं०	आय विवरण	रुपए
1-	Lekfjdk Nikbl O;;	1]10]000-00
2-	lkr ij vk;dj	&
3-	Jhjkeuoeh mRlo ,o Jhjke dFkk vk;kstu ij O;;	1]95]894-00
4-	VsyhQku fcyks dk Hkqxrku	9]887-84
5-	fofo/k O;; ¼cSd pkt l lfgr½	15]873-00
6-	nku	10]100-00
7-	ifrHkfr tek	5]000-00
8-	o"kZ d s vfre fnu dh fLFkfr	
	¼d½ fe;knh tek [kkrk	4]70]000-00
	¼[k½ cSd e s cpr [kkrk	66]993-69
	¼x½ udn jkf'k	2]940-00
	dqy ;kx	8]86]698-53

पं० दिनेश चन्द्र शर्मा	डॉ. भगवान दास पटैरया	श्री जे.के. गुप्ता	श्री सुभाष मित्तल	चार्टड
अध्यक्ष	महासचिव	कोषाध्यक्ष	कार्यकारी सदस्य	लेखाकार

श्रीरामचरितमानस के सिद्ध मंत्र

श्रीरामचरितमानस एक महाकाव्य ही नहीं, बल्कि अखिल ब्रह्माण्ड नायक भगवान श्रीराम का ग्रन्थावतार है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे आदि सशक्त मंत्रों का संकलन है। इसकी चौपाइयाँ, दोहे, सोरठे सभी सरल मंत्र हैं। संस्कृत के मंत्र कठिन होते हैं, इससे हर एक को उनके उच्चारण में सुगमता नहीं होती, इसलिये जापक का मन उनमें पूरा नहीं लगता। साबर–मंत्र रूखे और कठिन शब्दावली से भरे होते हैं। उनमें भी मन नहीं लगता, परन्तु श्रीरामचरितमानस के ये मंत्र सरल, सरस और सार्थक हैं। जापक इनमें तन्मय हो जाता है। इच्छाशक्ति तल्लीन हो जाती है। इससे मनवांछित फल शीघ्र प्राप्त होता है।

रक्षा-रेखा :

मन्त्र सिद्ध करने के लिये या किसी संकटपूर्ण जगह पर रात्रि व्यतीत करने के लिये अपने चारों ओर रक्षा की रेखा खींच लेनी चाहिए। लक्ष्मणजी ने सीताजी की कुटी के आसपास जो रक्षा रेखा खींची थी, उसी लक्ष्य पर निम्नांकित रक्षा–मन्त्र बनाया गया है। इसे एक सौ आठ आहुति द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिए।

मामभिरक्षय रघुकुलनायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक।। (मानस 7/115/छंद)

इन मंत्रों को सिद्ध करके उनका जप करना अथवा मानस पाठ करते समय दोहा/सोरठा एवं चौपाइयों के बीच संपुट लगाने से इष्ट फल की अवश्य ही प्राप्ति होती है। मंत्र सिद्ध करने के लिए उपयुक्त मुहूर्त में रात्रि 10 बजे के बाद अष्टांग हवन सामग्री से इष्ट चौपाई अथवा दोहा/सोरठा से 108 आहुतियाँ देनी चाहिए। अष्टांग हवन सामग्री में चन्दन का बुरादा, तिल, शुद्ध घी, शक्कर, अगर, तगर, कपूर, शुद्ध केशर, नागर मोथा, पंच मेवा, जौ और चावल आते हैं। एक दिन हवन करने से मंत्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मंत्र (दोहा/चौपाई आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिए, पर किसी भी स्थिति में 21 बार से कम जप न हो, इसका ध्यान रखें। सामान्यतया सवा लाख जप किया जाता है, पर इससे पहले ही यदि कार्य सिद्ध हो जाए तब भी अनुष्ठान पूरा करना चाहिए और जीवन पर्यन्त उस मंत्र को रोज स्मरण कर लेना चाहिए, ताकि मंत्र सिद्ध रहे।

इस सम्बन्ध में निम्नांकित नियम महत्त्वपूर्ण हैं :

1. पूर्ण श्रद्धा–विश्वास एवं समर्पण भाव से जप करें।

2. वाराणसी में भगवान शंकरजी ने मानस की चौपाइयों को मन्त्र शक्ति प्रदान की है, इसलिये वाराणसी की ओर मुख करके शंकरजी को साक्षी मानकर श्रद्धा से जप करना चाहिये।

3. जिस उद्देश्य के लिये जो चौपाई, दोहा या सोरठा जप करना बताया गया है, उसको सिद्ध करने के लिये अष्टांग हवन की सामग्री से उसी चौपाई, दोहे या सोरठे के द्वारा 108 आहुतियाँ देनी चाहिये। यह हवन केवल एक ही दिन करना है। शुद्ध मिट्टी की वेदी बनाकर उस पर अग्नि स्थापित करके उसमें आहुति देनी चाहिये। प्रत्येक आहुति के साथ चौपाई, दोहा, सोरठा आदि के अन्त में 'स्वाहा' बोलना चाहिये।

4. प्रत्येक आहुति लगभग 10 ग्राम की (सब चीजें मिलाकर) होनी चाहिये। इस हिसाब से 108 आहुति के लिये लगभग एक किलोग्राम सामग्री सब चीजें मिलाकर बना लेनी चाहिये। कोई चीज कम–ज्यादा हो तो कुछ आपत्ति नहीं। पंचमेवा में पिस्ता, बादाम, किशमिश (द्राक्षा), अखरोट और काजू ले सकते हैं। इनमें से कोई चीज न मिले तो उसके बदले में मिस्री मिला सकते हैं। केसर शुद्ध 3 ग्राम ही डालने से काम चल जायेगा, अधिक की आवश्यकता नहीं है।

5. हवन करते समय माला रखने की आवश्यकता एक सौ आठ की संख्या गिनने भर के लिये है। माला रखने में असुविधा हो तो गेहूँ, जौ या चावल आदि के 108 दाने रखकर उनसे गिनती की जा सकती है। करमाला का भी उपयोग कर सकते हैं।

6. बैठने के लिये आसन ऊन का अथवा कुशा का होना चाहिये।

7. मन्त्र सिद्ध करने के लिये यदि लंकाकाण्ड की चौपाई या दोहा हो तो उसका हवन शनिवार को करना चाहिये। दूसरे काण्डों के चौपाई–दोहे किसी भी दिन उपयुक्त मुहूर्त में हवन करके सिद्ध किये जा सकते हैं।

8. एक दिन हवन करने से ही मन्त्र सिद्ध हो जाता है। इसके बाद जब तक कार्य सफल न हो, तब तक उस मन्त्र (चौपाई–दोहे आदि) का प्रतिदिन कम से कम एक सौ आठ बार प्रातःकाल या रात्रि को, जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिये, अधिक कर सकें तो अधिक उत्तम। आप चाहें तो नियमित जप के अलावा भी दिनभर चलते–फिरते हुए उस चौपाई या दोहे का जप कर सकते हैं। जितना अधिक जप हो, उतना ही उत्तम है।

9. कोई दो तीन कार्यों के लिये दो तीन मन्त्रों का अनुष्ठान एक साथ करना चाहें तो कर सकते हैं, पर उन मन्त्रों को पहले अलग–अलग हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये। हवन के द्वारा एक ही दिन में दो या तीन मंत्रों को सिद्ध कर सकते हैं।

10. स्त्रियाँ भी इस अनुष्ठान को कर सकती हैं, परन्तु रजस्वला होने की स्थिति में मानसिक जप किया जा सकता है, पर इस अवस्था में हवन नहीं करना चाहिये।

11. जप करते समय मन में यह विश्वास अवश्य रखना चाहिये कि भगवान श्रीसीताराम की अहैतुकी कृपा से मेरा कार्य अवश्य सफल होगा। विश्वासपूर्वक जप करने पर सफलता निश्चित रूप से प्राप्त होगी।

12. अधिकांश मंत्र तथा उपर्युक्त नियम कल्याण के मासिक अंकों से लिए गए हैं।

13. जप करते समय यदि निम्नांकित बिन्दुओं का पालन करें तो सफलता शीघ्रता से प्राप्त होगी

(क) जप सूर्योदय से पूर्व करें।

(ख) पूर्व की ओर अथवा वाराणसी की ओर मुँह करके जप करें।

(ग) ऊन के आसन पर बैठें।

(घ) अपने सामने श्रीरामदरबार का चित्र रखें। एक लोटा जल अपने बाईं ओर रखें जिसे जप के पश्चात् किसी पौधे में डाल दें या सूर्य को अर्घ्य दें।

(ङ) अपने दाईं ओर घी का दीपक जला कर रखें।

विभिन्न कामनाओं की प्राप्ति हेतु मानस के कुछ सिद्ध मंत्र इस प्रकार हैं-

1. असमंजस की स्थिति में परम कल्याण हेतु

जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा। करहु सो बेगि दास मैं तोरा।। (1/132/7)

2. शरणागत होकर संकट निवारणार्थ

मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ। एहि अवसर सहाय सोइ होऊ।। (1/132/2)

3. सर्व मंगल कामना हेतु

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।। (1/112/4)

4. श्रेष्ठ भक्ति की कामना

अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें। दीन दयाल अनुग्रह तोरें।। (2/102/7)

5. मानस का गायत्री मन्त्र

जनकसुता जग जननि जानकी। अतिसय प्रिय करुनानिधान की।।
ताके जुग पद कमल मनावउँ। जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ।। (1/18/7–8)

6. संकट नाश के लिए

दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी।। (5/27/4)

7. जीविका प्राप्ति के लिए

बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई।। (1/197/7)

8. लक्ष्मी प्राप्ति हेतु

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं।।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरम सील पहिं जाहिं सुभाएँ।। (1/294/2–3)

9. शत्रुता नाश के लिए

बयरु न कर काहू सन कोई। राम प्रताप विषमता खोई।। (7/20/8)

10. यात्रा की सफलता के लिए

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा।। (5/5/1)

11. परीक्षा में पास होने के लिए

जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी। कवि उर अजिर नचावहिं बानी।। (1/105/6)
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती। जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती।। (1/28/3)

12. विद्या प्राप्ति के लिए

गुरुगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल विद्या सब आई।। (1/204/4)

13. प्रेम बढ़ाने के लिए

सब नर करहिं परस्पर प्रीती। चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीती।। (7/21/2)

14. विविध रोगों एवं उपद्रवों की शांति के लिए

दैहिक दैविक भौतिक तापा। राम राज नहिं काहुहि ब्यापा।। (7/21/1)

15. ईश्वर से अपराध क्षमा कराने के लिए

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता। छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता।। (1/285/6)

16. मन पसन्द वर की प्राप्ति हेतु

सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी।। (1/236/7)

17. मन पसन्द वधू की प्राप्ति हेतु

सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।। (1/237/4)

18. अपने इष्ट की प्राप्ति हेतु

जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू। सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू।। (1/259/6)

19. विपत्ति नाश हेतु

राजिवनयन धरें धनु सायक। भगत बिपति भंजन सुख दायक।। (1/18/10)

20. भूत-प्रेत भगाने हेतु

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यानघन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।। (1/17)

21. दरिद्रता नाश के लिए

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के। कामद घन दारिद दबारि के।। (1/32/8)

22. सन्तान प्राप्ति के लिए

दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद समाना।। (1/193/3)

प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान।। (1/200)

23. सुख सम्पत्ति प्राप्ति हेतु

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं। सुख सम्पति नाना विधि पावहिं।। (7/15/3)

24. मुकदमा जीतने के लिए

पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना।। (4/30/4)

25. शत्रु को मित्र बनाने हेतु

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।। (5/5/2)

26. निन्दा निवृत्ति के लिए

रामकृपाँ अवरेब सुधारी। बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी।। (2/317/3)

27. विघ्न विनाश के लिए

सकल विघ्न ब्यापहिं नहिं तेही। राम सुकृपाँ बिलोकहिं जेही।। (1/39/5)

28. अकाल मृत्यु के निवारण के लिए

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट।। (5/30)

29. नजर झाड़ने के लिए

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी। निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी।। (1/118/5)

30. खोयी हुई चीज पुनः प्राप्त करने के लिए

गई बहोर गरीब नेवाजू। सरल सबल साहिब रघुराजू।। (1/13/7)

31. ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त करने के लिए

साधक नाम जपहिं लय लाएँ। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ।। (1/22/4)

32. उत्सव के अवसर प्राप्त करने के लिए

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु।। (1/361)

33. मंगलमय विदेश यात्रा हेतु

चढ़ि रथ सीय सहित दोउ भाई। चले हृदयँ अवधहिं सिरु नाई।। (1/83/2)

34. विरक्ति तथा श्रीसीताराम चरणों में प्रेम प्राप्ति के लिए

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति।। (2/326)

35. ज्ञान प्राप्ति के लिए

छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा।। (4/11/4)

36. भक्ति की प्राप्ति के लिए

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम।। (7/84 ख)

37. श्रीहनुमानजी को प्रसन्न करने के लिए

सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू।। (1/26/6)

38. श्रीसीतारामजी के दर्शन के लिए

नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।। (1/146)

39. सहज स्वरूप दर्शन के लिए

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना। बिस्वबास प्रगटे भगवाना।। (1/146/8)

40. भगवत्स्मरण करते हुए आराम से शरीर त्याग करने के लिए

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग।। (4/10)

41. संशय निवृत्ति के लिए

रामकथा सुंदर कर तारी। संसय बिहग उड़ावनिहारी।। (1/114/1)

42. प्रभु-प्रेम में निरन्तर वृद्धि के लिए

सीता राम चरन रति मोरें। अनुदिन बढ़उ अनुग्रह तोरें।। (2/205/2)

43. सुखद एवं ऐश्वर्यपूर्ण यात्रा के लिए

चलत बिमानु कोलाहल होई। जय रघुबीर कहइ सबु कोई। (7/119/3)

जब जीव कीर्ति व तन से ऊपर उठ जाता है, तब होता है 'कीर्तन'।

श्रीरामशलाका-प्रश्नावली

मानसानुरागी महानुभावों को श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का विशेष परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती, उसकी महत्ता एवं उपयोगिता से प्रायः सभी मानस प्रेमी परिचित होंगे। अतः नीचे उसका स्वरूपमात्र अंकित करके उससे प्रश्नोत्तर निकालने की विधि तथा उसके उत्तर–फलों का उल्लेख कर दिया जाता हैं। श्रीरामशलाका–प्रश्नावली का स्वरूप इस प्रकार है–

सु	प्र	उ	बि	हो	मु	ग	व	सु	नु	बि	घ	धि	इ	द
र	रु	फ	सि	सि	रे	बस	है	मं	ल	न	ल	य	न	अं
सुज	सो	ग	सु	कु	म	स	ग	त	न	ई	ल	धा	बे	नो
त्य	र	न	कु	जो	म	रि	र	र	अ	की	हो	सं	रा	य
पु	सु	थ	सी	जे	इ	ग	म*	सं	क	रे	हो	स	स	नि
त	र	त	र	स	इ	ह	ब	ब	प	चि	स	य	स	तु
म	का	ा	र	र	मा	मि	मी	म्हा	ा	जा	हू	हीं	ा	जू
ता	रा	रे	री	ह्व	का	फ	खा	जि	ई	र	रा	पू	द	ल
नि	को	मि	गो	न	म	ज	य	ने	मनि	क	ज	प	स	ल
हि	रा	म	स	रि	ग	द	न	ष	म	खि	जि	मनि	त	जं
सिं	मु	न	न	कौ	मि	ज	र	ग	धु	ख	सु	का	स	र
गु	क	म	अ	ध	नि	म	ल	ा	न	ढ़	ती	न	रि	भ
ना	पु	व	अ	ढा	र	ल	का	ए	तु	र	न	नु	व	थ
सि	ह	सु	म्ह	रा	र	स	हिं	र	त	न	ष	ा	ज	ा
र	सा	ा	ला	धी	ा	री	जा	हू	हीं	षा	जू	ई	रा	रे

इस रामशलाका–प्रश्नावली के द्वारा जिस किसी को जब कभी अपने अभीष्ट प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने की इच्छा हो तो सर्वप्रथम उस व्यक्ति को भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान करना चाहिये।

तदनन्तर श्रद्धा–विश्वास पूर्वक मन से अभीष्ट प्रश्न का चिन्तन करते हुए प्रश्नावली के मनचाहे कोष्ठक में अंगुली या कोई शलाका रख देना चाहिये और उस कोष्ठक में जो अक्षर हो उसे अलग किसी कोरे कागज या स्लेट पर लिख लेना चाहिये। प्रश्नावली के कोष्ठक पर भी ऐसा कोई निशान लगा देना चाहिये जिससे न तो प्रश्नावली गंदी हो और न प्रश्नोत्तर प्राप्त होने तक वह कोष्ठक भूल जाये। अब जिस कोष्ठक का अक्षर लिख लिया गया है, उससे आगे बढ़ना चाहिये तथा उसके नवें कोष्ठक में जो अक्षर पड़े, उसे भी लिख लेना चाहिये। इस प्रकार प्रति नवें अक्षर को क्रम से लिखते जाना चाहिये और तब तक लिखते जाना चाहिये, जब तक उसी पहले कोष्ठक के अक्षर तक अंगुली अथवा शलाका न पहुँच जाये। पहले कोष्ठक का अक्षर जिस कोष्ठक के अक्षर से नवाँ पड़ेगा, वहाँ तक पहुँचते–पहुँचते एक चौपाई पूरी हो जायेगी, ये प्रश्नकर्ता के अभीष्ट प्रश्न का उत्तर होगा। यहाँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि किसी–किसी कोष्ठक में केवल 'आ' की मात्रा (ा) और किसी–किसी कोष्ठक में दो–दो अक्षर हैं। अतः गिनते समय न तो मात्रा वाले कोष्ठक को छोड़ देना चाहिये और न दो अक्षरों वाले कोष्ठक को दो बार गिनना चाहिये। जहाँ मात्रा का कोष्ठक आवे, वहाँ पूर्वलिखित अक्षर के आगे मात्रा लिख लेना चाहिये और जहाँ दो अक्षरों वाला कोष्ठक आवे, वहाँ दोनों अक्षर एक साथ लिख लेना चाहिये।

अब उदाहरण के तौर पर इस रामशलाका प्रश्नावली से किसी प्रश्न के उत्तर में एक चौपाई निकाल दी जाती है। पाठक ध्यान से देखें। किसी ने भगवान् श्रीरामचन्द्र जी का ध्यान और अपने प्रश्न का चिन्तन करते हुए यदि प्रश्नावली के * इस चिह्न से संयुक्त 'म' वाले कोष्ठक में अँगुली या शलाका रक्खा और वह ऊपर बताये क्रम के अनुसार अक्षरों को गिन–गिनकर लिखता गया तो उत्तर स्वरूप चौपाई बन जायेगी–

हो इ है सो ई जो रा म * र चि रा खा । को क रि त र क ब ढ़ा व हिं सा षा ।।

यह चौपाई बालकाण्डार्न्तगत शिव और पार्वती के संवाद में है। प्रश्नकर्ता को इस उत्तर स्वरूप चौपाई से यह आशय निकालना चाहिये कि कार्य होने में संदेह है, अतः उसे भगवान् पर छोड़ देना श्रेयष्कर है।

1. सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजहि मन कामना तुम्हारी।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में श्री सीताजी के गौरीपूजन के प्रसंग में है। गौरी जी ने श्रीसीता जी को आशीर्वाद दिया है।

फल– प्रश्नकर्ता का प्रश्न उत्तम है, कार्य सिद्ध होगा।

2. प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदय राखि कोसलपुर राजा।।

स्थान– यह चौपाई सुन्दरकाण्ड में हनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– भगवान का स्मरण करके कार्यारम्भ करो, सफलता मिलेगी।

3. उघरें अंत न होई निबाहू। कालनेमि जिमि रावन राहू।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड के आरम्भ में सत्संग वर्णन के प्रसंग में है।

फल– इस कार्य में भलाई नहीं है। कार्य की सफलता में संदेह है।

4. बिधि बस सुजन कुसंगत परहीं। फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं।।

स्थान– यह चौपाई भी बालकाण्ड के आरम्भ में ही सत्संग वर्णन के प्रसंग की है।

फल– खोटे मनुष्यों का संग छोड़ दो। कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

5. मुद मंगलमय संत समाजू। जिमि जग जंगम तीरथ राजू।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में संत–समाज रूपी तीर्थ के वर्णन में है।

फल– प्रश्न उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

6. गरल सुधा रिपु करहिं मिताई। गोपद सिंधु अनल सितलाई।।

स्थान– यह चौपाई श्रीहनुमान जी के लंका में प्रवेश करने के समय की है।

फल– प्रश्न बहुत श्रेष्ठ है। कार्य सफल होगा।

7. बरुन कुबेर सुरेस समीरा। रन सनमुख धारि काहुँ न धीरा।।

स्थान– यह चौपाई लंकाकाण्ड में रावण की मृत्यु के पश्चात् मन्दोदरी के विलाप के प्रसंग में है।

फल– कार्य पूर्ण होने में संदेह है।

8. सफुल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे।।

स्थान– यह चौपाई बालकाण्ड में पुष्प वाटिका से पुष्प लाने पर विश्वामित्र जी का आशीर्वाद है।

फल– प्रश्न बहुत उत्तम है। कार्य सिद्ध होगा।

इस प्रकार रामशलाका–प्रश्नावली से कुल नौ चौपाइयाँ बनती हैं; जिनमें सभी प्रकार के प्रश्नों के उत्तराशय संन्निहित हैं।

अहंकार में तीनों गए धन, वैभव और वंश
विश्वास न हो तो देख लें कथा रावण, कौरव और कंस।

संस्कार ही अपराध रोक सकते हैं, सरकार नहीं।

विक्रम संवत् 2078 की प्रमुख तिथियाँः एक दृष्टि में

मास/पक्ष	गणेश चतुर्थी	एकादशी स्मार्त्त	प्रदोष	मास शिवरात्रि	अमावस्या	व्रत की पूर्णिमा	संक्रान्ति
चैत्र शुक्ल		23.04.21	24.04.21			26.04.21	13.04.21
वैशाख-कृष्ण	30.04.21	07.05.21	09.05.21	09.0521	11.05.21		
वैशाख शुक्ल		22.05.21	24.05.21			25.05.21	14.05.21
ज्येष्ठ कृष्ण	29.05.21	05.06.21	07.06.21	08.06.21	10.06.21		
ज्येष्ठ शुक्ल		21.06.21	22.06.21			24.06.21	15.06.21
आषाढ़ कृष्ण	27.06.21	05.07.21	07.07.21	08.07.21	10.07.21		
आषाढ़ शुक्ल		20.07.21	21.07.21			23.07.21	16.07.21
श्रावण कृष्ण	27.07.21	04.08.21	05.08.21	06.08.21	08.08.21		
श्रावण शुक्ल	12.08.21	18.08.21	20.08.21			21.08.21	16.08.21
भाद्रपद कृष्ण	25.08.21	03.09.21	04.09.21	05.09.21	07.09.21		
भाद्रपद शुक्ल	10.09.21	17.09.21	18.09.21			20.09.21	16.09.21
आश्विन कृष्ण	24.09.21	02.10.21	04.10.21	04.10.21	06.10.21		
आश्विन शुक्ल		16.10.21	18.10.21			20.10.21	17.10.21
कार्तिक कृष्ण	24.10.21	01.11.21	02.11.21	02.11.21	04.11.21		
कार्तिक शुक्ल		14.11.21	15.11.21			18.11.21	16.11.21
मार्गशीर्ष कृष्ण	23.11.21	30.11.21	02.12.21	02.12.21	04.12.21		
मार्गशीर्ष शुक्ल	07.12.21	14.12.21	16.12.21			18.12.21	15.12.21
पौष कृष्ण	22.12.21	30.12.21	31.12.21	01.01.22	02.01.22		
पौष शुक्ल	13.01.22	15.01.22				17.01.22	14.01.22
माघ कृष्ण	21.01.22	28.01.22	30.01.22	30.01.22	01.02.22		
माघ शुक्ल	04.02.22	12.02.22	14.02.22			16.02.22	12.02.22
फाल्गुन कृष्ण	20.02.22	26.02.22	28.02.22	01.03.22	02.03.22		
फाल्गुन शुक्ल		14.03.22	15.03.22			17.03.22	14.03.22
चैत्र कृष्ण	21.03.22	28.03.22	29.03.22	30.03.22	01.04.22		

बिखरने दो होंठों पर हँसी की फुहारें दोस्तों।
प्यार से बोलने से जायदाद कम नहीं होती।।

विक्रम संवत् 2078 वर्ष के व्रत पर्व एवं त्योहारों की सूची

शुभ संवत् 2078 शाके 1943 राजा भौम मन्त्री भौम समय वास रजक गृहे वाहन वृषभ रोहिणी का निवासः तट पर संवत्सर का नाम राक्षस

13 अप्रैल से 27 अप्रैल 2021 तक (चैत्र शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	13.04.2021	नवरात्रारम्भ, कलश स्थापन, गौतम जयन्ती
द्वितीया	बुधवार	14.04.2021	हरिद्वार कुम्भस्नान प्रमुख स्नान, डॉ. अंबेडकर जयन्ती
तृतीया	गुरुवार	15.04.2021	गणगौरपूजन (राज.), श्री मत्स्य जयन्ती
चतुर्थी	शुक्रवार	16.04.2021	रोहिणीव्रत, दमनक चतुर्थी
पंचमी	शनिवार	17.04.2021	श्री पंचमी, हयव्रत, पर्यूषणपर्व प्रारम्भ
षष्ठी	रविवार	18.04.2021	स्कन्द षष्ठी, रामानुजाचार्य जयन्ती
सप्तमी	सोमवार	19.04.2021	नवपद औली प्रारम्भ (जैन)
अष्टमी	मंगलवार	20.04.2021	श्रीदुर्गाष्टमी, अशोकाष्टमी, मनसादेवी, अन्नपूर्णा पूजा
नवमी	बुधवार	21.04.2021	श्रीरामनवमीव्रतोत्सव, श्रीरामचरितमानस जयन्ती
दशमी	गुरुवार	22.04.2021	धर्मराजदशमी, वसुन्धरारक्षणदिवस
एकादशी	शुक्रवार	23.04.2021	कामदा एकादशीव्रत (सर्वे), फूलडोल एकादशी
द्वादशी	शनिवार	24.04.2021	श्री विष्णु 12, हरिदमनोत्सव, प्रदोष व्रत
त्रयोदशी	रविवार	25.04.2021	अनङ्ग त्रयोदशी, श्री महावीर जयन्ती जैन
चतुर्दशी	सोमवार	26.04.2021	श्री शिवदमनोत्सव
पूर्णिमा	मंगलवार	27.04.2021	चैत्री पूर्णिमा, हनुमान जयन्ती

28 अप्रैल से 11 मई 2021 तक (वैशाख कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
चतुर्थी	शुक्रवार	30.04.2021	चतुर्थी व्रत, चन्द्रोदय 22/48
पंचमी	शनिवार	01.05.2021	श्रमिक दिवस
सप्तमी	सोमवार	03.05.2021	कालाष्टमी, सौर ऊर्जा दिवस
अष्टमी	मंगलवार	04.05.2021	शीतलापूजा, बूढ़ाबासोडा, पंचक प्रारम्भ 20/47
नवमी	बुधवार	05.05.2021	चण्डिका नवमी
एकादशी	शुक्रवार	07.05.2021	वरूथिनी एकादशीव्रत (सर्वे), श्री वल्लभाचार्य जयन्ती, कवि टैगोर जयन्ती
त्रयोदशी	रविवार	09.05.2021	प्रदोष व्रत, पंचक समाप्त 17/28, मदर्स डे
अमावस्या	मंगलवार	11.05.2021	श्री शुकदेव जयन्ती, देवपितृकार्येऽमापुण्यः

12 मई से 26 मई 2021 तक (वैशाख शुक्ल पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	12.05.2021	देवदामोदर तिथि (असम), ऋषि पाराशर जयन्ती
द्वितीया	गुरुवार	13.05.2021	वीर शिवाजी जयन्ती, रोहिणी व्रत
तृतीया	शुक्रवार	14.05.2021	अक्षय तृतीया, श्रीपरशुराम जयन्ती
पंचमी	सोमवार	17.05.2021	आद्यशंकराचार्य जयन्ती, सूरदास जयन्ती
षष्ठी	मंगलवार	18.05.2021	श्रीरामानुजाचार्य जयन्ती (उभा.)
सप्तमी	बुधवार	19.05.2021	श्री गंगासप्तमी, गंगोत्पत्ति
अष्टमी	गुरुवार	20.05.2021	जानकीनवमी, वैष्णवोत्सव, देवी बगलामुखी जयन्ती
दशमी	शनिवार	22.05.2021	मोहिनी एकादशी व्रत (स्मार्त्त)
एकादशी	रविवार	23.05.2021	मोहिनी एकादशी व्रत (वैष्णवादि)
त्रयोदशी	सोमवार	24.05.2021	सोम प्रदोष व्रत, देवी छिन्नमस्ता जयन्ती
चतुर्दशी	मंगलवार	25.05.2021	नृसिंहजयन्ती, कूर्म जयन्ती, सत्यव्रत
पूर्णिमा	बुधवार	26.05.2021	वैशाखी पूर्णिमा, स्नानपूर्ण, बुद्ध जयन्ती

27 मई से 10 जून 2021 तक (ज्येष्ठ कृष्ण पक्ष) ग्रीष्म ऋतु, रविउत्तरायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
द्वितीया	शुक्रवार	28.05.2021	श्री नारद जयन्ती, वृंदावन परिक्रमा, वीर सावरकर जयन्ती
तृतीया	शनिवार	29.05.2021	गणेश चतुर्थी व्रत, चन्द्रोदय 22/35
षष्ठी	सोमवार	31.05.2021	पंचक प्रारम्भ 28/3
सप्तमी	मंगलवार	01.06.2021	बुढ़वामंगल पूजा पूर्वांचल
अष्टमी	बुधवार	02.06.2021	कालाष्टमी, संतदादूदयाल पुण्यः
एकादशी	शनिवार	05.06.2021	अपरा एकादशी व्रत (स्मार्त्त), पंचक समाप्त 23/27 विश्व पर्यावरण दिवस
एकादशी	रविवार	06.06.2021	अपरा एकादशी व्रत, वैष्णव, भद्रकाली 11
द्वादशी	सोमवार	07.06.2021	सोम प्रदोष व्रत
त्रयोदशी	मंगलवार	08.06.2021	सावित्रीव्रतारंभ
चतुर्दशी	बुधवार	09.06.2021	रोहिणी व्रत, फलाहारिणी, कालिकापूजा
अमावस्या	गुरुवार	10.06.2021	भावुका अमावस्या, वटसावित्री व्रत, वटपूजन शनि जयन्ती मेला सिंगनापुर

11 जून से 24 जून 2021 तक (ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष) वसंत ऋतु, रविउत्तरायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	11.06.2021	करवीर व्रत, दशाश्वमेध घाट स्नानारंभ (काशी)
द्वितीया	शनिवार	12.06.2021	चन्द्रदर्शन
तृतीया	रविवार	13.06.2021	रम्भातीजव्रत, श्रीमहाराणाप्रताप जयन्ती 482वीं मेवाड
चतुर्थी	सोमवार	14.06.2021	शहीदी गुरु अर्जुनदेव, रक्तदान दिवस
पंचमी	मंगलवार	15.06.2021	श्रुतिपंचमी (जैन)
षष्ठी	बुधवार	16.06.2021	जामित्रषष्ठी, अरण्यषष्ठी, विन्ध्यवासिनी पूजा
सप्तमी	गुरुवार	17.06.2021	बड़पूजा (भिंड)
अष्टमी	शुक्रवार	18.06.2021	श्री दुर्गाष्टमी, देवी धूमावती ज.मे. क्षीरभवानी (क) रानीझांसी पुण्यः
नवमी	शनिवार	19.06.2021	श्री महेश नवमी, दही चूड़ा महोत्सव
दशमी	रविवार	20.06.2021	श्रीगंगादशहरा, रामेश्वर प्रतिष्ठा दिवस, बटुक भैरव जयन्ती
एकादशी	सोमवार	21.06.2021	निर्जला एकादशी व्रत (सर्वे)
द्वादशी	मंगलवार	22.06.2021	चम्पक द्वादशी, मेला खाटूश्याम (राज.), प्रदोष व्रत
पूर्णिमा	गुरुवार	24.06.2021	सत्यव्रत पूर्णिमाव्रत, संत कबीर जयन्ती, वट सावित्री व्रत समाप्त

25 जून से 10 जुलाई 2021 तक (आषाढ़ कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	शुक्रवार	25.06.2021	गुरुहरगोविन्द जयन्ती
तृतीया	रविवार	27.06.2021	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 22/4
चतुर्थी	सोमवार	28.06.2021	पंचक प्रारम्भ 13/4
सप्तमी	गुरुवार	01.07.2021	कालाष्टमी व्रत
नवमी	शनिवार	03.07.2021	पंचक समाप्त 6/13
दशमी	रविवार	04.07.2021	स्वामी विवेकानन्द पुण्यः
एकादशी	सोमवार	05.07.2021	योगिनी एकादशी व्रत (सर्वे), बाबा देवराहा पुण्यः
द्वादशी	मंगलवार	06.07.2021	पक्षवर्धिनी महाद्वादशी
त्रयोदशी	बुधवार	07.07.2021	प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	गुरुवार	08.07.2021	मासशिवरात्रि
अमावस्या	शुक्रवार	09.07.2021	पितृकार्येऽमापुण्यः
अमावस्या	शनिवार	10.07.2021	स्नानादि देवकार्यऽमा, शनैश्चरीमावस

11 जुलाई से 24 जुलाई 2021 तक (आषाढ़ शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रवि दक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	रविवार	11.07.2021	गुप्तनवरात्र विधान (मिथिलांचल), चन्द्रदर्शन
द्वितीया	सोमवार	12.07.2021	श्रीजगन्नाथ रथयात्रा (पुरी), मनोरथ द्वितीया (बंगाल)
तृतीया	मंगलवार	13.07.2021	गुडीचाउत्सव, वल्लभाचार्य पुण्यः स्वामी कल्याणदेव पुण्यः
चतुर्थी	बुधवार	14.07.2021	स्वामी विवेकानन्द स्मृति दिवस
पंचमी	गुरुवार	15.07.2021	द्वारकाधीशपाटोत्सव, कौमारीषष्ठी
षष्ठी	शुक्रवार	16.07.2021	विवस्वत सप्तमी, सूर्य पूजा
अष्टमी	शनिवार	17.07.2021	अष्ट्राह्विकापर्व (जैन)
नवमी	रविवार	18.07.2021	भड्डली नवमी, मेला शरीफ भवानी
एकादशी	मंगलवार	20.07.2021	देवशयनी एकादशी व्रत (सर्वे)
द्वादशी	बुधवार	21.07.2021	प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	शुक्रवार	23.07.2021	सत्यव्रत
पूर्णिमा	शनिवार	24.07.2021	गुरुपूर्णिमा, व्यास पूजा, शिवश्यनोत्सव

25 जुलाई से 8 अगस्त 2021 तक (श्रावण कृष्ण पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
प्रतिपदा	रविवार	25.07.2021	अशून्यशयन व्रतारम्भः, स्वामी अखण्डानन्द जयन्ती, पंचक प्रारम्भ 22/51
तृतीया	सोमवार	26.07.2021	सोमवार व्रत
चतुर्थी	मंगलवार	27.07.2021	चतुर्थीव्रत चन्द्रोदय 21/52
पंचमी	बुधवार	28.07.2021	नागपंचमी
सप्तमी	शुक्रवार	30.07.2021	पंचक समाप्त 14/1
अष्टमी	रविवार	01.08.2021	तिलक पुण्यः
नवमी	सोमवार	02.08.2021	सोमवार व्रत
दशमी	मंगलवार	03.08.2021	रोहिणी व्रत
एकादशी	बुधवार	04.08.2021	कामिका एकादशी व्रत (सर्वे)
द्वादशी	गुरुवार	05.08.2021	प्रदोष व्रत
त्रयोदशी	शुक्रवार	06.08.2021	मास शिवरात्रिव्रत, श्रीगंगाजल से रुद्राभिषेक
अमावस्या	रविवार	08.08.2021	हरियाली अमावस्या, देवपितृकार्ये अमावस्यां

9 अगस्त से 22 अगस्त 2021 तक (श्रावण शुक्ल पक्ष) वर्षा ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
प्रतिपदा	सोमवार	09.08.2021	नक्तव्रतारम्भ, रा. क्रांतिदिवस, सोमवार व्रत
द्वितीया	मंगलवार	10.08.2021	सिंधारा दूज, स्वामी करपात्री जयन्ती
तृतीया	बुधवार	11.08.2021	मधुश्रवातीज, हरियाली तीज, स्वर्णगौरी व्रत
चतुर्थी	गुरुवार	12.08.2021	विनायक चतुर्थी, वरद चतुर्थी चन्द्रोदय 9/18
पंचमी	शुक्रवार	13.08.2021	नागपंचमी देशाचारे, श्रीकल्कि जयन्ती, अमरनाथ यात्रा
षष्ठी	शनिवार	14.08.2021	वर्णश्रयालषष्ठी
सप्तमी	रविवार	15.08.2021	शीतला सप्तमी, श्री तुलसीदास जयन्ती, नयना देवी, चिन्तपूर्णी (हि.प्र.), भारतीय स्वतंत्रता दिवस 75वां
अष्टमी	सोमवार	16.08.2021	सोमवार व्रत
एकादशी	बुधवार	18.08.2021	पवित्रा एकादशी व्रत (सर्वे)
त्रयोदशी	शुक्रवार	20.08.2021	प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	शनिवार	21.08.2021	ह्यग्रीवोत्पति, ओनम, सत्यव्रत, बुजुर्ग दिवस
पूर्णिमा	रविवार	22.08.2021	श्रावणी उपाकर्म, रक्षाबन्धन, पंचक प्रारम्भ 7/59 ऋषितर्पण, गायत्री जयन्ती, संस्कृत दिवस

23 अगस्त से 7 सितम्बर 2021 तक (भाद्रपद कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
द्वितीया	मंगलवार	24.08.2021	अशून्यशयन व्रतपूर्ण, भीमचण्डी विद्याजयन्ती
तृतीया	बुधवार	25.08.2021	कज्जली तीज, बहुला चतुर्थी चन्द्रोदय 20/52
चतुर्थी	गुरुवार	26.08.2021	पंचक समाप्त 22/58
पंचमी	शुक्रवार	27.08.2021	हलचन्दन षष्ठी चन्द्रोदय 21/52
षष्ठी	शनिवार	28.08.2021	ललहीछटि, हरिछटिपूजा चन्द्रोदय 22/24
सप्तमी	रविवार	29.08.2021	द्रोणमेला दनकौर, अगस्त तारा उदय
अष्टमी	सोमवार	30.08.2021	श्रीकृष्णजन्माष्टमी व्रतोत्सव चन्द्रोदय 23/37, संतज्ञानेश्वर जयन्ती, आद्यकाली जयन्ती, रोहिणी व्रत
एकादशी	शुक्रवार	03.09.2021	अजा एकादशी व्रत (सर्वे)
द्वादशी	शनिवार	04.09.2021	गोवत्स पूजा, बछबारस, प्रदोष व्रत, छटिपूजा
त्रयोदशी	रविवार	05.09.2021	अघोरा चौदस, कैलाश यात्रा
चतुर्दशी	सोमवार	06.09.2021	पिठोरी अमावस्या, कुशोत्पाटिनी, मेला सुंथरेसाह दिल्ली
अमावस्या	मंगलवार	07.09.2021	नक्तव्रतपूर्ण, स्नानादिपर्व, कुशाग्रहणम्

8 सितम्बर से 20 सितम्बर 2021 तक (भाद्रपद शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
द्वितीया	बुधवार	08.09.2021	स्वामी शिवानन्द जयन्ती
तृतीया	गुरुवार	09.09.2021	हरितालिकातीज व्रत, वराह जयन्ती
चतुर्थी	शुक्रवार	10.09.2021	श्री गणेश जयन्ती, पत्थर चौथ, कलंक चौथ, चन्द्रदर्शन निषेध
पंचमी	शनिवार	11.09.2021	ऋषि पंचमी, क्षमावाणीपर्व, विनोबा जयन्ती
षष्ठी	रविवार	12.09.2021	सूर्यषष्ठी, बलदेव छटि
सप्तमी	सोमवार	13.09.2021	मुक्ताभरण सप्तमी, सन्तान सप्तमी महालक्ष्मी व्रत प्रा.
अष्टमी हरिदास	मंगलवार	14.09.2021	श्रीराधाष्टमीव्रतोत्सव, श्रीदधीच जयन्ती, स्वामी जयन्ती, भागवत सप्ताह प्रारम्भ, हिन्दी दिवस
नवमी	बुधवार	15.09.2021	श्रीचन्दनवमी, इन्जीनियर्सडे
एकादशी	शुक्रवार	17.09.2021	पद्मा–जलझूलनी एकादशीव्रत (सर्वे) फूलडोल मेला, श्रीवामन जयन्ती, श्रीविश्वकर्मा पूजा
द्वादशी	शनिवार	18.09.2021	प्रदोष व्रत, पंचक प्रारंभ, भुवनेश्वरी जयन्ती
चतुर्दशी	रविवार	19.09.2021	गणेश विसर्जन, अनन्त चतुर्दशी
पूर्णिमा	सोमवार	20.09.2021	प्रौष्ठपदी पूर्णिमा, महालयारम्भ, पूर्णिमा श्राद्ध व्रत

21 सितम्बर से 6 अक्टूबर 2021 तक (आश्विन कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
प्रतिपदा	मंगलवार	21.09.2021	पितृपक्ष प्रारम्भ, प्रतिपदा श्राद्ध
द्वितीया	बुधवार	22.09.2021	द्वितीया श्राद्ध
द्वितीया	गुरुवार	23.09.2021	पंचक समाप्त 6/43, तृतीया श्राद्ध दिन रात बराबर
तृतीया	शुक्रवार	24.09.2021	चतुर्थी व्रत श्राद्ध चन्द्रोदय 20/22
चतुर्थी	शनिवार	25.09.2021	पंचमी श्राद्ध
पंचमी	रविवार	26.09.2021	रोहिणी व्रत पंचमी श्राद्ध
षष्ठी	सोमवार	27.09.2021	षष्ठी श्राद्ध
सप्तमी	मंगलवार	28.09.2021	सप्तमी श्राद्ध, शहीद भगत सिंह जयन्ती
अष्टमी	बुधवार	29.09.2021	अष्टमी श्राद्ध, जीवित्युत्रिकाव्रत
नवमी	गुरुवार	30.09.2021	मातृनवमी, सौभाग्यवतीनां श्राद्ध
दशमी	शुक्रवार	01.10.2021	दशमी श्राद्ध, रक्तदान दिवस
एकादशी	शनिवार	02.10.2021	इन्दिरा एकादशी व्रत (सर्वे), श्राद्ध, श्रीगाँधी, शास्त्रीजी
द्वादशी	रविवार	03.10.2021	सन्यासीनां द्वादशी श्राद्ध
त्रयोदशी	सोमवार	04.10.2021	प्रदोष व्रत, त्रयोदशी श्राद्ध, पशु कल्याण दिवस, मास शिवरात्रि
चतुर्दशी	मंगलवार	05.10.2021	दुर्मरणं श्राद्धं चतुर्दशी श्राद्धं, देवी कात्यायनी जयन्ती, नागरिक दिवस
अमावस्या	बुधवार	06.10.2021	सर्वपितृ अमावस्या, भूले बिछुड़ों का श्राद्ध, पितृ विसर्जन

7 अक्टूबर से 20 अक्टूबर 2021 तक (आश्विन शुक्ल पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
प्रतिपदा मातामहं	गुरुवार	07.10.2021	शारदीय नवरात्रारम्भः, कलश स्थापनं मध्याह्ने, श्राद्ध, अग्रसेन जयन्ती
द्वितीया	शुक्रवार	08.10.2021	वायु सेवा दिवस
तृतीया	शनिवार	09.10.2021	सिन्दूर तृतीया, विश्व डाक दिवस
पंचमी	रविवार	10.10.2021	उपांग ललिता पंचमी व्रत, गरबा डांस (गुजरात)
सप्तमी	मंगलवार	12.10.2021	सरस्वती आवाहनं, नवपद ओली, भद्रकाली अवतार
अष्टमी	बुधवार	13.10.2021	श्रीदुर्गाष्टमी पूजा, सरस्वती पूजा, मे. ज्वालामुखी तारादेवी
नवमी	गुरुवार	14.10.2021	महानवमी, अस्त्रशस्त्रपूजा, नवरात्रि समाप्त
दशमी	शुक्रवार	15.10.2021	विजयादशमी, दशहरा, पंचक प्रारम्भ 21/18
एकादशी	शनिवार	16.10.2021	पापांकुशा एकादशीव्रत (सर्वे) भरत मिलाप
त्रयोदशी	सोमवार	18.10.2021	सोम प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	मंगलवार	19.10.2021	शाकंभरी देवी दर्शन देवबंद, कोजागरी व्रत
पूर्णिमा	बुधवार	20.10.2021	सत्यव्रत, शरद पूर्णिमा, क्षीरशयनं, पंचक समाप्त 14/1 खीरभोग अर्पण, कार्तिक स्नान प्रा. महर्षि वाल्मीकि जयन्ती

21 अक्टूबर से 4 नवम्बर 2021 तक (कार्तिक कृष्ण पक्ष) शरद ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
चतुर्थी	रविवार	24.10.2021	करवा चौथ व्रत चन्द्रोदय 20/09 रोहिणी व्रत, राष्ट्र दिवस
सप्तमी	गुरुवार	28.10.2021	अहोई अष्टमी व्रत, कालाष्टमी, दाम्पत्य अष्टमी चन्द्रोदय 23/31
अष्टमी	शुक्रवार	29.10.2021	विश्नोई पंथ दिवस
नवमी	शनिवार	30.10.2021	विश्व बचत दिवस
दशमी	रविवार	31.10.2021	सरदार पटेल जयन्ती, एकता दिवस, इंदिरा गाँधी पुण्यतिथि
एकादशी	सोमवार	01.11.2021	रमा एकादशी व्रत (सर्वे), गोवत्स द्वादशी, गोसेवा
द्वादशी	मंगलवार	02.11.2021	प्रदोष व्रत, श्रीधनवन्तरिज, धनतेरस, आयुर्वेद दिवस, यमदीप दानं, स्वर्णमयी अन्नपूर्णा दर्शन (काशी)
अमावस्या	गुरुवार	04.11.2021	कार्तिकीऽमापुण्य, श्रीमहालक्ष्मीपूजन (दीपावली), दीप उत्सव, श्रीमहावीर निर्वाण (जैन), म. दयानन्द पुण्यः पुष्कर मेला शुरू, कालरात्रि कमला जयन्ती

5 नवम्बर से 19 नवम्बर 2021 तक (कार्तिक शुक्ल पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
प्रतिपदा	शुक्रवार	05.11.2021	अन्नकूट, गोवर्धन पूजा, बलिपूजा, गौद्यूतक्रीडा
द्वितीया	शनिवार	06.11.2021	भाईदूज, यम द्वितीया, विश्वकर्मा पूजा, चित्रगुप्त पूजा
चतुर्थी	सोमवार	08.11.2021	छटि पर्व आरम्भ (बिहार)
पंचमी	मंगलवार	09.11.2021	सौभाग्य–ज्ञान पंचमी
षष्ठी	बुधवार	10.11.2021	सूर्यषष्ठी, डालाछटि, सहस्राजुन जयन्ती
सप्तमी	गुरुवार	11.11.2021	पंचक प्रारम्भ26/55, गोपाष्टमी, गोपूजन
नवमी	शुक्रवार	12.11.2021	अक्षय–आंवला–कुष्माण्डनवमी, जुगल जोड़ी परिक्रमा वृंदावन अष्टाह्निका प्रा. प्रसारण दिवस
दशमी	शनिवार	13.11.2021	आशादशमी आरोग्यव्रत, कंसवधलीला मथुरा
एकादशी	रविवार	14.11.2021	प्रबोधिनी एकादशी व्रत (स्मार्त्त) देव उठान, तुलसी विवाह, भीष्म पंचक प्रारम्भ, बाल दिवस
द्वादशी	सोमवार	15.11.2021	प्रबोधिनी एकादशी व्रत वैष्णवादि,श्री खाटूश्याम जयन्ती,कवि कालिदास जयन्ती
द्वादशी	मंगलवार	16.11.2021	पंचक समाप्त 20/13, प्रदोष व्रत
त्रयोदशी	बुधवार	17.11.2021	बैकुण्ठ चतुर्दशी, लाजपतराय पुण्यः
चतुर्दशी	गुरुवार	18.11.2021	चौमासी चौदस (जैन), सत्यव्रत
पूर्णिमा	शुक्रवार	19.11.2021	कार्तिकी पूर्णिमा, स्नानपूर्ण, गुरुनानक जयन्ती, भीष्म पंचक स.

20 नवम्बर से 4 दिसम्बर 2021 तक (मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
चतुर्थी	मंगलवार	23.11.2021	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 20/28
पंचमी	बुधवार	24.11.2021	गुरुतेगबहादुर बलिदान दिवस
सप्तमी	शुक्रवार	26.11.2021	संविधान दिवस
अष्टमी	शनिवार	27.11.2021	महाकाल भैरवाष्टमी
एकादशी	मंगलवार	30.11.2021	उत्पत्ति एकादशी व्रत स्मार्त्त, वैष्णव वल्लभानां
द्वादशी	बुधवार	01.12.2021	उत्पत्ति एकादशी व्रत निम्बार्क
त्रयोदशी	गुरुवार	02.012.2021	प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	शुक्रवार	03.12.2021	पितृकार्येऽमावस्या, श्रीबालाजी जयन्ती
अमावस्या	शनिवार	04.12.2021	देवकार्येऽमावस्या, शनैश्चरीमावस, मेला शनिसिंगनापुर, नौ सेना दिवस

5 दिसम्बर से 19 दिसम्बर 2021 तक (मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविदक्षिणायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
चतुर्थी	मंगलवार	07.12.2021	वैनायक व्रत, सशस्त्र सेना दिवस
पंचमी	बुधवार	08.12.2021	श्रीपंचमी, रामजानकी विवाह उत्सव, बांके बिहारी प्राकट्योत्सव
षष्ठी	गुरुवार	09.12.2021	स्कन्द षष्ठी, चम्पा षष्ठी, पंचक प्रारम्भ 10/14
सप्तमी	शुक्रवार	10.12.2021	मित्र सप्तमी, नरसी मेहता जयन्ती, मानवाधिकार दिवस
नवमी	रविवार	12.12.2021	नन्दिनी नवमी
दशमी	सोमवार	13.12.2021	पंचक समाप्त 26/4, दशादित्यव्रत
एकादशी	मंगलवार	14.12.2021	मोक्षदा एकादशी व्रत (सर्वे) मौनी एकादशी (जैन), श्री गीता जयन्ती
द्वादशी	बुधवार	15.12.2021	अखण्डा द्वादशी
त्रयोदशी	गुरुवार	16.12.2021	प्रदोष व्रत, विजय दिवस
चतुर्दशी	शुक्रवार	17.12.2021	रोहिणी व्रत, पिशाचमोचन श्राद्ध
चतुर्दशी	शनिवार	18.12.2021	श्री दत्त जयन्ती, सत्यव्रत
पूर्णिमा	रविवार	19.12.2021	पूर्णिमा पुण्यः, षोडसीत्रिपुरसुन्दरी विद्या जयन्ती, अन्नपूर्णा जयन्ती

20 दिसम्बर 2021 से 2 जनवरी 2022 तक (पौष कृष्ण पक्ष) हेमन्त ॠतु, रविदक्षिणायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
तृतीया	बुधवार	22.12.2021	चतुर्थी व्रत, चन्द्रोदय 20/13
चतुर्थी	गुरुवार	23.12.2021	श्रद्धानन्द बलिदान दिवस, किसान दिवस
पंचमी	शुक्रवार	24.12.2021	उपभोक्ता दिवस
षष्ठी	शनिवार	25.12.2021	क्रिसमस डे, पं.म.मो. मालवीय जयन्ती, अटल जयन्ती
अष्टमी	सोमवार	27.12.2021	कालाष्टमी, अष्टका श्राद्ध
एकादशी	गुरुवार	30.12.2021	सफला एकादशी व्रत (सर्वे), कल्पवास प्रा. प्रयागराज
द्वादशी	शुक्रवार	31.12.2021	प्रदोष व्रत, बाबानागपालपुण्यः
त्रयोदशी	शनिवार	01.01.2022	मास शिवरात्रि, ईसाई नववर्षारम्भ
अमावस्या	रविवार	02.01.2022	पौषीमावस, देवपितृ अमावस्या

3 जनवरी से 17 जनवरी 2022 तक (पौष शुक्ल पक्ष) शिशिर ॠतु, रविउत्तरायणे

तिथि	वार	दिनांक	व्रत, पर्व, त्यौहार
द्वितीया	मंगलवार	04.01.2022	खिचड़ी महोत्सव प्रारम्भ वृंदावन
तृतीया	बुधवार	05.01.2022	पंचक प्रारम्भ 19/57
चतुर्थी	गुरुवार	06.01.2022	पत्रकार दिवस
पंचमी	शुक्रवार	07.01.2022	भोग गरुड़गोविन्द (मथुरा)
सप्तमी	रविवार	09.01.2022	गुरुगोविन्दसिंह ज., श्रीनन्दबाबा ज., प्रवासी भारतीय दिवस
अष्टमी	सोमवार	10.01.2022	पंचक समाप्त 8/48 श्री गंगासागर यात्रा, विश्व
महिला			दिवस
नवमी	मंगलवार	11.01.2022	शास्त्रीजी पुण्यः सिद्धेश्वर मेला (बीजापुर)
एकादशी	गुरुवार	13.01.2022	पुत्रदा एकादशी व्रत (सर्वे) लोहड़ी पर्व
द्वादशी	शुक्रवार	14.01.2022	कल्पवास समाप्त, पोंगल पर्व, माघ बिहू, मकर संक्राति, पुण्य काल 7/18 खरमास समाप्त
त्रयोदशी	शनिवार	15.01.2022	प्रदोष व्रत, सेना दिवस
पूर्णिमा	सोमवार	17.01.2022	पौषीसत्यव्रत पूर्णिमा, माघस्नानारम्भ, देवी शाकम्भरी जयन्ती

18 जनवरी से 1 फरवरी 2022 तक (माघ कृष्ण पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	मंगलवार	18.01.2022	काशिस्थ दशाश्वमेध घाटस्नानारंभ
तृतीया	शुक्रवार	21.01.2022	संकष्टी (संकट चौथ), श्री गणेश चतुर्थी चन्द्रोदय 21/1
पंचमी	रविवार	23.01.2022	नेताजी सुभाष जयन्ती
षष्ठी	सोमवार	24.01.2022	श्रीरामानन्दःस्वयंरामः प्रादुर्भूतो महितले
सप्तमी	मंगलवार	25.01.2022	श्रीरामानन्दाचार्य जयन्ती, कालाष्टमी, अष्टका श्राद्ध
नवमी	बुधवार	26.01.2022	भारतीय गणतन्त्र दिवस 73वाँ
एकादशी	शुक्रवार	28.01.2022	षटतिला एकादशी व्रत स्मार्त्त, लाला लाजपतराय जयन्ती
द्वादशी	शनिवार	29.01.2022	षटतिला एकादशी व्रत निम्बार्क, शीतलनाथ जयन्ती
त्रयोदशी	रविवार	30.01.2022	मेरू त्रयोदशी, प्रदोष व्रत, श्री गाँधीजी पुण्यः, मास शिवरात्रि
अमावस्या	मंगलवार	01.02.2022	मौनी अमावस्या, स्नान मेला प्रयागराज

2 फरवरी से 16 फरवरी 2022 तक (माघ शुक्ल पक्ष) शिशिर ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	बुधवार	02.02.2022	गुप्त नवरात्र विधान प्रारम्भ
तृतीया	गुरुवार	03.02.2022	गौरी तृतीया
चतुर्थी	शुक्रवार	04.02.2022	वरद चतुर्थी तिल
पंचमी	शनिवार	05.02.2022	वसंत पंचमी, श्री पंचमी, सरस्वती जयन्ती, तक्षक पूजा, सर छोटूराम जयन्ती, श्री बाँकेबिहारी होली प्रारम्भ, फाग उत्सव शुरू
षष्ठी	रविवार	06.02.2022	पंचक समाप्त 17/9, मन्दार षष्ठी, दारिद्य षष्ठी, शीतला षष्ठी
सप्तमी	सोमवार	07.02.2022	अचला सप्तमी, नर्मदा जयन्ती
अष्टमी	मंगलवार	08.02.2022	भीष्माष्टमी श्राद्धं
नवमी	गुरुवार	10.02.2022	रोहिणी व्रत
दशमी	शुक्रवार	11.02.2022	ठा. दामोदर प्राकट्योत्सव
एकादशी	शनिवार	12.02.2022	जया एकादशी व्रत (सर्वे), वेणेश्वर मेला डूंगरपुर (राज.)
द्वादशी	रविवार	13.02.2022	भीष्म द्वादशी
त्रयोदशी	सोमवार	14.02.2022	प्रदोष व्रत, मरूमहोत्सव जैसलमेर (राजस्थान)
चतुर्दशी	मंगलवार	15.02.2022	श्रीरामचरण स्नेही जयन्ती, शाहपुरामेवाड़ भागवत प्रारम्भ
पूर्णिमा	बुधवार	16.02.2022	संत रविदास जयन्ती, स्नानादिमाघी सत्यव्रत पूर्णिमा

17 फरवरी से 2 मार्च 2022 तक (फाल्गुन कृष्ण पक्ष) हेमन्त ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
द्वितीया	शुक्रवार	18.02.2022	वसन्त ऋतु प्रारम्भ
तृतीया	रविवार	20.02.2022	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 21/52
चतुर्थी	सोमवार	21.02.2022	माता यशोदा जयन्ती
षष्ठी	मंगलवार	22.02.2022	महाकालपूजा विशेष
सप्तमी	बुधवार	23.02.2022	कालाष्टमी
अष्टमी	गुरुवार	24.02.2022	श्रीजानकी व्रत, अष्टका श्राद्ध
नवमी	शुक्रवार	25.02.2022	समर्थ गुरु रामदास नवमी, चन्द्रशेखर पुण्यः
दशमी स्मार्त्त	शनिवार	26.02.2022	महर्षि दयानंद जयन्ती, विजया एकादशी व्रत
एकादशी	रविवार	27.02.2022	त्रिस्पर्शामहाद्वादशी, विजया एकादशी व्रत वैष्णवानां
त्रयोदशी	सोमवार	28.02.2022	सोम प्रदोष व्रत राष्ट्रीय विज्ञान दिवस
चतुर्दशी	मंगलवार	01.03.2022	पंचक प्रारम्भ 16/33, महाशिवरात्रि व्रत, रुद्राभिषेक ज्योतिर्लिंग पूजा
अमावस्या	बुधवार	02.03.2022	देवपितृकार्येऽमापुण्यः, शिवखप्पर पूजा

3 मार्च से 18 मार्च 2022 तक (फाल्गुन शुक्ल पक्ष) वसन्त ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
द्वितीया	शुक्रवार	0.4.03.2022	फूलेरा दूज, लोक प्रसिद्ध मुहूर्त, रामकृष्णपरमहंस जयन्ती
तृतीया	शनिवार	05.03.2022	पंचक समाप्त 26/28, पं. लेखराम तृतीया
षष्ठी	मंगलवार	08.03.2022	विश्व महिला दिवस
सप्तमी	बुधवार	09.03.2022	रोहिणी व्रत
अष्टमी	गुरुवार	10.03.2022	संत दादूदयाल जयन्ती, होलाष्टक प्रारम्भ
नवमी	शुक्रवार	11.03.2022	लट्ठमार होली बरसाना
दशमी	रविवार	13.03.2022	लट्ठमार होली नन्दगाँव
एकादशी	सोमवार	14.03.2022	आमलकी एकादशी व्रत (सर्वे)
द्वादशी	मंगलवार	15.03.2022	गोविन्द द्वादशी, मेला खाटूश्याम (राज.), प्रदोष व्रत
चतुर्दशी	गुरुवार	17.03.2022	होलिका दहन 21/5, दिव्यांग दिवस
पूर्णिमा	शुक्रवार	18.03.2022	पूर्णिमा पुण्य, चैतन्य महाप्रभु जयन्ती, छारेंडी (धुलैण्डी)

19 मार्च से 1 अप्रैल 2022 तक (चैत्र कृष्ण पक्ष) वसन्त ऋतु, रविउत्तरायणे			
तिथि	**वार**	**दिनांक**	**व्रत, पर्व, त्यौहार**
प्रतिपदा	शनिवार	19.03.2022	वसन्तोत्सव, गणगौर पूजा प्रारम्भ (राजस्थान)
द्वितीया	रविवार	20.03.2022	संततुकाराम जयन्ती, महाविषुवदिन
तृतीया	सोमवार	21.03.2022	चतुर्थी व्रत चन्द्रोदय 21/48, सोम शीतला पूजन, कठपुतली दिवस
पंचमी	मंगलवार	22.03.2022	श्रीरंग पंचमी
षष्ठी	बुधवार	23.03.2022	एकनाथ षष्ठी, शहीद दिवस, मीराबाई जयन्ती
सप्तमी	गुरुवार	24.03.2022	शीतला पूजन (बासोड़ा)
अष्टमी	शुक्रवार	25.03.2022	कालाष्टमी, माता पूजन, शीतला अष्टमी, ऋषभदेव जयन्ती
दशमी	रविवार	27.03.2022	दशमाता पूजन, नौचन्दी मेला मेरठ
एकादशी	सोमवार	28.03.2022	पापमोचनी एकादशी व्रत (सर्वे) पंचक प्रारम्भ 23/55
द्वादशी	मंगलवार	29.03.2022	प्रदोष व्रत
त्रयोदशी	बुधवार	30.03.2022	मास शिवरात्रि, रंग तेरस, वारुणी पर्व
अमावस्या	शुक्रवार	01.04.2022	अमापुण्यः, चान्द्रवर्ष समाप्त, बैंक वार्षिक लेखाबंदी

स्वयं सिद्ध मुहूर्त (अनपूछ मुहूर्त)

नीचे दिये गये साढ़े तीन मुहूर्त स्वयं सिद्ध माने जाते हैं, जिसमें पंचांग की शुद्धि देखने की आवश्यकता नहीं है –

1. चैत्र शुक्ल प्रतिपदा, 2. वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया), 3. आश्विन शुक्ल दशमी (विजयादशमी), 4. (आधा) दीपावली का प्रदोष काल।

भारतवर्ष में इनके अतिरिक्त लोकाचार और देशाचार के अनुसार निम्नलिखित तिथियों को भी स्वयंसिद्ध मुहूर्त माना जाता है।

1. भड्डुली नवमी (आषाढ शुक्ल नवमी), 2. देवोत्थानी एकादशी (कार्तिक शुक्ल एकादशी), 3. वसन्त पंचमी (माघ शुक्ल पंचमी), 4. फुलेरा दूज (फाल्गुन शुक्ल द्वितीया)

इनमें (स्वयंसिद्ध मुहूर्तों में) किसी भी कार्य को करने के लिए पंचांग शुद्धि देखने की आवश्यकता नहीं है, परन्तु विवाह आदि में तो पंचांग में दिये गये मुहूर्तों को ही स्वीकार करना श्रेयस्कर है।

योग	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
सिद्धि	मूल x	श्रवण x	उ.भा. 3,8,13	कृतिका 2,7,12	पुनर्वसु 5,10,15	पू.फा. 1,6,11	स्वाती 4,9,14
अमृतसिद्धि	हस्त	मृगशिरा	अश्विनी	अनुराधा	पुष्य	रेवती	रोहिणी
सर्वार्थसिद्धि	हस्त, मूल पुष्य अश्विनी उत्तरा 03	पुष्य, श्रवण, रोहिणी मृगशिरा, अनुराधा	अश्विनी उ.भा. कृतिका आश्लेषा	रोहिणी, अनुराधा हस्त, कृतिका मृगशिरा	रेवती, अनुराधा अश्विनी पुनर्वसु, पुष्य	रेवती, अनुराधा अश्विनी पुनर्वसु श्रवण	श्रवण, रोहिणी, स्वाती
उत्पात	विशाखा	पू.षा.	धनिष्ठा	रेवती	रोहिणी	पुष्य	उ.फा.
मृत्यु	अनुराधा 1/6/11	उ.षा. 2/7/12	शतभिषा 1/6/11	अश्विनी 3/8/13	मृगशिरा 4/9/14	आश्लेषा 2/7/12	हस्त 5/10/15
काल	ज्येष्ठा	अभिजित्	पू.भा.	भरणी	आर्द्रा	मघा	चित्रा
यमघंट	मघा	विशाखा	आर्द्रा	मूल	कृतिका	कृतिका	हस्त

आज कौन–सा योग है यह जानने के लिए वार के नीचे लिखे नक्षत्र या तिथि से संयोग होने पर उस दिन उसके बायें लिखा योग होता है। उदाहरण के लिए सबसे ऊपर मंगलवार के नीचे उ0भा0; 3,8,13 लिखा है। इसका तात्पर्य है कि यदि मंगलवार को उत्तराभाद्रपद–नक्षत्र, तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी–तिथि: इनमें से कोई एक हो तो मंगलवार को बायें अंकित सिद्धि नामक योग होगा।

एक दिन यदि एक से अधिक योग प्राप्त हों, तो शुभ योग को प्रधान मानना चाहिये। कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व मुहूर्तादि के साथ इनका भी ध्यान रखने पर कार्यसिद्धि में विशेष सहायता मिलती है।

राहुकाल

कोई भी कार्य प्रारम्भ करते समय अथवा यात्रा को प्रारम्भ करते समय यथासंभव यह समय टाल दें। यदि संभव न हो तो ईश्वर का स्मरण करते हुए 'हरि: शरणम्' अर्थात् हे प्रभु! मैं आपकी शरण में हूँ, इस भाव से कार्य या यात्रा आरम्भ कर सकते हैं। 'सोने में सुहागा होगा' यदि हर कार्य/यात्रा के पूर्व उपर्युक्त मंत्र कम से कम 3 बार कह लें।

दिन		राहुकाल का समय	दिन		राहुकाल का समय
रविवार	शाम	04.30 से 06.00 बजे	सोमवार	सुबह	07.30 से 09.00 बजे
मंगलवार	दोपहर	03.00 से 04.30 बजे	बुधवार	दोपहर	12.00 से 01.30 बजे
गुरुवार	दोपहर	01.30 से 03.00 बजे	शुक्रवार	सुबह	10.30 से 12.00 बजे
शनिवार	सुबह	09.00 से 10.30 बजे			

देश–विदेश के विभिन्न स्थानों पर सूर्योदय–सूर्यास्त के हिसाब से 5 से 10 मिनट का अंतर हो सकता है।

आरती श्री गणेशजी की

जय गणेश, जय गणेश जय गणेश देवा। माता जाकी पार्वती, पिता महादेवा।।
एकदन्त दयावन्त, चार भुजा धारी। मस्तक सिन्दूर सोहे, मूसे की सवारी।। जय गणेश ...।।
अन्धन को आँख देत, कोढ़िन को काया। बाँझन को पुत्र देत, निर्धन को माया।। जय गणेश ...।।
लड्डुन का भोग लगे, सन्त करें सेवा। हार चढ़ें, फूल चढ़ें और चढ़े मेवा।। जय गणेश ...।।
दीनन की लाज रखो शम्भू–सुत वारी। कामना को पूर्ण करो हम बलिहारी।। जय गणेश ...।।

आरती श्रीरामचन्द्रजी की

जगमग जगमग जोत जली है। राम आरती होन लगी है।।
भक्ति का दीपक प्रेम की बाती। आरति संत करें दिन राती।।
आनन्द की सरिता उभरी है। जगमग जगमग जोत जली है।।
कनक सिंहासन सीय समेता। बैठहिं राम होइ चित चेता।।
वाम भाग में जनक लली है। जगमग जगमग जोत जली है।।
आरति हनुमत के मन भावे। राम कथा नित शंकर गावे।।
सन्तों की ये भीड़ लगी है। जगमग जगमग जोत जली है।।

आरती श्रीरामायणजी की

आरति श्रीरामायनजी की। कीरति कलित ललित सिय पी की।। आरति श्री ...
गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद। बालमीक बिग्यान बिशारद।।
सुक सनकादि सेष अरु सारद। बरनि पवनसुत कीरति नीकी।। आरति श्री ...
गावत बेद पुरान अष्टदस। छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस।।
मुनि जन धन संतन को सरबस। सार अंस संमत सबही की। आरति श्री ...
गावत संतत संभु भवानी। अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी।।
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी। कागभुसुंडि गरुड़ के ही की।। आरति श्री ...
कलिमल हरनि बिषय रस फीकी। सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की।।
दलन रोग भव मूरि अमी की। तात मात सब बिधि तुलसी की।। आरति श्री ...

आरती भगवान जगदीश्वर की

ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे,
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे।। ॐ जय ...।।
जो ध्यावै फल पावै, दुख विनसै मन का।। स्वामी ...।।
सुख–सम्पति घर आवै, कष्ट मिटै तन का।। ॐ जय ...।।
मात–पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी।। स्वामी ...।।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी।। ॐ जय ...।।
तुम पूरन परमात्मा, तुम अन्तर्यामी।। स्वामी ...।।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी।। ॐ जय ...।।
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्ता।। स्वामी ...।।
मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता।। ॐ जय ...।।
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।। स्वामी ...।।
किस विधि मिलूँ दयामय, तुमको मैं कुमती।। ॐ जय ...।।
दीनबन्धु दुख हरता, तुम ठाकुर मेरे।। स्वामी ...।।
अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे।। ॐ जय ...।।
विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।। स्वामी ...।।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा।। ॐ जय ...।।
तन, मन, धन, सब कुछ है तेरा।। स्वामी ...।।
तेरा तुझको अर्पण, क्या लागे मेरा।। ॐ जय ...।।
श्यामसुन्दरजी की आरति जो कोई नर गावै।। स्वामी ...।।
कहत शिवानन्द स्वामी सुख सम्पति पावै।।ॐ जय ...।।

आरती सरस्वतीजी की

शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।
जय सरस्वती ज्ञानदायिनी,
कमल हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
ऋद्धि सिद्धि विवेकदायिनी,
कुमति शूल विनाशनी।
देवी मंद सुहास वर्षनी,
हृदय हंस विराजिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
मधुर काव्य कला,
प्रणव नाद विकासिनी।
भगवती संगीत वर दे,
भुवन मानस वासिनी।
शारदे जय हंसवाहिनी,
जयति वीणावादिनी।

आरती शिवजी की

कर्पूर गौरं करुणावतारं, संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे, भवं भवानीसहितं नमामि॥

जय शिव ओंकारा प्रभु भज शिव ओंकारा, ब्रह्मा विष्णु सदाशिव अर्द्धंगी धारा। ॐ हर हर महादेव।।
एकानन चतुरानन पंचानन राजै, हंसासन गरुड़ासन वृषवाहन साजै। ॐ हर हर महादेव।।
दो भुज चारु चतुर्भुज दस भुज ते सोहै, तीनों रूप निरखते त्रिभुवन जन मोहै। ॐ हर हर महादेव।।
अक्षमाला वनमाला मुण्डमाला धारी, चंदन मृगमद सोहै भोले शुभकारी। ॐ हर हर महादेव।।
श्वेताम्बर, पीताम्बर, बाघम्बर अंगे, सनकादिक ब्रह्मादिक भूतादिक संगे। ॐ हर हर महादेव।।
कर मध्ये सुकमण्डलु चक्र शूलधारी, सुखकारी दुखहारी जग पालन कारी। ॐ हर हर महादेव।।
ब्रह्मा विष्णु सदाशिव जानत अविवेका, प्रणवाक्षर में शोभित ये तीनों एका। ॐ हर हर महादेव।।
त्रिगुणस्वामी की आरती जो कोई नर गावै, कहत शिवानन्द स्वामी वांछित फल पावै। ॐ हर हर महादेव।।

आरती श्रीहनुमानजी की

आरती कीजै हनुमान लला की। दुष्ट दलन रघुनाथ कला की।।
जाके बल से गिरिवर काँपै। रोग–दोष जाके निकट न झाँकै।।
अंजनि पुत्र महा बलदाई। सन्तन के प्रभु सदा सहाई।।
दे बीरा रघुनाथ पठाये। लंका जारि सिया सुधि लाये।।
लंका सो कोट समुद्र सी खाई। जात पवनसुत बार न लाई।।
लंका जारि असुर संहारे। सियाराम के काज संवारे।।
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे। आनि संजीवन प्रान उबारे।।
पैठि पताल तोरि जमकारे। अहिरावन की भुजा उखारे।।
बायें भुजा असुरदल मारे। दहिने भुजा संतजन तारे।।
सुर नर मुनि आरती उतारें। जै जै जै हनुमान उचारें।।
कंचन थार कपूर लौ छाई। आरती करत अंजना माई।।
जो हनुमानजी की आरती गावै। बसि बैकुण्ठ परम पद पावै।।
तुलसीदास सदा हरि चेरा। कीजै नाथ हृदय महँ डेरा।। आरती ०००

आरती सत्यनारायणजी की

ॐ जय लक्ष्मीरमणा, स्वामी जय लक्ष्मीरमणा।
सत्यनारायण स्वामी, जन–पातक–हरणा।। ॐ जय ...
रत्न जटित सिंहासन, अद्भुत छवि राजै।
नारद करत निराजन, घण्टा ध्वनि बाजै।। ॐ जय ...
प्रकट भये कलि कारण, द्विज को दरस दियो।
बूढ़ो ब्राह्मण बनके, कंचन महल कियो।। ॐ जय. ...
दुर्बल भील कठारो, जिन पर कृपा करी।
चन्द्रचूड़ एक राजा, तिनकी बिपति हरी।। ॐ जय ...
वैश्य मनोरथ पायो, श्रद्धा तज दीन्हीं।
सो फल भोग्यो प्रभुजी, फिर अस्तुति कीन्हीं।। ॐ जय ...
भाव–भक्ति के कारण, छिन–छिन रूप धर्‌यो।
श्रद्धा धारण कीनीं, तिनको काज सर्‌यो।। ॐ जय ...
ग्वाल–बाल सँग राजा, बन में भक्ति करी।
मनवांछित फल दीन्हों, दीनदयालु हरी।। ॐ जय ...
चढ़त प्रसाद सवायो, कदली फल मेवा।
धूप दीप तुलसी से, राजी सत्यदेवा।। ॐ जय ...
सत्यनारायणजी की आरती, जो कोई नर गावे।
कहत शिवानंद स्वामी वांछित फल पावै।। ॐ जय ...

आरती अम्बेजी की

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी। तुमको निशिदिन ध्यावत, हरि ब्रह्मा शिवजी।। ॐ जय अम्बे ...
मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को। उज्ज्वल से दोउ नयना, चन्द्र वदन नीको।। ॐ जय अम्बे ...
कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजै। रक्त पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै।। ॐ जय अम्बे ...
केहरि वाहन राजत, खड्ग खपर धारी। सुर नर मुनि जन सेवत, तिनके दुख हारी।। ॐ जय अम्बे ...
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती। कोटिक चन्द्र दिवाकर, सम राजत ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
शुम्भ–निशुम्भ विदारे, महिषासुर घाती। धूम्र विलोचन नयना, निशिदिन मदमाती।। ॐ जय अम्बे ...
चण्ड–मुण्ड संहारे, शोणितबीज हरे। मधु–कैटभ दोउ मारे, सुर भयहीन करे।। ॐ जय अम्बे ...
ब्रह्माणी रुद्राणी, तुम कमला रानी। आगम–निगम बखानी, तुम शिव पटरानी।। ॐ जय अम्बे ...
चौसठ योगिनि गावत, नृत्य करत भैरू। बाजत ताल मृदंगा, अरु बाजत डमरू।। ॐ जय अम्बे ...
तुम ही जग की माता, तुम ही हो भरता। भक्तन की दुख हरता, सुख सम्पति करता।। ॐ जय अम्बे ...
भुजा चार अति शोभित, वर–मुद्रा धारी। मनवांछित फल पावत, सेवत नर–नारी।। ॐ जय अम्बे ...
कंचन थाल विराजत, अगर कपूर बाती। मालकेतु में राजत, कोटि रतन ज्योती।। ॐ जय अम्बे ...
अम्बे जी की आरति, जो कोई नर गावै। कहत शिवानन्द स्वामी, सुख–सम्पति पावै।। ॐ जय अम्बे ...

श्री रामचन्द्रजी की स्तुति

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरण भवभय दारुणम्।
नव कंज लोचन, कंज मुख कर कंज पद कंजारुणम्।।
कंदर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरज सुन्दरम्।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि, नौमि जनक सुतावरम्।।
भजु दीनबंधु दिनेश दानव दैत्य वंश निकंदनम्।
रघुनन्द आनन्दकन्द कौशलचन्द दशरथ–नन्दनम्।।
सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदार अंग विभूषणम्।
आजानु भुज शर चाप धर संग्राम जित खरदूषणम्।।
इति वदति तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनम्।
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खलदल गंजनम्।।
मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो।।
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि–पुनि मुदित मन मन्दिर चली।।

आरती कुंजबिहारीजी की

आरती कुंज बिहारी की, गिरधर कृष्ण मुरारी की।
गले में बैजन्ती माला, बजावै मुरली मधुर बाला।
श्रवन में कुण्डल झलकाला।
नन्द के आनन्द, मोहन बृजचन्द, परमानन्द, राधिका रमण बिहारी की।। आरती कुंज ...
गगन सम अंग कांति काली, राधिका चमक रही आली।
लतन में ठाढ़े बनमाली, भ्रमर सी अलक, कस्तूरी तिलक,
चन्द्र सी झलक, ललित छवि श्यामा प्यारी की।। आरती कुंज ...
कनकमय मोर मुकुट विलसै, देवता दर्शन को तरसै।
गगन से सुमन बहुत बरसें, बजे मुरचंग, मधुर मिरदंग,
ग्वालिनी संग, अतुल छवि गोप कुमारी की।। आरती कुंज ...
जहाँ ते प्रकट भई गंगा, कलुष कलि हारिणि श्रीगंगा,
स्मरण से होत मोह भंगा, बसी शिव शीश, जटा के बीच,
हरै अघ कीच, चरण छवि श्री बनवारी की।। आरती कुंज ...
चमकती उज्ज्वल तट रेणू, बाजती वृन्दावन वेणू।
चहुँ दिशि गोप ग्वाल धेनू, हंसत मृदुमन्द, चांदनी चन्द।
कटत भव फन्द, टेर सुन दीन दुखारी की।। आरती कुंज ...

आरती लक्ष्मीजी की

जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता।
तुमको निशिदिन सेवत हर विष्णू धाता।। जय लक्ष्मी . . .
उमा रमा ब्रह्माणी तुम ही जग–माता,
सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता। जय लक्ष्मी ...
दुर्गा रूप निरंजन सुख संपति दाता,
जो कोइ तुमको ध्यावत ऋधि सिधि धन पाता। जय लक्ष्मी ...
तुम पाताल निवासिनि तुम ही शुभदाता,
कर्म प्रभाव प्रकाशिनि भवनिधि की त्राता। जय लक्ष्मी ...
जिस घर तुम रहतीं तहँ सब सद्गुण आता,
सब संभव हो जाता, मन नहीं घबराता। जय लक्ष्मी ...
तुम बिन यज्ञ न होते वस्त्र न हो पाता,
खान–पान का वैभव सब तुम से आता। जय लक्ष्मी ...
शुभ गुण मन्दिर सुन्दर क्षीरोदधि जाता,
रत्न चतुर्दश तुम बिन कोई नहिं पाता। जय लक्ष्मी ...
श्रीलक्ष्मीजी की आरती जो कोई नर गाता,
उर आनन्द समाता पाप उतर जाता। जय लक्ष्मी ...

आरती श्रीरामजी की

हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ
आरती उतारूँ मैं तो तन मन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

कनक सिंहासन राजत जोरी–दसरथ नन्दन जनक किशोरी।
युगल छवी को सदा निहारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

वाम भाग शोभित जग जननी–चरण विराजत हैं सुत अंजनी।
इन चरणों में जीवन वारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

चरणों से निकली गंगा प्यारी– पावन करती है दुनियाँ सारी।।
इन चरणों को सदा पखारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

आरति हनुमत के मन भावै–रामकथा नित शिवजी गावै।
मैं सुन सुन निज जनम संवारूँ।
हे राजा राम तेरी आरती उतारूँ।।

आरती अवध बिहारी की

आरती अवध बिहारी की, लखन सिया जनक दुलारी की।

शीश पर क्रीट मुकुट सोहे। चंद्रिका की छवि मन मोहे।।
लखन सेवा बलिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

कपोलन पै अलकैं झलकें। अधर पै बिजली सी चमके।।
छवि कजरारे नयनन की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

अंग सब ज्यों निर्मल नीरा। भरत रिपुदलन महावीरा।।
चरण सेवा धनुधारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

जिए जुग श्यामलता जोरी। भजो मन सब माया तोरी।।
दरस हित युगल बिहारी की। लखन सिया जनक दुलारी की।।

वंदना

जिस घर में हो आरती, चरण कमल चितलाय। वहाँ प्रभु वासा करें, स्वर्ग लोक से आय।।
कथा सदा होती रहे, सुनो वीर हनुमान। राम लखन सीता सहित, सदा करो कल्यान।।
बार बार वर माँगहुं, राम कृपा कर देहु। जन्म जन्म प्रभु पद कमल, कबहुँ घटे जनि नेहु।।
देवता सब आश्रम गये, शम्भु गये कैलाश। श्रोता–वक्ता जायेंगे, हरि सुमिरन की आस।।
मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर। अस विचार रघुवंश मनि, हरहु विषम भव भीर।।
हम तो कुछ जाने नहीं, तुम जानों रघुनाथ। सेवा पूजा वन्दना, सबहि तुम्हारे हाथ।।
पुष्पांजलि अर्पण करूँ, ग्रहण करो महाराज। कृपा दृष्टि अवलोकिए, शरण पड़े की लाज।।

ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ती प्रचोदयात्।
ॐ कात्यायन्यै च विद्महे कन्या कुमारी च धीमहि तन्नो दुर्गे प्रचोदयात्।
ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णु प्रचोदयात्।
ॐ आदित्याय विद्महे भास्कराय धीमहि तन्नो सूर्यः प्रचोदयात्।
ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
ॐ वासुदेवाय विद्महे राधाबल्लभाय धीमहि तन्नो कृष्णः प्रचोदयात्।
ॐ दशरथाय विद्महे सीताबल्लभाय धीमहि तन्नो रामः प्रचोदयात्।
ॐ रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि तन्नो हनुमत प्रचोदयात्।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं, पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते।
आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं। पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं, भक्तिहीनं सुरेश्वरः। यत्पूजितं मया देव! परिपूर्णं तदस्तु मे।

श्रीरामचरितमानस पाठ आयोजन हेतु आवश्यक सामग्री

सूची 1 केवल पाठ हेतु

01. नारियल- (पानी वाला) 1
02. लाल कपड़ा 1 मीटर
03. सुपारी-5
04. धूपबत्ती
05. कलावा
06. रोली
07. कपूर (डली का)
08. इलायची 10 ग्राम
09. लौंग 10 ग्राम
10. देशी घी 250 ग्राम
11. मिश्री 100 ग्राम
12. सौंफ 50 ग्राम
13. काली मिर्च 10 ग्राम
14. गंगाजल
15. फल 5 तरह के
16. मिष्टान्न
17. दूर्वा
18. तुलसी के पत्ते
19. रूई
20. पान साबुत 5
21. फूल हार 7
22. आम के पत्ते
23. कलश 1
24. थाली 4
25. लोटा 2
26. चम्मच 2

सूची 2 यदि पाठ के साथ यज्ञ भी हो

01. घी 500 ग्राम
02. हवन सामग्री 1 कि.ग्रा.
03. काले तिल 50 ग्राम
04. इन्द्र जौ 25 ग्राम
05. जौ 50 ग्राम
06. बेलगिरी 250 ग्राम
07. अगर 25 ग्राम
08. तगर 25 ग्राम
09. नागर मौथा 25 ग्राम
10. गोला साबुत 1
11. हवन के लिए लकड़ी ढाई कि.ग्रा. (आम/आक/ढाक की)
12. कच्ची खांड 250 ग्राम

अनिष्ट ग्रहों की शान्ति, घर परिवार में अमन चैन तथा जीवन का परम लक्ष्य भगवत्कृपा प्राप्ति हेतु रामायण/सुंदरकाण्ड पाठ के आयोजन हेतु हमें संपर्क कर सकते हैं -

सम्पर्क सूत्र- 0120-4305457 एवं 9811056467